आपका व्यक्तित्व : विकास के सूत्र

लाला हरदयाल



राजपाल एण्ड सन्ज़

क्रम

बौद्धिक विकास की आवश्यकता

यह आपका कर्त्तव्य है, कि आप अपने मस्तिष्क को प्रशिक्षित करें, उसका विकास करें, ज्ञान का अधिक से अधिक संचय करें। ज्ञान एक गहरे कूप के समान है, जिसका स्रोत अजस्र है। आपका मस्तिष्क एक बाल्टी या गागर के समान है। जितना बड़ा आपका पात्र होगा, उतना ही जल आप कूप से खींच सकेंगे। मन का शारीरिक अंग मस्तिष्क है। अपने मूल रूप से विकसित होते-होते, मानव-रूप ग्रहण करने पर मानव ने जो दो विशिष्ट वस्तुएं प्राप्त की हैं, मन उन्हीं में से एक है, और दूसरी वस्तु है—सामाजिक भावना। यह विचित्रतापूर्ण मस्तिष्क, जिसकी प्रत्येक सलवट लाखों वर्षों के क्रमिक विकास की सूचक है, यह वस्तुतः आपको अन्य पशुओं से पृथक् करती है। बहुत-से पशुओं में बहुत शक्तिशाली इन्द्रियां पाई जाती हैं, चील, चींटी और कुत्ते में मनुष्य की अपेक्षा अधिक चेतना पाई जाती है। किन्तु किसी भी पशु का मानव से अधिक मस्तिष्क नहीं है और न ही उससे ऊंची बुद्धि किसी प्राणी के पास है। यदि आप अपने मस्तिष्क का प्रयोग उसकी अधिकतम सामर्थ्य के अनुसार नहीं करते, तो आप पशुओं के समान ही हैं।

ज्ञान तथा मानसिक आत्म-संस्कार से आप पर अवर्णनीय वरदानों की वर्षा होगी। इससे आप धर्म और राजनीति के बारे में अन्धविश्वासों और रूढ़ियों के दास नहीं रहेंगे। तब आप अपने कर्त्तव्य को पहचानेंगे और उसे पूर्ण करेंगे। तब आप धर्म तथा राजनीति के विषय में समझदार और स्वतन्त्र हो जाएंगे। तब आपको स्वार्थी पंडे-पुजारी और पूंजीवादी एवं तथाकथित साम्यवादी, राजनीतिज्ञ, षड्यन्त्रकारी न तो धोखा दे सकेंगे और न ठग सकेंगे। क्या यह एक उदात्त उद्देश्य नहीं कि जिसके लिए प्रयत्न किया जाए? आज अधिकांश मनुष्य न तो स्वतन्त्र हैं और न बुद्धिमान्। वे पतंगों के समान हैं, जिनकी डोर या तो पंडे-पुजारियों के या

नीतिज्ञों के हाथों में होती है। विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र तथा अन्य विषयों से अनभिज्ञ होने के कारण वे ठगे तथा मूर्ख बनाए जाते हैं। मानव जाति के कष्टों का आधा भाग अज्ञान के कारण ही है और इनका दूसरा आधा भाग अहंकार के कारण है। ज्ञान पूरी तरह उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितनी कि नैतिकता यानी आचार-संबंधी विज्ञान। ये दोनों वस्तुतः अन्योन्याश्रित हैं। जैसा कि लेसिंग का कथन है, "ज्ञान का उद्देश्य है सत्य, और सत्य आत्मा की आवश्यकता है।" फारसी के कवि सादी ने जोर देकर कहा है कि सभी को ज्ञान-प्राप्ति के लिए अथक प्रयत्न करना चाहिए—ज्ञान की साधना में तू फ़ौलाद की भांति पिघल जा, तभी तू उसके सांचे में ढल सकेगा। ज्ञान पाने के लिए चाहे तुझे सारे संसार में भ्रमण करना पड़े, तो भी तू मत घबरा। यह तेरा कर्त्तव्य है।

ज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने अनन्त संघर्ष में आपको अवश्यमेव नियमित रूप से तथा विधिपूर्वक प्रयत्न करना पड़ेगा। प्रतिदिन अपने समय का एक निश्चित भाग आपको अध्ययन अथवा परीक्षण-प्रयोग में लगाना पड़ेगा। आप अपने शरीर को दिन में कई बार खुराक देते हैं; किन्तु अपने मस्तिष्क को भूखा मत रखिए। अपने पास एक दैनन्दिनी रखिए, जिसमें आप नई पुस्तकों के नाम अंकित करते रहिए। पुस्तक-विक्रेताओं से नई-पुरानी पुस्तकों के सूचीपत्र प्राप्त कीजिए। दूकानों पर सस्ती पुरानी पुस्तकों के लिए चक्कर लगाइए। अपनी एक स्वतन्त्र लाइब्रेरी बनाइए, चाहे वह कितनी ही छोटी हो। उन पुस्तकों पर गर्व कीजिए, जो आपके घर की शोभा बढाती हैं। प्रत्येक पुस्तक को खरीदने के बाद, आप अपने मानसिक आकार में एक मिलीमीटर की वृद्धि करते हैं। सार्वजनिक पुस्तकालयों से और अपने मित्रों से पुस्तकें मांगकर लाइए और पढिए और उन्हें समय पर लौटाना न भूलिए। जो भी पुस्तक आप पढ़ें, उसका सार और संक्षेप अपनी संचिका पर लिखते जाइए, अन्यथा आपका अध्ययन उस वर्षा के समान व्यर्थ होगा, जो ढालू छत पर होती है। समय-समय पर अपने लिखे सार-संक्षेप का पुनरावलोकन करके उसे अपनी स्मृति में नवीन बनाते रहिए। मेकाले के समान, अपने ज्ञान को 'तुरन्त उपस्थित' रखिए। आप जो कुछ जानते हैं, यथातथ्येन जानिए, जिस प्रकार आपको सही पता होता है कि आपके बैंक के खाते में कितना रुपया जमा है, अथवा एक गृहिणी जानती है कि उसके भंडार-घर में क्या कुछ है। कुछ वर्ष पहले ही अपने अध्ययन की योजना बना लीजिए। अपनी आय का एक निश्चित भाग पुस्तकें तथा पत्रिकाएं खरीदने के लिए अलग रखते जाइए, इसे आप 'पुस्तक निधि' कहिए, और इस पैसे को किसी

भी अन्य खर्च के लिए मत निकलवाइए। इस प्रकार आपको पुस्तकों पर व्यय करना आसान प्रतीत होगा। विज्ञान तथा साहित्य संबंधी संस्थाओं के सदस्य बन जाइए, उनको थोड़े-से चन्दे देने से मत घबराइए। एक छोटा-सा मण्डल बना लेना अच्छा है, जिसमें एक सदस्य नई पुस्तक को पढ़कर सुनाए और बाकी सब उसे सुनें, फिर वह उस पर एक निबन्ध लिखकर सुनाए, जिसमे उस पुस्तक के खूब उद्धरण दिए गए हों। इस प्रकार का सहकारी अध्ययन आपके लिए आवश्यक है; क्योंकि अभाग्य से, आपके पास समय की बहुत कमी है। जीवन छोटा-सा है, ज्ञान-पिपासु के लिए जीवन और भी छोटा है। यदि आपका जीवन अनन्त होता तो आप भले ही सौ वर्ष नक्षत्रविद्या के अध्ययन में, सौ वर्ष जीव-विज्ञान में, सौ वर्ष इतिहास के अध्ययन में, और सौ-सौ वर्ष अन्यान्य विद्याओं के अध्ययन में लगा देते और तब तक अध्ययन करते चले जाते, जब तक कि अपने को भलीभांति शिक्षित न मान लेते। किन्तु हमारा जीवन महीनों और वर्षों द्वारा मापा जाता है, शताब्दियों और सहस्राब्दियों से नहीं। बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त करने से पूर्व ही हम वृद्ध हो जाते हैं। इसीलिए अध्ययन करने में शीघ्रता कीजिए। प्रसिद्ध इतिहासकार जे० आर० ग्रीन ने लिखा है—"मैं जानता हूं लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे, वे कहेंगे—'वह पढ़ता-पढ़ता मर गया'।" लोग आपके लिए भी यही कहें, तो अच्छा है। संभव है, इस लघु जीवन से विदा होकर पुन: आपको जन्म मिले और पुन: आपको अध्ययन का अवसर मिले।

मानसिक आत्म-संस्कार के मार्ग में दो विघ्न हैं—सबसे पहले आपको उनपर विजय प्राप्त करनी है—

बहुत-से स्त्री-पुरुष इतने धन-चिन्तक हैं कि वे कोई भी ऐसा कार्य गंभीरता से हाथ में नहीं लेते, जिससे उन्हें धन का लाभ न हो। वे विश्वास रखते हैं— इस प्रकार का अध्ययन तथा मानसिक प्रयत्न मूर्खता है, जिसका परिणाम 'धन का लाभ' न हो। केवल धन के लाभ के लिए कठोर परिश्रम करो, उसके बाद खूब खेलो और आनन्द मनाओ। यह उन लोगों का जीवन-नियम होता है। वे बुद्धि का मूल्य यही मानते हैं कि वह भौतिक सम्पन्नता की कुंजी हो। वे लोग व्यक्तिगत मानसिक विकास को मूर्खतापूर्ण सनक मानते हैं। यह शोचनीय पदार्थवादी (Materialistic) मनोवृत्ति समाज के सभी वर्गों में गहरी जड़ जमाए हुए है। धनी और निर्धन, सभी को यह रोग लगा हुआ है। एक वृद्धा जो स्वयं उपार्जन के लिए काम करती थी, मुझसे अपने बेटे की शिकायत करते हुए कहने लगी,

"वह अपना पैसा पुस्तकों पर बर्बाद करता रहता है। भला, उनका उसे क्या लाभ है ? वह तो एक बढ़ई है, कोई अध्यापक तो नहीं है।" ऐसे अगणित लोगों से मिलने का हमें मौका मिलता है, जिनका जीवन, उनके धन्धे और मनोरंजन की आंखमिचौनी में बीत जाता है। वे भले ही अपने व्यवसाय या धंधे में सफल हुए हों—चाहे वह कानून हो या डाक्टरी, कला हो या कौशल—जब वे अपने रोजगार से फुर्सत पाते हैं तो वे केवल मनोरंजन या खेल-तमाशे की ओर ही आकृष्ट होते हैं।

इस प्रकार के एकांगी जीवनवाले को मेरा यह कहना है—ध्यान रखिए, कहीं आप छाया को पकड़कर तत्त्व को न छोड़ दें। ज्ञान ही जीवन का सार-तत्त्व है। आप भले ही अपने मस्तिष्क को धन के सांचे में ढाल दें; किन्तु यह समझ लीजिए कि आप प्रकृति के इस वरदान का दुरुपयोग कर रहे हैं। बुद्धि का प्रयोग मुख्यतः जीवन के विकास और समाज की सेवा के लिए किया जाना चाहिए। इसका प्रयोग अपने सह-नागरिकों के शोषण के लिए एक अस्त्र के रूप में नहीं किया जाना चाहिए। जो व्यक्ति अपने मस्तिष्क को एक धन कमाने की मशीन मानते हैं, उनमें और एक वेश्या में अन्तर ही क्या है ? हमारे पूंजीवादी समाज में इस प्रकार की वेश्यावृत्ति बहुत अधिक पाई जाती है, और दुःख तो यह है कि इसे आप स्वाभाविक मानकर इसके आगे सिर झुका देते हैं। आप इस स्थिति के विरुद्ध न तो विद्रोह करते हैं और न इसपर आपको आश्चर्य ही होता है। प्रकृति ने आपको मस्तिष्क इसलिए दिया है कि आप जानें, सोचें, समझें, समझाएं, खोज करें, अनुसन्धान करें, आविष्कार करें, और उस सघन आनन्द का अनुभव करें, जो उन व्यक्तियों को प्राप्त होता है, जो प्रकृति के महान नियम का पालन करते हैं। जिज्ञासुओं को ज्ञान की उपलब्धि से जो आनन्द प्राप्त होता है, उसे शब्दों द्वारा वर्णन करना असंभव है। यदि आप अपने मस्तिष्क के सर्वतोमुखी विकास करने से मुंह मोड़ेंगे, तो आप अपने को अनन्त आनन्द से वंचित कर देंगे। यह आनन्द उन सभी सुखों से श्रेष्ठ है, जिन्हें धन द्वारा खरीदा जा सके। इसलिए बुद्धि की दृष्टि से बौने रहकर जीने पर सन्तोष मत कीजिए। गधे की तरह भारवाही जीवन को धिक्कार है। अपने मस्तिष्क का अधिकतम विकास करके ही आप जीवन के श्रेष्ठतम आनन्द को प्राप्त कर सकते हैं।

ज्ञान की प्राप्ति में दूसरा विघ्न है—अन्धविश्वास व रूढ़िवाद। इन्हीं के कारण लाखों-करोड़ों लोग बौद्धिक संस्कृति से वंचित रह जाते हैं। इन्हीं के कारण लोग अपने अज्ञान और मूढ़ता पर गर्व करते पाए जाते हैं। यह बात आपको विचित्र प्रतीत होगी; किन्तु है यह यथार्थ।

कुछ-एक धार्मिक उपदेष्टाओं का कथन है कि मनुष्य-जीवन शरीर तथा आत्मा से बना है। किन्तु वे उपदेष्टा बुद्धि के विषय में मौन ही रहे। उनके अनुयायी संसार में शरीर को पुष्ट करने का प्रयत्न करते हैं और आत्मा को 'मृत्यु के उपरान्त जीवन' के लिए सुरक्षित रखते हैं; किन्तु 'मन' की सर्वथा उपेक्षा कर देते हैं। इहलोक और परलोक में मानव-कल्याण के हेतु—शरीर के लिए भोजन और आत्मा के लिए सद्गुण—ये अनिवार्यतः आवश्यक माने जाते हैं। किन्तु ज्ञान तथा शिक्षा के बारे में कुछ कहना अनावश्यक समझा जाता है। इसी तरह ईसामसीह ने भूखे को भोजन देने, रोगी की चिकित्सा करने, पापी को पुण्यात्मा बनाने का तो उपदेश दिया; किन्तु उन्होंने कभी भी यह उपदेश न दिया कि अज्ञानी को ज्ञान प्रदान करो, या वैज्ञानिक ज्ञान की वृद्धि करो। वे स्वयं भी सुशिक्षित व्यक्ति नहीं थे और बुद्धि-संबंधी प्रयत्न उनकी सीमा से बाहर थे। गौतम बुद्ध ने भी सदाचार पर बल दिया, ध्यान करने और भिक्षु बनने का उपदेश दिया; किन्तु उन्होंने इतिहास, विज्ञान, कला तथा साहित्य के अध्ययन पर कभी जोर नहीं दिया। सन्त एम्ब्रोस ने विज्ञान के अध्ययन की निन्दा की और लिखा, "प्रकृति और पृथ्वी की स्थिति आदि पर विचार, चर्चा या वाद-विवाद हमारे पारलौकिक जीवन में कुछ भी सहायता प्रदान नहीं करता।" सन्त बासिल ने बहुत स्पष्ट रूप में और मूर्खतापूर्वक कहा—"हमारे लिए यह पृथ्वी गोल है, लंबी है या सपाट है।" कार्लायल ने भी ईसाई परम्परा का ही अनुसरण किया है, जबकि उसने कहा, "मैं केवल दो मनुष्यों का सम्मान करता हू (तीसरे का नहीं), एक तो शारीरिक परिश्रम करने वाले का और दूसरे धार्मिक उपदेशक का।" कार्लायल ने वैज्ञानिक को, विद्वान को और कलाकार को सम्मान की सूची में शामिल करने से भुला दिया। यूनान के सनकी भी शिक्षा, बौद्धिक साधना की निन्दा करते रहे हैं। उन्होंने घोषणा की कि केवल सद्गुण (सदाचार) ही जीवन की श्रेष्ठता है। इस प्रकार के अपूर्ण आदर्श ने ही असंख्य ईमानदार स्त्री-पुरुषों को बुद्धि की साधना से—ज्ञान के उपार्जन से वंचित रखा है, क्योंकि वे इन्हें अनावश्यक और व्यर्थ समझते रहे हैं। आप अपने मस्तिष्क को, जीवन के विषय में इस प्रकार के अपूर्ण सूत्रों का दास मत बनने दीजिए। ये सिद्धान्त थोथे हैं—सारहीन हैं, इनसे सर्वोत्तम प्रकार के स्त्री-पुरुष भी 'सदाचारी और पवित्र पशु' बना दिए जाते हैं। अज्ञान जंगलीपन है, वहशीपन है, मानव-जीवन की स्वाभाविक विशेषता 'ज्ञान' है।

अविवेक, कामुकता और अन्धविश्वास से छुटकारा पाकर आप अपने

को परिश्रमपूर्वक और ईमानदारी से मानसिक आत्म-संस्कार में—मस्तिष्क द्वारा ज्ञानार्जन में लगाइए। इसका क्षेत्र बहुत विशाल और विस्तृत है। पहले-पहल आपकी दशा एक बालक के समान होगी, जो अकस्मात् अपने को उष्णकटिबन्ध के किसी महा-उद्यान में पाता है, जहां अनेक प्रकार के सुस्वादु फलों को देखकर उसकी दृष्टि चकाचौंध रह जाती है, उसके मुंह में उन फलों को देखकर पानी भर आता है—कहीं आम हैं, कहीं लीची, कहीं अमरूद हैं, कहीं पपीते, कहीं लुकाठ हैं, कहीं अंगूर। ज्ञान के फल तो इनसे भी अधिक सरस और सुस्वादु हैं।

अब हमें उन विभिन्न विषयों पर विचार करना है, जो आपको अवश्य पढ़ने चाहिए, जहां तक कि आपके साधन, आपकी सामर्थ्य और आपके अवसर आपको इजाजत दें।

2

विज्ञान का अध्ययन

प्रकृति-विज्ञान का अध्ययन, शिक्षा का एक अनिवार्य अंग है। आपका विज्ञान का अध्ययन हरबर्ट स्पेंसर या डारविन के समान एकांगी नहीं होना चाहिए। हरबर्ट स्पेंसर का विचार था कि प्राकृतिक विज्ञान ही अध्ययन के लिए एकमात्र बहुमूल्य यानी महत्त्वपूर्ण विषय है और डारविन ने अपनी अति विज्ञान-भक्ति के कारण, कला से प्राप्त होने वाले आनन्द को प्रायः खो दिया था। आप विज्ञान को उसका उचित स्थान दें, भले ही आप आवश्यक से कुछ अधिक स्थान उसे दें; क्योंकि वर्तमान में—साहित्य, इतिहास, राजनीति और अर्थशास्त्र की तुलना में विज्ञान की प्रायः उपेक्षा कर दी जाती है।

हो सकता है, आप यह सोचें कि विज्ञान एक शुष्क, कठिन और अनाकर्षक विषय है, यह पारिभाषिक शब्दावली तथा कठिनतर सूत्रों से पूर्ण है। लेकिन आपके लिए यह आवश्यक नहीं कि प्राकृतिक विज्ञान की सभी शाखाओं के आप आचार्य बन जाएं—यह काम तो प्राकृतिक विज्ञान की प्रत्येक शाखा के विशेषज्ञों का है। वास्तव में, जिस दिन से आपका जन्म हुआ है, उसी दिन से सामान्यतः आपका विज्ञान से सम्बन्ध हो गया है। इस प्रशंसा पर संभव है आपको आश्चर्य होगा; किन्तु आपको यह जान लेना चाहिए कि विज्ञान का अर्थ है—*प्रकृति के असाधारण* तथ्यों का निरीक्षण, सीमित स्थितियों में परीक्षण, वर्गीकरण और प्रमाणीकरण, परिणामन, अनुमान, नियमों की रचना और तर्क के लिए अनुमान, अनुसन्धान और आविष्कार, जीवन के व्यावहारिक कार्यों में ज्ञान का उपयोग—इत्यादि है। जब आप एक बालक थे—आप पक्षियों तथा कीट-पतंगों की आदतों का निरीक्षण किया करते थे और उनके बारे में अपने कुछ निर्णयों पर पहुंचे थे, उस समय आप एक नौसिखिया वैज्ञानिक की भांति आचरण कर रहे थे। विज्ञान आपको यह

बताता है कि आप अपनी आंखो और कानों को खुला रखें। आप जिन तथ्यों को प्रत्यक्ष ग्रहण करेंगे—आपका सचेतन मन और प्रशिक्षित मस्तिष्क उन तथ्यो के प्रभावो और महत्त्वो को विस्तार से समझेगा। प्रकृति के समस्त आश्चर्यों का अध्ययन विज्ञान में आ जाता है। प्रकृति मे मानव भी सम्मिलित है न! आपकी अन्तर्जात कौतूहल-वृत्ति आपको प्रोत्साहित करती है कि आप अपने इर्दगिर्द के पदार्थों और होने वाली चेष्टाओं-घटनाओं का निरीक्षण करें। आप सूर्य को और सितारो को, पौधों को और पशुओं को देखते है। आपकी कौतूहल-वृत्ति और अभिरुचि जागृत हो जाती है। इस बाह्य सृष्टि के 'क्या, क्यो और कैसे' को आप जानना चाहते हैं। अतएव आप वैज्ञानिक हुए बिना रह ही नही सकते। जैसा कि टी० एच० हक्सले ने कहा है—"प्रशिक्षित और सुगठित समझ का नाम ही विज्ञान है।" इस प्राकृतिक कौतूहल-वृत्ति को कुंठित न होने दीजिए; किन्तु यदि आप इसे वैज्ञानिक अध्ययन या खोज का अवसर नही देंगे, तो यह अवश्यमेव कुंठित हो जाएगी। जब आप प्रकृति के आश्चर्यों पर चकित या आकर्षित होना बन्द कर देंगे, तब आप बौद्धिक दृष्टि से निष्क्रिय हो जाएँगे, बस आप मुर्दा के समान हो जाएंगे। नियमित प्रकृति-अध्ययन-दैनन्दिनी अपने पास रखना, एक अत्युत्तम योजना है। उस दैनन्दिनी मे आप उन प्राकृतिक आश्चर्यों को लिख सकते है, जिनका आपने निरीक्षण किया हो। एक सुन्दर सूर्यास्त, एक दोहरा इन्द्रधनुष, जंगली फूलों की एक क्यारी, पक्षियो की उड़ान, उल्लू की घू-घू, चींटियो का पर्वत, उड़ती मछलियां, वनस्पति-सुषमा—और प्रकृति के अगणित दृश्यों तथा ध्वनियों को आपकी डायरी मे स्थान मिल जाएगा। इस प्रकार आप अपने बुद्धिपूर्ण निरीक्षण का ऐसा विकास कर सकेंगे जो द्रुत हो। यह डायरी आपकी इस बात में भी सहायता करेगी कि आप अपने अन्तर्मन में—मन की आंखों से अतीत के उन विचित्र दृश्यो को एकान्त मे देखने का आनन्द प्राप्त कर सकेंगे। इसके अतिरिक्त विज्ञान आपको अन्धविश्वासो से बचाएगा। यह सबसे बड़ा वरदान है जो विज्ञान के साधको को इससे प्राप्त होता है। आदिम मानव अन्धविश्वासों के पालने में पला था; क्योकि वह सभी प्राकृतिक आश्चर्यों का अपने से सम्बन्ध मानने के लिए तथा इनका कारण देवी, देवताओं, दैत्यों, अप्सराओं आदि को मानने के लिए विवश था। सभ्यता के शैशव-काल मे, मिथ्या विश्वास मानवजाति का व्यापक धर्म था। किन्तु विज्ञान और केवल विज्ञान ही मानव के मस्तिष्क को स्वतन्त्रता और स्वाधीनता प्रदान कर सकता है, वह मानव-मस्तिष्क को मिथ्या विश्वास की सडांध से, पतितावस्था से उबार सकता है, विज्ञान ही उसे मिथ्या विश्वास के सब

स्वरूपों और छलनामय रूपों से उसका उद्धार कर सकता है। मिथ्या विश्वास का अर्थ है—जिसकी कोई सत्ता नहीं उसका अस्तित्व स्वीकार करना। यह सहस्र रूपों में मानवता को दासता के बन्धन में जकड़े हुए है। मानवजाति के इतिहास में, मिथ्या विश्वास ने क्रूर शोषण और निन्दनीय अत्याचारों के कई अध्याय बनाए हैं। प्रत्येक प्रकार का असत्य भयकर होता है। मिथ्या विश्वास तो विशेषतया मुसीबतें ढानेवाला, चिरस्थायी और विनाशकारक असत्य है, जिसका भंडाफोड़ केवल विज्ञान ही कर सकता है और विज्ञान ही इसे नष्ट भी कर सकता है। महान रोमन कवि-दार्शनिक लुक्रेशियस ने एक गीत मे गाया था—"मिथ्या विश्वास को पैरों के नीचे रखकर कुचल दो···मन का यह भयावह अन्धकार अवश्य ही नष्ट कर देना चाहिए, लेकिन इसे सूर्य की किरणों से नही, दिन की चमकती धूप से नही, बल्कि प्रकृति के सत्यों और नियमों से इसे नष्ट किया जा सकता है।

गणित

मानसिक सस्कार के लिए गणित का अध्ययन अवश्य किया जाना चाहिए और इसका अध्ययन इसलिए भी किया जाना चाहिए कि इसका सम्बन्ध यथातथ्य विज्ञानों से है। सभव है आपका विश्वास हो कि गणित एक शुष्क (नीरस) विषय है; परन्तु कहना पड़ेगा कि आप स्वयं नीरस हैं, गणित कदापि नही। विद्यालय और महाविद्यालय छोड़ने के बाद आपको गणित भुला नही देना चाहिए। आपको इस मोहक मनोरंजन का जीवन-भर उपयोग करना चाहिए। तब आप देकार्त के साथ सहमत होंगे, जिसने लिखा है—"मुझे गणित मे विशेषतया आनन्द की प्राप्ति हुई; क्योंकि सिद्धान्त निश्चित है और उसकी तर्कशुद्धता प्रत्यक्ष है।" गणित आपको यह सिखाएगा और आपमें आदत डालेगा कि आप स्पष्ट विचार करें और ठोस तर्क तथा युक्तियां दें। गणित आपके मस्तिष्क की शिथिलता और सुस्ती को दूर करेगा। गणित आपको दिमागी लापरवाही से बचाएगा और साधारण से विशेष का विवेक करना सिखलाएगा। सामान्यतया गणित आपको बताएगा कि नक्षत्र-विद्या तथा भौतिक विज्ञान के आश्चर्यजनक तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया गया है। यदि आप ग्रहण के विषय मे कुछ नही जानते तो सौरमण्डल के विषय में स्पष्ट ज्ञान नही प्राप्त कर सकते। आपको कुछ ज्ञान सांगणिकी का भी प्राप्त करना चाहिए और व्यवहार मे उसका मनोहर प्रयोग करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति ज्यामिति के ऊंचे शिखर तक नहीं पहुंच सकता, यह केवल

विशेषज्ञों का ही क्षेत्र है; किन्तु आपको इसका आरंभिक से कुछ अधिक ज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिए। आपकी व्यक्तिगत शिक्षा के लिए गणित का ठोस ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य है।

तर्कशास्त्र

तर्कशास्त्र भी एक विज्ञान है, यह विचार करने के नियमों का वर्णन करता है, सोचने की शुद्ध पद्धति बताता है, और विचारणा के आवश्यक स्वरूपों का वर्णन करता है। इसे सोचने की कला या विचार-कला भी कहा जा सकता है; सही कारण-कार्य की युक्ति की यह विद्या है। इस प्रकार यह विषय गणित से सम्बन्ध रखता है। यह ज्ञान आपको अनेक प्रकार की भ्रान्तियों तथा भूलों से बचाएगा। तर्कशास्त्र और गणित,— दोनों विषयों के बारे में कुछ साधारणीकृत स्वरूप हैं, जिनके प्रयोग द्वारा मानव-मस्तिष्क अपने वातावरण का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ होता है। आप तर्कशास्त्र की किसी पाठ्य-पुस्तक को अवश्य पढ़ें। किन्तु इस विषय पर अधिक समय न व्यतीत करें।

भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र

भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र आपको ठीक नाप-तोल की शिक्षा देंगे साथ ही ये दोनों विषय आप पर प्रकृति के ताने-बाने का रहस्य उद्घाटित करेंगे। ये विज्ञान आपको बताएंगे कि शक्ति ही चरम सत्ता या वास्तविकता है। शक्ति ही अपने अणुओं, इलेक्ट्रोन्स तथा प्रोटोन्स द्वारा पदार्थ का रूप धारण करती है। प्रकृति एक विराट यन्त्र है, जो शक्ति को पदार्थ में परिवर्तित करती रहती है और पदार्थ को शक्ति में बदलती रहती है। समस्त विश्व एक रूप तथा समान भाग-निर्मित है, यहां स्वर्ग और पृथ्वी में कोई अन्तर नहीं। भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र ने हमें यन्त्र-समुदाय, वाष्प, विद्युत्, बेतार का तार तथा अन्य अनेक आविष्कार प्रदान किए हैं, जिनसे मानवजाति के इतिहास में नवयुग का सूत्रपात किया है। इनके द्वारा मानवजाति को प्राणलेवा कठोर श्रम से मुक्ति प्राप्त हुई है। अब तक इन दोनों विज्ञानों से हमें उपहार प्राप्त हुए हैं, भविष्य में इनसे भी अधिक प्राप्त होने की हमें आशा है। भौतिकी और विज्ञान हमें और अधिक सम्पन्न बनाएंगे, स्वाधीन बनाएंगे और इतने उपकरण प्रदान करेंगे कि जिनका हम स्वप्न भी नहीं देखते। प्रत्येक शिक्षित पुरुष तथा स्त्री को इन विज्ञानों की गति के साथ कदम मिलाते हुए अथक परिश्रम और उत्साह से आगे बढ़ना है।

भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र आपके मन को प्रशिक्षित बनाएंगे, ताकि आप प्राकृतिक नियमों के मूल लक्षणों को समझ सकें, कारण-कार्य के नियमों को हृदयगम कर सकें, प्राकृतिक परिवर्तनों के काल-क्रम नियमों को जान सकें और इनके प्रभावों का ज्ञान प्राप्त कर सकें। तब आप जादू और करिश्मों में विश्वास करना छोड़ देंगे, जिनका वर्णन अनेक धार्मिक पुस्तकों में मिलता है। आपको ज्ञात हो जाएगा कि कोई भी पवित्र मनुष्य, चाहे वह ईसाई हो या मुसलिम, या बौद्ध—शून्य में से मछलियां या रोटी के टुकड़े पैदा नहीं कर सकता, पानी पर नहीं चल सकता, वायु में नहीं उड़ सकता, चांद के टुकड़े नहीं कर सकता, नदी को नहीं पी सकता, तूफान या वर्षा नहीं ला सकता, अपना लिंग (स्त्री या पुरुष) नहीं परिवर्तित कर सकता, अपने को अदृश्य नहीं कर सकता, लकड़ी के टुकड़े की लंबाई नहीं बढ़ा सकता, धरती में उपजाऊपन नहीं ला सकता, पैदा होते ही बातचीत नहीं कर सकता, बिना कुंजी के केवल उंगलियों से ताला नहीं खोल सकता, धूप पर अपने लबादे को नहीं टांग सकता, शब्द या मन्त्र द्वारा स्त्रियों का बांझपन नहीं दूर कर सकता, और मरे हुए को नहीं जिला सकता। भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र के अध्ययन के अनन्तर इस प्रकार के अचम्भे या करिश्मे में आपका विश्वास नहीं रहेगा। भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र ने इस पाखण्ड की सदा के लिए इस मूढ़ विश्वास की पोल खोल दी है कि कोई गुणी सन्त प्रकृति के नियमों के विरुद्ध कोई करामात दिखला सकता है।

नक्षत्र-विज्ञान

नक्षत्र-विज्ञान आपके सामने एक विराट और विस्मयकारक राज्य का उद्घाटन करता है। इसका चमत्कारपूर्ण आकर्षण अथाह है, अपरिमित है। इसका अनन्त क्षेत्र मानव-प्रज्ञा को एक चुनौती देता है। नक्षत्र-विज्ञान पर आपको बहुत-सी प्रसिद्ध तथा अर्धवैज्ञानिक पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए और आपको दूरवीक्षण यन्त्र द्वारा ग्रह-नक्षत्रों को अपनी आंखों से देखने का प्रयत्न करना चाहिए। आपके जीवन में आनन्द की लहर आएगी, जब आप अन्तरिक्ष में अतिरिक्त तारों (स्थूल आंखों से न दिखाई देने वाले सितारों) को देखेंगे या यह देखेंगे कि ध्रुव तारा वस्तुतः दुगुना है। किसी ऐसी वैज्ञानिक संस्था के सदस्य बन जाइए, जिसके पास [illegible]

के रूप मे उसका प्रयोग करना आरम्भ कीजिए। कभी मेघरहित ग्रीष्म-रजनी मे लेटे-लेटे जागते हुए, सितारों से जगमगाते नभ की ओर दृष्टि लगाइए और इसके साथ अपनी कल्पना दौड़ाइए। अनन्त की अमरता अपने अन्त.करण मे अवतरित होने दीजिए। देखते जाइए, देखते जाइए।

जब भी ग्रहण लगे, उसे देखने का यत्न कीजिए। और ग्रहो की गतिविधि का, समाचारपत्रों में दिए क्रम से, अध्ययन करने का प्रयत्न कीजिए। एक आकाश-सम्बन्धी ग्लोब मोल ले लीजिए और उसका अध्ययन कीजिए और अध्ययन तब तक जारी रखिए जब तक कि आपको ग्रह-नक्षत्रो की उसी तरह पहचान नही हो जाती, जैसाकि आपको पृथ्वी के मानचित्र मे देशों की पहचान है। आकाशीय ग्लोब का सूक्ष्म अध्ययन नितान्त आवश्यक है। अधिक से अधिक यात्राएं कीजिए, जिससे आप सितारों को देख सकें और उन नक्षत्रीय विचित्रताओ को देख सकें, जो संसार के उस भाग मे दिखाई नही पडते, जहाँ आपका निवास-स्थान है। उत्तर मे वनस्पतियों के विकास का अध्ययन कीजिए और भूमध्यरेखा स्वर्ग के विस्तार का आनन्द लीजिए। नक्षत्रविद्या के मुख्य आकड़ो को स्मरण कीजिए। इससे आपका मन ग्रहों, नक्षत्रों, सितारों, आकाशगंगा आदि मे स्वतन्त्र रूप से विचरण करने की क्षमता प्राप्त कर लेगा। सौर-मंडल के ग्रह-नक्षत्रों की एक-दूसरे से दूरी, आकार, मुख्य सितारा, सहायक सितारे, निकटतम सितारा, दूरतम सितारा, सबसे अधिक प्रकाशमान, सबसे कम प्रकाशमान—इसका कारण—इत्यादि बातों का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश कीजिए, जैसाकि आप भूगोल के अध्ययन में किया करते हैं। इससे आप अत्यन्त आश्चर्यजनक जगत की खोज में अग्रसर होगे। तब आपके सामने नियम और विकास-क्रम प्रत्यक्ष हो जाएगा। ये दोनों ही चिरन्तन प्रकृति के सबसे पवित्र रक्षक हैं। नक्षत्रविद्या का विधिवत् अध्ययन करने की साधना से आपको अनेक तथा विभिन्न प्रकार के लाभ प्राप्त होगे। यह ठीक है कि आपको नये वर्ष का कैलेंडर या तिथि-पत्रिका (जन्त्री) की रचना नहीं करनी। वह काम तो विशेषज्ञ का ही है। किन्तु नक्षत्रविद्या के अध्ययन से आपके मन और मस्तिष्क अनन्त अज्ञात का ज्ञान पाकर अपरिमित आनन्द का अनुभव करेगा। मनुष्य का जन्म केवल सोचने के लिए नही, बल्कि स्वप्न देखने (कल्पना करने) के लिए भी हुआ है। बौद्धिक मनोरंजन एक ऐसा पौष्टिक एवं उत्तेजक तत्त्व है, जिसके अभाव मे मानव-आत्मा क्षीण और दुर्बल रह जाती और नक्षत्रविद्या के अध्ययन से अधिक मनोरंजक और क्या होगा? मानसिक तथा आत्मिक क्षीणता के लिए नक्षत्रविद्या एक अचूक औषधि है। जब आप अन्तरिक्ष मे देखते

हैं, तो आप उसके अन्त तक नही पहुंच सकते। भले ही आइन्स्टाइन तथा लोरेंट्स के सूत्र कुछ भी कहते हों। निरन्तर अन्तरिक्ष निरीक्षण से आपका मानसिक व्यायाम होगा और तब आप विश्राम की इच्छा करेंगे। आप चाद तक उडना चाहते है, अथवा किसी अन्य नक्षत्र तक; किन्तु आज आप ऐसा करने मे असमर्थ है। परन्तु आप जानते है कि वह समय अवश्य आएगा, जब मानव अन्तरिक्ष मे उड़ानें करेंगे और किसी नक्षत्र पर अवकाश का दिन मनाया करेंगे; ठीक है, अभी उस दिन की प्रतीक्षा करनी होगी, किन्तु कल्पना मे उसका विचार रखिए।

सितारों—ग्रह-नक्षत्रों के विषयों पर आप इन प्रश्नो को अवश्य पूछें—'कितना विस्तृत है?', 'कितना प्राचीन है?', 'कितने हैं?' यदि आप अपने समकालीन विज्ञान की नवीनतम जानकारी रखते हैं तो आपको सनसनीखेज़ प्रसन्नता होगी।

इस प्रकार नक्षत्र-विज्ञान आपकी आत्मा को विशाल बनाता है, आपको विज्ञान की इस कविता से परिचित कराता है। यह आपकी कल्पना का विकास करता है और आपकी भावनाओं को उदात्त बनाता है। आज तो एक सभ्य स्त्री या पुरुष के लिए सृष्टि-विज्ञान का कुछ सामान्य ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। सत्यहीन अन्तरिक्ष-विद्या ने असत्य धर्मों को जन्म दिया और असत्य धर्म मानवजाति के लिए उतने ही हानिकारक है, जितने पालतू साप। यह आपका कर्त्तव्य है कि विश्व के जन्म, विकास तथा भविष्य का अध्ययन करें। सभी धर्म, अफ्रीका के फेटीशिज्म से लेकर सर्वाधिक प्रगतिपूर्ण मतवादों तक किसी न किसी प्रकार की सृष्टि-विद्या (Cosmogony) की शिक्षा अवश्य दी है। सभी मतवादों और संप्रदायों के मूढ तथा अन्धविश्वासो का आधार ही सृष्टि उत्पत्ति के सिद्धान्त हैं। और ये अन्धविश्वास ही बुराई की जड़ है। यदि आप अपने लिए किसी धर्म को चुनना चाहते है, जो आपको सत्य तथा जीवन तक ले जाए, न कि भूतो और मृत्यु तक ले जाए, तो आपको अवश्य-मेव सृष्टि-उत्पत्ति की सही विद्या का अध्ययन करना चाहिए। यदि आप गलत सृष्टि-उत्पत्ति की विद्या पढ़ेंगे, तो आपका धर्म भी गलत होगा, तब आपका जीवन निष्फल हो जाएगा।

नक्षत्र-विज्ञान द्वारा आपके मस्तिष्क से परपरागत मिथ्या विश्वासों का भ्रम-जाल दूर होगा। पुराने पोपो, पाखंडी पुजारियो, द्वारा इस बारे मे बुने गए मिथ्या ताने-बाने को तोड फेंकने मे वैज्ञानिक नक्षत्रविद्या का अध्ययन ही सहायक हो सकता है। इस विज्ञान के द्वारा आपको विश्व-रचना का एक साधारण किन्तु सही ज्ञान प्राप्त हो सकता है। उससे आप

'स्वर्ग', 'नरक' की काल्पनिक बातों में, जो ईसाई, मुस्लिम, हिन्दू तथा बौद्ध धर्मों मे समान रूप से प्रसिद्ध हैं, आप विश्वास करना छोड़ देंगे। विश्व के प्रत्येक दूर-दराज कोने की तह तक शक्तिशाली दूरवीक्षण यन्त्र देखने की सामर्थ्य आपको प्रदान करते हैं और विश्व के भागों को उसी प्रकार देखने मे समर्थ हैं, जैसे नाट्यगृह मे पहुंचकर आप रंगमंच के किसी भी कोने को देख सकते हैं।

करोड़ों लोग आज भी सोचते हैं कि 'स्वर्ग' तथा 'नरक' आकाश में कही पर विद्यमान हैं। नक्षत्रविद्या इस मिथ्या विश्वास पर करारी चोट करेगी। नक्षत्र-विज्ञान का विद्यार्थी सीधा सवाल करेगा—"कहां है स्वर्ग, कहा है नरक—कहा हैं—कहां हैं ?" शीघ्र ही इस विद्यार्थी के—ग्रहण, सितारे, आकाशगंगा, पुच्छलतारा, तारा टूटना आदि के संबंध में मूढ़ विश्वास समाप्त हो जाएंगे। मानवजाति के अज्ञान के कारण ही अनेकों शताब्दियों तक मूर्खतापूर्ण मिथ्या विश्वास चलते रहे हैं। शताब्दियों तक ग्रहण और पुच्छलतारा, शनि और मंगल आदि मानव-समूहों को नहीं, बल्कि राष्ट्रों तक को भयभीत करते रहे हैं। ज्योतिषियों के सारे पाखं- और ठगविद्याओं के आधार ये मिथ्या विश्वास ही है। नक्षत्र-विज्ञान आपको विदित होगा कि संसार अनादि है। इसकी रचना किसी ने नहीं की। शक्ति का पदार्थ मे परिवर्तन और पदार्थ का शक्ति में पुनरावर्तन भी चिरन्तन है। इस सृष्टि को कभी भी मर्दुक, यहोवा, इलोहिम, ब्रह्मा, अल्लाह ने नही बनाया। लाग ति-तियेन, आहुरमज्द, डिम्मेरा, डेमोक्रिटस, अरस्तू, एपीक्यूरस और कुछ भारतीय विचारकों ने अपनी कल्पना से ही सृष्टि की उत्पत्ति की कल्पना कर ली थी। परन्तु आधुनिक नक्षत्र-विज्ञान इन मूढ़ विश्वासों को असत्य प्रमाणित करता है। इस प्रकार आप उन सारी कपोलकल्पनाओं की कहानियों को निःसार समझकर रद्द कर दें, चाहे वे वेदों में, कुरान में, पुराण में, बाइबिल में, जेंदावस्ता में अथवा अन्य किन्ही प्राचीन धर्म-पुस्तकों मे मिलती हों। उन बहुमूल्य पुस्तकों के लेखकगण बड़े महान् तथा भले मनुष्य थे, किन्तु वे आधुनिक गणित, भौतिक विज्ञान, तथा रसायन-शास्त्र से अनभिज्ञ थे। सृष्टि-विज्ञान की शिक्षा लेनी हो तो हम आज के जीवित वैज्ञानिकों से ले सकते हैं। आप—प्लेटो, आगस्टाइन, और जे० जीन्स के इस कथन पर अधिक ध्यान न दें कि समय का कभी आरम्भ हुआ था। उनके ये विचार विचित्र, मूर्खतापूर्ण तथा हास्यास्पद हैं। 'समय का आरम्भ'—यह वाक्यांश ही निरर्थक है। समय परिभाषा में उसका 'अनादि' तथा 'अनन्त' होना निहित है। सृष्टि-विज्ञान आपको इन शब्दों से परिचित कराएगा—

(1) प्रकृति स्वयं चालित तथा स्वाधीन है।
(2) सृष्टि का न आदि है, न अन्त।
(3) कोई कर्ता नहीं और न कोई कृति है।

ऋतु-विज्ञान

आकाश से धरती पर उतरकर, आपको ऋतु-विज्ञान के प्रमुख तत्त्वों का ज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिए। इन सामान्य आश्चर्यकारक तथ्यों, उदाहरणतया—वर्षा, तड़ित और बिजली का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। मिथ्या ऋतु-विज्ञान ने भी अतीतकाल में अनेक प्रकार के मिथ्या विश्वासों का पालन-पोषण किया है। प्रायः प्रत्येक देश के लोग वर्षा तथा बिजली के देवता की उपासना करते रहे हैं। और हमें लज्जा के साथ अवश्य ही मानना पड़ेगा कि अब भी कुछ पढ़े-लिखे पादरी और पुजारी वर्षा के लिए भगवान से प्रार्थना करते हैं, मानो वर्षा किसी देवी या देवता की कृपादृष्टि पर निर्भर हो। सन्त चाड एक इंग्लैंडवासी ईसाई संत ईसा की सातवीं शताब्दी में हुआ है। ऋतु-विज्ञान-संबन्धी अज्ञता के कारण वह मूर्ख बालक के समान व्यवहार किया करता था। जब वह पुस्तक पढ़ रहा होता था या किसी अन्य कार्य में व्यस्त होता था, तो उस समय यदि तेज़ हवा के झोंके आने लगते थे, तो वह तुरन्त भगवान से दया करने की प्रार्थना किया करता था। यदि हवा और भी तेज़ हो जाती थी, तो वह अपनी पुस्तक को बन्द कर देता था और भूमि पर औंधा लेट जाता था। साष्टांग प्रणाम करते हुए वह और भी भक्ति से प्रार्थना करता था; किन्तु यदि भयंकर तूफान आ जाता था, बिजली चमकती थी और बादल गड़गड़ाते थे, तो वह पश्चात्ताप प्रकट करने के लिए चर्च के भीतर चला जाता था और भक्ति में तल्लीन होकर प्रार्थना करने लगता था और वह तब तक बाइबिल के गीत गाता रहता था, जब तक कि तूफ़ान शान्त न हो जाए। जब उसके अनुगामियों ने उससे प्रश्न किया कि वह ऐसा क्यों करता है, तो उसने उत्तर दिया—"भगवान् ही प्रचण्ड हवाओं को उठाता, बिजली और मेघगर्जन को प्रेषित करता है। वह इन्हें स्वर्ग से बुलाकर भेज देता है, इसलिए कि लोग उससे (भगवान् से) डरें और न्याय के दिन की याद मन से न भुला दें। इसलिए भगवान् की ताड़ना के उत्तर में हमें अवश्य ही अपनी नम्रता का प्रदर्शन करना चाहिए।" यदि सन्त चाड ने ऋतु-विज्ञान का अध्ययन किया होता, तो उसे ज्ञात होता कि समस्त प्राकृतिक परिवर्तनों के कारण प्रकृति के नियम ही हैं। सुकरात ने स्ट्रेप्सियेड को समझाया था कि किस प्रकार प्राकृतिक वायवीय चक्रों के

द्वारा बादलों का जन्म होता है, न कि जीअस देवता द्वारा, जसाकि मिथ्या-विश्वासी यूनानी विश्वास रखते थे । आप भले ही ऋतुओं पर नियंत्रण करने के लिए वैज्ञानिक आन्दोलन चलाइए; कि हाथ जोडना, दीनतापूर्वक प्रार्थना करना और वर्षा या धूप के लिए किसी देवी-देवता को कारण मानना छोड़ दीजिए । जीअस, इन्द्र, उइराकोचा, तथा थोर के दिन लद गए—ये देवी-देवता आपकी रक्षा नहीं करेंगे। वर्षा और धूप से, आंधी और तूफान से—यदि कोई रक्षा कर सकता है तो वह विज्ञान है—विज्ञान से प्रार्थना कीजिए ।

भूगर्भ-तत्त्व-विज्ञान

भूगर्भ-तत्त्व-विज्ञान का भी आपको ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इसके दो उपविभाग हैं—1. खनिज विज्ञान तथा 2. पालियंटोलोजी। कुछ एक खनिजो अथवा पौधों या जीवों के सड़े हुए शेषांश मोल लीजिए अथवा कहीं से संग्रह कर लीजिए । उनके ज्यामितीय नमूनो तथा उनके अद्भुत नामो से आप आकर्षित होंगे । जब आप किसी भू-भाग की यात्रा करें, तो सर्वदा उस क्षेत्र के भूगर्भ-तत्त्व के विषय मे कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न अवश्य करें । अपने को वहां की सुन्दर पर्वतीय मनोहर दृश्यावली तक ही सीमित मत रखिए, अपने सौन्दर्य-ज्ञान मे विज्ञान का भी प्रवेश कराइए। विज्ञान की अन्य सभी शाखाओं के समान, भूगर्भ-तत्त्व-विज्ञान के द्वारा भी आपके मन से अनेक मूढ़ विश्वासो की जड कट जाएगी । इससे आपको यह विदित हो जाएगा कि ज्वालामुखियों तथा भूकम्पो का कारण कोई दैवी या आसुरी 'कोप' नहीं है। चीनियों की भूगर्भ-विद्या फेंग-शुई सर्वथा झूठी और निकम्मी है, उसे गंभीरता से पढने की आवश्यकता हर्गिज नहीं । इस मूढ विश्वास ने चीन मे अनगिनती नकली डाक्टर, जन्त्र-मंत्र-तावीज वाले, धोखे से धन कमाने वाले परजीवी (Parasites) पैदा कर दिए हैं। भूगर्भ-तत्त्व-विज्ञान के अध्ययन से मस्तिष्क के लिए पर्याप्त व्यायाम प्राप्त होगा, जिस प्रकार आपको करोड़ों वर्षों के काल-परिवर्तनो का अध्ययन करना है, उसी प्रकार आपको यह भी अध्ययन करना है और कल्पना करना है कि पृथ्वी के गर्भ मे अविश्वसनीय आश्चर्यजनक परिवर्तन होते रहते हैं । भूगर्भ-तत्त्व-विज्ञान हमारे मस्तिष्क को इस बात का अभ्यस्त बनाता है कि जिससे हम, अत्यन्त मन्द गति से किन्तु निरन्तर एवं अजस्र होते रहने वाले भूगर्भ-संबंधी परिवर्तनो से परिचय प्राप्त करने मे समर्थ होते हैं। इसका अध्ययन करते-करते आप अतीत की ओर बढते हुए वहा तक जा पहुंचते हैं, जबकि

पृथ्वी के पहले-पहल जीवन का आरम्भ हुआ था।

वनस्पति-विज्ञान

इसके अनन्तर आपको जीव-विज्ञान पर विचार करना है। बैक्टीरिया-विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान तथा पशु-विज्ञान इसी के उप-विभाग हैं। इन सभी में से, वनस्पति-विज्ञान, शैक्षणिक, उपयोगितात्मक तथा सौन्दर्य-संबंधी उद्देश्यों के लिए, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके अध्ययन से आपको वर्गीकरण का अर्थ तथा ढंग समझ में आएगा। आप असंख्य वनस्पति वर्गों, उनके मूल रूपों पर परिश्रम करेंगे, प्राकृतिक नियम-क्रम का अध्ययन करेंगे और आप आश्चर्य करेंगे कि इतने सुन्दर पुष्प को इतना कुरूप और बेढंगा नाम क्यों दिया गया है! आप चकित होंगे किन्तु साथ ही सनसनी-जनक प्रसन्नता आपको प्राप्त होगी, जबकि आप बैक्टीरिया-विज्ञान तथा वनस्पति-विज्ञान में किसी विषय पर लिखा हुआ अद्भुत वर्णन पढ़ेंगे। कोक्कस जिसका व्यास 1/1000 मिलीमीटर है, बासिल्ली की 20 मिनट की वंश-परम्परा, अदृश्य वाइरसिज—जिनकी फोटो केवल 'अल्ट्रा वायलेट लाइट' से ही ली जा सकती है, तुषारप्रस्तर में मिलने वाले स्पोर्स, कैली-फोर्निया के दैत्याकार लालवृक्ष, आस्ट्रेलिया के अमिग्डालिना, दक्षिण ध्रुव-सागरों के मैक्रोसिस्टिस, न्यूज़ीलैंड के कौडी ताड़ वृक्ष, श्रीलंका के दैत्य बांस, निर्दय कार्निवरस, इत्यादि सहस्रों विचित्रताओं से भरे संसार में आपका प्रवेश वनस्पति-विज्ञान के द्वारा ही होगा। इसके अतिरिक्त अन्य मनोरंजक वानस्पतिक तत्त्वों का आपको परिचय प्राप्त होगा, जो संसार के विभिन्न भागों में पाये जाते हैं। आपका सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से परिचय होगा, जो आपके सम्मुख एक आश्चर्यमय संसार के द्वार खोल देगा। आपकी आंखों को वह सब कुछ देखने को मिलेगा जो चर्मचक्षुओं के लिए सामान्यतः अदृश्य है। यदि आप खर्च कर सकें, तो एक सूक्ष्मदर्शक यन्त्र मोल ले लीजिए, अथवा अपने किसी मित्र से उसे मांग लीजिए। सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से पदार्थों का निरीक्षण करना एक आनन्ददायी शौक है। आप किसी सूक्ष्म-दर्शक सभा के सदस्य बन सकते हैं और उसमें जाकर अन्य शौकिया लोगों के साथ इस आनन्द में सम्मिलित हो सकते हैं। दुर्लभ वन्य पुष्पों, बिना फूल के पौधों तथा अन्य वानस्पतिक अद्भुत पदार्थों का संग्रह कीजिए। अपने घर पर ही वनस्पति-सम्बन्धी सरल प्रयोग एवं परीक्षण कीजिए। स्थानीय वानस्पतिक उद्यान में जाइए और जो कुछ अध्ययन कर सकते हैं करिए। वनस्पति के किंचित् ज्ञान के बिना, महान् कवियों द्वारा प्रयुक्त अनेक उपमाओं को आप नहीं समझ सकते। आपकी ग्राम-यात्रा

अधिक रुचिकर तथा मनोरंजक हो जाएगी, यदि आप प्रत्येक पौधे तथा फूल का उसके नाम से अभिवादन करते है और उसके जीवन-वृत्तान्त के विषय में कुछ जानकारी रखते हैं। चरागाहें और वाड़े आपको पाकर मानो चिरपरिचित मित्र को पाकर प्रसन्न होंगी और आपके लिए वे केवल हरियाली का ढेर-मात्र नही रह जाएंगी। आप सीख जाएंगे कि बिना वास्तविक आवश्यकता के आप फूल न तोड़ें और पौधे को जड़ से न उखाड़ें। स्मरण रखिए कि एक फूल अपने पादप-रूपी घर में सुन्दर दिखाई देता है और अधिक देर तक जीवित रहता है, बन्द कमरे में रखे गुलदस्ते में वह प्रसन्न नहीं रहता। तब आप संभवतः एक रुग्ण गुलाब से सहानुभूति प्रकट करेंगे।

पशु-विज्ञान

वनस्पति-विज्ञान के अनन्तर आपको पशु-विज्ञान का भी यथेष्ट ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। मारफोलोजी, शरीर-क्रिया-विज्ञान, तथा पशु-जगत् के अन्य पक्षों का अध्ययन इसी विज्ञान के अन्तर्गत है। यह सम्मति देना उचित होगा कि आप शरीर-क्रिया-विज्ञान सम्बन्धी तथ्यों का अध्ययन करें, जहां तक कि उसका सम्बन्ध मानव-शरीर के तथ्यों तथा समस्याओं से है। साथ ही यह भी अध्ययन करें कि उसका संपूर्ण मानव-विज्ञान से क्या सम्बन्ध है। जीवित जगत् मे मानव की विशेष महत्त्वपूर्ण स्थिति है। पशु-विज्ञान में वे सभी विषय पढ़ने चाहिए, जिनका मानव से निम्न स्तर के प्राणियों (Sub-human species) से सम्बन्ध है। प्रोटोज़ोआ से लेकर एन्थ्रोपोइड बन्दर तक की क्रमिक विकास-कड़ियों का अध्ययन कीजिए। इसकी मध्यवर्ती लुप्त (अज्ञात) कड़ियों के बारे में अध्ययन कीजिए। मानव की जो शारीरिक चेष्टाएं पशुओं के समान हैं उनका अध्ययन मानव-मनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए। वस्तुतः उनकी पशु-विज्ञान में परिगणना नहीं होती। मानव जब केवल श्वासक्रिया करता है, या भोजन को हज़म करता है, अथवा संभोग करता है, तब वह इन क्रियाओं को स्वतंत्र व्यक्तित्व-रूप में करता है, न कि केवल पशु-रूप में। यह सर्वथा गलत विचार है कि मानव की शरीर-क्रिया को उसके मनोवैज्ञानिक तथ्यों से पृथक् करके तत्सम्बन्धी अनुसन्धान किया जा सकता है। सामान्य मानव व्यक्ति एक तथा अविभाज्य है और यहां तक कि मानव की श्वासक्रिया तथा भोजन-पाचन आदि शारीरिक क्रियाएं भी एकसाथ उसके पशुत्व एवं मनोविज्ञान से सम्बन्ध रखती हैं। मानव व्यक्तित्व की एकता के सिद्धान्त को भलीभांति

समझ लीजिए और इसकी समीक्षा कीजिए, किन्तु मानव एवं पशु के मध्य की सीमारेखा को दृष्टि से ओझल करने की गम्भीर भूल से बचिए। यह आवश्यक है कि मानव को एक प्राणी होते हुए भी उससे भिन्न समझा जाए। निश्चय ही प्राइमेट्स से विकास करते-करते उसने वर्तमान स्थिति को प्राप्त किया है; किन्तु इस समय वह अत्यन्त आश्चर्यजनक प्राणी बन चुका है। पशु-विज्ञान का, यहां तक कि उसके शरीर-रचना तथा शरीर-क्रिया-विज्ञान (Physiology) के उपविभागों का अध्ययन करते हुए उसके सिद्धान्तो का एन्थ्रापोइड बन्दर से उसका मिलान करते जाइए। मानव को कभी भी उस शृंखला की एक कड़ी के रूप में मत समझिए; क्योंकि मानव स्तनपायी प्राणियों में सर्वोच्च विकसित है। मानव-विश्लेषण-विज्ञान के लिए यह उचित है कि वह मानव को अपने विज्ञान का प्रथम चरण स्वीकार करके इसके आगे खोज करे। मानव को एक ऐसी मकान की चोटी न समझा जाए, जिसके नीचे की मंज़िल मे गौएं और सूअर रहते हों।

•

इस प्रकार दृढ़ता से, मानव को पशु-विज्ञान के पंजे में फंसने से बचाने के उपरात, आइए अब हम इस महान विज्ञान—पशु-विज्ञान का परीक्षण करें और इस पर भी विचार करें कि वैयक्तिक अध्ययन मे इसका क्या स्थान है। अधिकांश बच्चे कुछ पशुओं को बहुत पसंद करते है। यह आरम्भिक अभिरुचि ही आपकी पशु-विज्ञान-सम्बन्धी शिक्षा को आगे बढ़ा सकती है। पशु-विज्ञान द्वारा आपके मन पर पशु-वर्गीकरण के अर्थ तथा ढंग की गहरी छाप पड़ती है। वनस्पति-विज्ञान के वर्गीकरण की अपेक्षा यह वर्गीकरण अधिक प्रभावशाली है। विज्ञान की कोई भी अन्य शाखा आपको यह प्रशिक्षण प्रदान नही कर सकती। आप पशुओं के विभिन्न प्रकारो, विविध प्राणि नमूनों, जेनेरा, परिवारों और उपवर्गों, वर्गों, श्रेणियों इत्यादि को बड़े दत्तचित्त होकर समझने के अनन्तर प्रत्येक गण की पृथक् विशेषताओ को हृदयंगम कर सकते हैं। फीलम 'अर्थोपद' (Phylum 'Arthropoda') पर विशेषतया ध्यान दीजिए और इसकी आर्कनिडा एवं इन्सेक्ट को भी खूब ध्यान से समझ लीजिए। ग्रीष्म ऋतु में जीवित जीव-जन्तु भले ही एक मुसीबत हों, लेकिन मृत नमूनो के रूप में वे अत्यन्त उपयोगी मस्तिष्क-प्रशिक्षक होते हैं। जीव-विज्ञान आप पर जो जीव-वर्गीकरण का रहस्य उद्घाटित करेगा, उससे आप चकित रह जाएंगे। सूक्ष्म-निरीक्षण की यह आदत जीवन-भर आपके बहुत काम आएगी। आप निरन्तर इससे मनोरंजन प्राप्त करते रहेंगे, आप अनेक

जीव-विज्ञान-सम्बन्धी विचित्रताओं को देखकर आपको आह्लादकारी विस्मय होता रहेगा। जीव-विज्ञान के अध्ययन द्वारा आप मानव-शरीर-रचना तथा शरीर-क्रिया-विज्ञान का अध्ययन करने की तैयारी पूरी कर लेंगे, जो कि आपके लिए स्वास्थ्य-रक्षा तथा शारीरिक कार्य-कुशलता के हेतु नितान्त आवश्यक है। इनके अध्ययन से आपकी शारीरिक दुर्बलता दूर हो जाएगी और आप काम-सम्बन्धी विषयों के बारे में स्वाभाविक तथा तर्कसंगत बातचीत करने योग्य हो जाएंगे। आप कोषों, तांतों, अंगों, इन्द्रियों के विषयों, वंशपरम्परा, विभेद, रक्त, अस्थि, काण्डिका, क्रोमोसोम और प्रजनन-शक्ति इत्यादि के बारे में बुद्धिसंगत बातचीत कर सकेंगे। अन्त में आपको जीवन का जन्म, विकास, टेलियोलोजी तथा वाइटलिज्म के बारे में जानने का प्रयास करना होगा। जीव-विज्ञान आपको तुच्छतम से आरम्भ करके ज्ञान प्रदान करता हुआ उच्चतम ज्ञान-स्तर तक पहुंचा देगा।

जीव-विज्ञान आपके सम्मुख जीवन के स्रोत के विषय में विचार रखेगा। यह मिथ्या देवतावाद से आपको छुटकारा दिलाएगा। मानव तथा पशु का विकास 'प्रोटोज़ोआ' से हुआ है। और प्रोटोज़ोआ या तो अनादि तथा अनन्त है या उनका निर्माण अचेतन तत्त्व से हुआ है। यह पृथ्वी की बहुत पुरानी कहानी है। आर्हेनियस, केलविन आदि के विचार आपका ज्ञान-संवर्द्धन करेंगे। प्रश्न यह है कि क्या चेतन पदार्थ भी 'शक्ति' तथा अचेतन तत्त्व (Matter) के समान चिरन्तन पदार्थ है? अथवा इसका जन्म अचेतन पदार्थ से होता है? आप अध्ययन करते-करते अन्त में स्वतः इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि जीवन अपने-आप में उसी प्रकार एक चिरन्तन तत्त्व है, जैसे शक्ति तथा (अचेतन) पदार्थ। इससे आपका यह अन्धविश्वास समाप्त हो जाएगा कि जीवन को किसी देवता ने पैदा किया। आचार्य जगदीशचन्द्र बोस के अनुसन्धानों से यह प्रमाणित हो गया है कि जड़ तथा चेतन में अनेक विशेषताएं एकसमान हैं। यहां तक कि धातुओं को भी थकावट होती है और उन्हें भी विष दिया जा सकता है। वोह्लर के विचार भी इस विषय में ज्ञातव्य हैं। इनके ज्ञान को पाकर आप परियों, अप्सराओं, भूतों, प्रेतों, जिन्नों, दैत्यों, असुरों आदि पर मिथ्या विश्वास करना छोड़ देंगे, उनसे भयभीत नहीं होंगे। आप उन ऐतिहासिक दन्त-कथाओं पर विश्वास करना छोड़ देंगे कि किसीने मन्तर मारकर मृत को जीवित कर दिया। आप फौरन कह देंगे कि यह असम्भव है। जीव-विज्ञान के अध्ययन के बाद आपके ज्ञान-चक्षु खुल जाएंगे और आप जान लेंगे कि क्या संभव है तथा क्या असंभव है। पशु-विज्ञान आपके हृदय में पशुओं

तथा जीव-जन्तुओं के प्रति स्नेह तथा दया की भावना पैदा करेगा। अध्ययन के द्वारा सदा ही रुचि तथा सहानुभूति को प्रोत्साहन मिलता है। एक पशु-विज्ञानी के लिए भेड केवल मास तथा ऊन ही नही है। उसके लिए एक मकड़ी केवल कुरूप जीव ही नही है। वह सभी कीट-पतगों, जीव-जन्तुओं और पशु-पक्षियो को—प्राणिमात्र को—सघर्ष करते, योजना बनाते, कष्ट पाते, भोजन तलाशते, विपरीतलिंगी साथी की खोज करते, मृत्यु से डरते—व्यक्तियों के रूप में देखने लगता है।

विज्ञान का इतिहास

आपको विज्ञान के इतिहास का भी अध्ययन करना चाहिए। इससे आपको यह ज्ञात होगा कि मानव-जाति ने किस प्रकार विराट् वैज्ञानिक ज्ञान का भण्डार प्राप्त किया है और इसमे अहमेज से आइन्स्टाइन तक कितनी शताब्दियां लग गई हैं। महान वैज्ञानिकों के जीवन-चरित्रों का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। उनके सघर्ष और साहस की जानकारी होने पर आपको विदित होगा कि विज्ञान महान् त्याग का ही श्रेष्ठ फल है। इससे आप सत्य से प्रेम करना सीखेंगे, यथार्थ और यथातथ्य के साथ आप सोने-चादी से भी अधिक प्यार करने लगेंगे। इससे आपको बौद्धिक ईमानदारी की प्राप्ति होगी और ऐसी आत्मिक विशालता प्राप्त होगी जिसे भ्रष्टाचारी नही बताया जा सकता। नैतिक शिक्षण तथा धार्मिक उपदेशों से आप ये गुण कभी प्राप्त नही कर सकते। एक वैज्ञानिक के लिए एक तथ्य पवित्र है और एक प्रयोग-परीक्षण ही उसकी उपासना है। वह न तो कभी अपरीक्षित और मिथ्या धारणाओ पर विश्वास करेगा और न दूसरों के सम्मुख उन्हें उपस्थित करेगा। श्रेष्ठ या हीन राजनैतिक और धार्मिक नेता मिथ्या बातो को अपने अनुयायी लोगों के सामने उपस्थित करने मे संकोच नहीं करते; किन्तु, एक वैज्ञानिक ऐसा कभी नही करेगा।

विज्ञान के इतिहास के अध्ययन से आपमें सत्य के प्रति अटूट प्रेम पैदा होगा। यह सत्य-प्रेम आपकी आत्मा की गहराइयो तक जड़ जमा लेगा। आप जिस बात को मिथ्या जान लेंगे, उस पर कभी विश्वास नही करेंगे, और दूसरों को उस पर विश्वास करने के लिए तो आप कभी भी नही कह सकेंगे। आपको इन बुद्धि की दृष्टि से महान् व्यक्तियों के जीवन-चरित का विस्तार से ज्ञान प्राप्त करना चाहिए—अरस्तू, हिप्पारकस, आर्किमिडीस, एराटोस्थेनेज, अरिस्टार्कस, हिप्पोक्रेट्स, कोपरनिकस, केप्लर, न्यूटन, कुवियर, लामार्क, डारविन, पाश्चर, आर्यभट्ट, अल-हैयाम—

जिन्होंने जान-बूझकर अपने जीवन को विज्ञान के लिए अर्पण कर दिया और मानवता के नव-विहान के लिए मार्ग प्रशस्त किया, मानव को सच्चे अर्थों में प्राणिमात्र का शिरोमणि बनाया, उसे ज्ञान को अपनी आंखों से देखने के योग्य बनाया, पृथ्वी को मानव की आज्ञा पर चलनेवाली बनाया, और प्रकृति को एक खुली किताब के रूप में मनुष्य के हाथ में रख दिया।

प्रथम सिद्धांत

भौतिक विज्ञान, रसायन-शास्त्र, वनस्पति-विज्ञान तथा जीव-विज्ञान के अध्ययन से आपको समस्त विश्व के सम्बन्ध में कतिपय विचारों का ज्ञान होगा। इन आधारभूत दार्शनिक सिद्धान्तों पर यहां अत्यन्त संक्षेप से विचार किया जाता है। विश्व अथवा प्रकृति के सम्बन्ध में सर जे० जीन्स ने कहा है—"विश्व का समस्त जीवन ऊर्जा का ही मूर्त रूप है, जो भिन्न-भिन्न रूपों में हमें दिखाई देता है।" प्रकृति मूल रूप में, स्वयंपूर्ण तथा 'एक' है। सभी दृश्यमान पदार्थ शक्ति के ही मूर्त रूप हैं तथा अनिवार्यतः एक ही प्रकार के हैं। जिस तत्त्व को कभी हम पदार्थ और कभी शक्ति नाम देते हैं, उसे ए० एडिंगटन ने 'Material energy tensor' संज्ञा दी है।

पदार्थ-जगत् से सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक तत्त्व में तीन विशेषताएं होती हैं—

(1) वे स्थान तथा काल में होते हैं। विश्व के समस्त पदार्थ परस्पर इस प्रकार के सम्बन्ध से सम्बन्धित होते हैं—आकार, रूप, दूरी, गति की दिशा। पदार्थों के तत्त्वों के परिमाण को प्रकट करने वाली विशेषताएं स्थान के अन्तर्गत आती हैं।

प्रकृति का पदार्थ-जगत् एक अन्य प्रकार से परस्पर सम्बद्ध है। सभी पदार्थ सह-अस्तित्व रखते हैं, वे एक-दूसरे से आगे-पीछे होते हैं। समसामयिकता अथवा पूर्वा पर अवस्थिति के ये सम्बन्ध 'काल' शब्द से प्रकट किए जाते हैं। परिवर्तन अथवा गति समय का परिमाप हैं।

स्थान एवं काल स्वयंपूर्ण नहीं हैं, ये परतः सापेक्ष्य हैं, जैसाकि मिंकोवस्की तथा आइन्स्टाइन ने स्वीकार किया है। स्थान एवं काल परस्पर भी, एक-दूसरे से निरपेक्ष नहीं हैं। भौतिक विश्व के ये अंग जो काल तथा स्थान द्वारा सीमित किए जाते हैं, वे घटनाएं कहलाते हैं। चार प्रकार के परिमाण किसी घटना की स्थिति को स्थान-काल में परिसीमित करते हैं। स्थान, काल तथा पदार्थ एक-दूसरे से अविभाज्य हैं। आपको सापेक्षतावाद का सम्पूर्ण अध्ययन करने का प्रयत्न करना चाहिए, यद्यपि यह

पर्याप्त कठिन है।

(2) प्रत्येक मूर्त पदार्थ कारण-कार्य के नियम से आबद्ध है। कारण-कार्य के नियम की व्याख्या अनेक प्रकार से की जा सकती है। यह विश्व पदार्थों एवं घटनाओं का उलट-पुलट ढेर मात्र नहीं है। कारण-कार्य की सुनहली शृंखला ने इसे व्यवस्थित किया हुआ है। प्रत्येक परिवर्तन तथा प्रत्येक घटना का कोई-न-कोई कारण अवश्य होता है। कारण-कार्य के नियम के ज्ञान बिना विज्ञान की सिद्धि ही नहीं हो सकती थी। भले ही अणुओं मे ऐसे अंश हों, जिनके कारण-सम्बन्ध की अब तक खोज नहीं की जा सकी हो; किन्तु हमारा विश्वास है कि इस कारण-सम्बन्ध की सत्ता अवश्य है।

(3) प्रकृति निरन्तर प्रवहमान है। प्रतिक्षण सम्पूर्ण विश्व परिवर्तित होता रहता है। पलक झपकने में जितने समय (निमिष मात्र) में भी विश्व एकसमान नहीं रहता। प्लेटो और अरस्तू ने भी यही स्वीकार किया है कि नदी के प्रवाह की भांति समस्त विश्व का प्रत्येक पदार्थ प्रवहमान है।

पांच वर्ग

विश्व मे, प्रत्येक प्राकृतिक मूर्त पदार्थ की उत्पत्ति ऊर्जा से है। उनको पांच वर्गों मे विभक्त किया जा सकता है—भौतिक, रासायनिक, वानस्पतिक, जान्तविक तथा मानविक।

प्रकृति की मूलाधारभूत एकता ठोस एकसारता नहीं है; अपितु एकता मे विविधता है। प्रत्येक वर्ग में सभी पूर्व-पूर्व वर्गों की विशेषताएं पाई जाती हैं। कुछ विश्व-जनीन नियम सभी वर्गों के लिए एकसमान हैं। परन्तु कुछ विशिष्ट नियम हैं, जो विशिष्ट वर्ग पर ही लागू होते हैं। प्रत्येक वर्ग का मूर्त पदार्थ वर्गीकरण द्वारा परवर्ती वर्ग में विलीन हो जाता है। अतः दो वर्गों के मध्य में प्रायः सीमान्तरेखावर्ती पदार्थ भी पाए जाते हैं। प्रत्येक वर्ग के मूर्त पदार्थ अपनी विशिष्ट विच्छित्ति द्वारा पहचाने जाते हैं।

(1) भौतिक पदार्थ—ऊर्जा के विभिन्न प्रकार तथा पदार्थ (Matter) इस वर्ग में परिगणित होते हैं। इस वर्ग की प्रमुख विच्छित्ति (विशिष्ट विशेषता) गति (Motion) है। भौतिक विज्ञान विज्ञान की उस शाखा का नाम है, जो इसके सम्बन्ध मे खोज करती है।

(2) रासायनिक पदार्थ—रसायन शास्त्र का विषय मुख्यतः पदार्थ (Matter) है। पदार्थ का ढांचा, रूप-परिवर्तन (Transformation) और संश्लेषण इसके अन्तर्गत आते हैं। रासायनिक लक्षणता द्वारा इन पदार्थों को भौतिक पदार्थों से पृथक् पहचाना जाता है।

(3) वानस्पतिक पदार्थ—पौधों से सम्बद्ध समस्त पदार्थ इसके अन्तर्गत आते हैं। इनमें जीवन अपने सरलतम रूप में प्रारम्भ होता है। वनस्पतियों मे जीवित कोष (Cells), श्वासक्रिया, पोषण, परिवर्धन, प्रजनन तथा मृत्यु—ये जीवन-लक्षण पाए जाते हैं। पौधो द्वारा सामान्य जड (निर्जीव) पदार्थ को जीवन प्रदान किया जाता है (जीवित मे परिवर्तित किया जाता है)। पौधों (वानस्पतिक पदार्थों) में जीवन है, किन्तु उनमें विचारणा एवं चेतना का अभाव है।

(4) जान्तविक पदार्थ—जीव-विज्ञान पशुओ (जीव-जन्तुओं—प्राणियो) के जीवन के सम्बन्ध मे खोज करता है। जीव अपने भोजन के लिए पौधो पर निर्भर करते हैं। उनमें (पौधो के समान) न केवल जीवन है, अपितु उनमें विचारशक्ति भी मौजूद है (जो कि पौधों मे नही); क्योंकि जीव-जगत् के प्राणियो के पास नाड़ी संस्थान विद्यमान है, किन्तु उनमें चेतना का अभाव है, अतः उनमें तर्कशक्ति तथा भावना विद्यमान नहीं है। इस वर्ग के लिए शरीर-क्रिया-विज्ञान प्रधान विज्ञान है। चतुर्थ एवं पंचम वर्ग के सीमान्तरेखावर्ती प्राणी चेतना के प्रादुर्भाव के निदर्शक हैं।

(5) मानसिक पदार्थ—इसपर विज्ञान की निम्नलिखित शाखाएं विचार करती हैं—शरीर-रचना-विज्ञान, शरीर-क्रिया-विज्ञान, मनोविज्ञान, इतिहास, राजनीति, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र इत्यादि। इस वर्ग के हेतु मनोविज्ञान सबसे प्रधान विज्ञान है। मानव प्राणी में न केवल जीवन तथा विचारणा है, बल्कि उसमें चेतना भी विद्यमान है। आपको यह सुझाव देना आवश्यक है कि आप इन वर्गों को गड्डमड्ड करके अध्ययन करने का प्रयत्न न करें। इनका सर्वथा पृथक् रूप में विच्छिन्न अध्ययन किया जाना चाहिए, उदाहरणतः मानव प्राणी का केवल जीव-विज्ञान के अन्तर्गत नही; बल्कि जीव-विज्ञान + मनोविज्ञान = द्वैध के रूप में अध्ययन किया जाना चाहिए; यहाँ तक कि मानव प्राणी की श्वासक्रिया, पोषणक्रिया, प्रजननक्रिया आदि को भी द्वैध परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने की नितान्त आवश्यकता है।

कुछ भूलें

विज्ञान के अध्ययन में कुछ सभावित भूलें ऐसी हैं, जिनसे सावधानीपूर्वक बचना चाहिए। उदाहरणतः प्रकृति को '*Material*', 'Phenomenal', 'Noumenal' और '*Spiritual*' भेदों में बांटकर उसका अध्ययन करना भूल होगी—प्रकृति एक है तथा अविभाज्य है। 'आध्यात्मिक' शब्द से कई बार बहुत बडा भ्रम उत्पन्न किया जाता है। बहुत-से

लोग इस शब्द का यथार्थ अर्थ नहीं समझते। उपनिषदों ने, प्लेटो ने, सूफियों ने तथा कुछ जर्मन दार्शनिकों रुडोल्फ स्टाइनर आदि ने इस सम्बन्ध में अनेक भ्रान्त धारणाओं को जन्म दिया है। विज्ञान का सही अध्ययन करने से उनकी भ्रान्त धारणाओ और मिथ्या कल्पनाओं से छुटकारा मिल जाता है।

किन्तु भौतिक विज्ञान एवं रसायन-शास्त्र के सभी नियमों को—वनस्पति-जगत्, जीव-जगत् तथा मानव-जगत्—इन तीनो पर लागू करने का प्रयत्न करना नितान्त मूर्खता होगी। तथ्यों द्वारा यह सिद्ध होता है कि इस प्रकार की मनमानी प्रक्रिया गलत है। हमें लावेल के साथ सहमत होने के लिए बाध्य होना पड़ता है कि—

"जीवन के आधार,
रासायनिक परीक्षण से परे हैं"
("Life's bases rest
Beyond the probe of chemical test.")

प्रत्येक विज्ञान का अपने-अपने क्षेत्र में शासन होना चाहिए। तत्सम्बन्धी किसी भी तथ्य की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए; न उसे तोड़ा-मरोड़ा जाना चाहिए और न उसकी गलत व्याख्या की जानी चाहिए। जे० लोयेव आदि दार्शनिकों के मिथ्यावादों के बहकावे में आपको नहीं आना चाहिए, जो प्रकृति में केवल भौतिक जगत् तथा रासायनिक जगत् को ही स्वीकार करते हैं तथा जीव-विज्ञान तथा मनोविज्ञान संबंधी तथ्यों की सर्वथा उपेक्षा करते हैं। ई० ए० शेफर की धारणाएं भी भ्रान्त हैं। सर रे लैंकेस्टर ने भौतिक विज्ञान को ही एकमात्र प्रमुख विज्ञान स्वीकार किया है; किन्तु यह उनका भ्रम है।

यह कोशिश भी मूर्खतापूर्ण होगी कि प्रत्येक रासायनिक सिद्धान्त को जीव-विज्ञान पर और इसी प्रकार दूसरे विज्ञानों पर लागू किया जाए। विज्ञान की प्रत्येक शाखा अपने विशिष्ट जगत् पर विचार करती है और अपने जगत् के बारे मे, अन्यो के सामान्य नियमों के अलावा, कुछ अन्य विशिष्ट नियमो की खोज करती है। उन सब विज्ञान-शाखाओं के नियम और सिद्धान्त भले ही परस्पर कुछ न कुछ सम्बन्ध रखते है; किन्तु उन सबको एक ही में गड्डमड्ड कर देना अनुचित होगा।

विज्ञान केवल मूर्त पदार्थ जगत् पर विचार करता है और वह अस्पष्ट रहस्यवादी (अज्ञातवादी) नियमों, कानूनो और सिद्धान्तों को अस्वीकार करता है। वह उन्ही तथ्यों को स्वीकार करता है, जिन्हें प्रत्यक्ष

कर लेता है।

एक पशु केवल यन्त्र (Machine) नहीं है। एक उड़ता हुआ पक्षी उड़नशील यन्त्र से कुछ अधिक है, क्योंकि यह सजीव प्राणी है, जिसमें वातनाडी संस्थान विद्यमान है। एक चींटी या कीड़ा जब पर्वत से नीचे उतर रहे हो तो उन्हें एक लुढ़कते हुए पत्थर के टुकड़े के समान नहीं माना जा सकता। इसीलिए प्राकृतिक जगत् का अध्ययन पांच वर्गों में पृथक्-पृथक् करना ही उचित विधि होगी।

आप मिथ्या दन्तकथाओं, मूढ़ विश्वासों, गलत एवं हानिकारक रूढ़ियों, भेड़ाचाल और आंख मूंदकर किसी बात को स्वीकार कर लेने की भूल से अपने को बचाइए। वैज्ञानिक दृष्टिकोण इसी का नाम है। आप बर्गसां, ग्रैण्डजीन, ले राय, विल्बोइस, बर्जेल्लास, इगे, रुडोल्फ तथा स्टेइनर इत्यादि की गलत धारणाओं से बचिए। ये विज्ञान का नाम लेकर बहुत-सा भ्रम प्रसारित कर गए है।

सिद्धान्तवाद (Metaphysics) के अध्ययन और उस पर विश्वास करने से जीवन दुर्बल बनता है, मन विकृत होता है, आत्मा कुचली जाती है। इसका तो अवश्य ही खंडन किया जाना चाहिए। इस मतवाद ने अनेकों समाजों तथा सभ्यताओं को नष्ट किया है। समस्त विश्व के पदार्थ को उपरोक्त पांच भागों में पृथक्-पृथक् विभक्त करके अध्ययन द्वारा, तत्सम्बन्धी नियमों के अध्ययन द्वारा—इस सिद्धान्तवाद से हमारा पिंड छूट सकता है।

3
इतिहास-ज्ञान

आपको इतिहास का अध्ययन अवश्य करना चाहिए, जिससे अपने समय से संबंधित उन तथ्यों को जान सकें, जो अतीत मानव के अनुभव में आए है और आपको पता चल सके कि मानव-जाति ने क्या-क्या कार्य किए हैं। आपको उनका दार्शनिक अर्थ भी समझने की चेष्टा करनी चाहिए। एक व्यक्ति के रूप में आप सर्वथा सीमित हैं। आपका व्यक्तिगत जीवन केवल कुछ ही वर्ष पूर्व आरम्भ हुआ है। मानव-इतिहास तथा प्रागैतिहासिक काल की तुलना में आप एक सूक्ष्म जीव हैं, जो पैदा होता है और मर जाता है। आप अपने इर्दगिर्द के वातावरण पर दृष्टिपात करते है तो पदार्थों तथा व्यक्तियों से कुछ न कुछ सीखते हैं; किन्तु एक ऐसा अनुभवों का विशाल भंडार है, जो आपको केवल इतिहास में से ही प्राप्त हो सकता है। यह अद्भुत अलादीन का चिराग मानवता के बहुमूल्य भंडार से भरा पड़ा है, जिसे मानव विगत पाच सौ शताब्दियों में अथवा उससे भी अधिक काल से निरन्तर भरता चला आ रहा है। आप सभी अतीत युगों के 'उत्तराधिकारी' हैं। ऐसा अधिकार आपको केवल जन्म द्वारा प्राप्त हुआ है और किसी कानून या वसीयत द्वारा नहीं मिला। जिस समय आप इतिहास और पुरातत्त्व का अध्ययन करते है, तभी आप अपने उस उत्तराधिकार की मांग करते हैं। एक व्यक्ति के रूप मे आप नगण्य है; किन्तु जब आप इतिहास द्वारा अपने अध्ययन को व्यापक और विस्तृत कर लेते हैं, तब—आप एक ऐसे वामन बन जाते हैं, जो दैत्य के कंधों पर खड़ा हो। आप अपने लघु जीवन मे बहुत कम देख सकते है, वस्तुत: बहुत ही कम। किन्तु यदि आप अपने मस्तिष्क के अस्तित्व को विगत युगो तक विस्तीर्ण कर लेते हैं, तो आप अपने दृष्टिकोण के क्षेत्र को व्यापक बना लेते है, इतना व्यापक कि जिसकी आप कभी कल्पना भी नही कर सकते थे। ऋग्वेद मे एक पुरुष की कल्पना की गई है, जिसके सहस्र सिर थे, सहस्र आंखें थीं

नाओं तथा चित्रकारों की कृतियों की सराहना की है। वह धर्म-मत कब और कैसे आरम्भ हुआ? वह राष्ट्र कब और कैसे बना? वह स्कूल और कालेज कैसे स्थापित हुआ? वह कवि या चित्रकार कब कहा हुआ? जब आप भोजन करते है, या दूध पीते है, या घुडसवारी करते है, या एक पत्र लिखते है, या अपनी घड़ी देखते हैं, अथवा सप्ताह के सात वासरों की चर्चा करते है, या रविवार के प्रभातकाल मे बिस्तर में लेटे होते है, तब संभवत: आप भूल जाते हैं कि इन सभी वरदानों के लिए, इन सुखों और सुविधाओं के लिए अज्ञात, अविदित मानवों के ऋणी हैं, जो पृथ्वी के विभिन्न भागों मे उत्पन्न हुए और मरे। आपके नेयोलिथिक पूर्वज अब तक आपके लिए प्रातराश प्रस्तुत कर रहे हैं। आपके मिस्र, बेबीलोनिया तथा फीनिशिया-वासी पूर्वज आपको बता रहे हैं कि प्रिया को अपना सन्देशा आप पत्र द्वारा प्रेषित कर सकते है। आप एक प्रज्ञाशील नागरिक नही बन सकते, जब तक आप यह न जान लें कि वर्तमान सभ्यता के विभिन्न अंगों का कब, कहा और कैसे विकास हुआ। इतिहास ही वास्तविक नागरिकता की नीव है, जिसके बिना सच्चा नीतिज्ञान जानना असंभव है।

(3) इसके सिवा, इतिहास द्वारा मानव-स्वभाव पर भी प्रकाश डाला जाता है। इतिहास ही मनोविज्ञान का सम्मानित सहयोगी है। इतिहास मे सत्य बहुधा काल्पनिक कथा से अधिक विचित्र होता है। यदि आप इतिहास द्वारा उद्घाटित अद्भुत दृश्यावली से अपरिचित हैं, तो आपको मानव-स्वभाव की शक्तियों का ज्ञान नही हो सकता और तब आप मानव के महान् पर्वत जैसे उत्थान तथा पाताल तक पतन से अपरिचित ही रह जाते हैं। दांते तथा शेक्सपीयर ने मानव-स्वभाव में गहरी डुबकी लगाई; किन्तु हजारों दाते और शेक्सपीयर मानव-स्वभाव की विविधता की थाह नही पा सके, जिनका ज्ञान इतिहास के अध्ययन से होता है। प्रेम और घृणा, दया और निर्दयता, लोभ और त्याग, महत्वाकांक्षा और नम्रता, कायरता और वीरता आदि भाव इतिहास की टेढ़ी-मेढी उलझी तहों में हमें अपने उच्चतम तथा निम्नतम रूप मे देखने को मिलता है। तब आपको विदित होता है कि वास्तव मे मानव, भयंकर रूप में तथा अद्भुत रूप में विश्व का गौरव, उपहास और पहेली है।

(4) आपके व्यक्तिगत जीवन में आपके भूतकालीन अनुभव आपकी सहायता करते हैं, उन अनुभवों के आधार पर आप आगे बुद्धिमत्ता-पूर्वक कार्य करते हैं। आप कुछ मित्रों पर भरोसा करते हैं, अपने वचन को पूरा करते हैं, उधार लेने से बचते हैं, राजनीतिज्ञों तथा पुरोहितों के

चंगुल में फसने से बचते हैं, अपने मकान का बीमा कराते हैं, किसी से प्रेम करने से डरते हैं—ठीक उसी प्रकार, समस्त मानव-जाति के अनुभव भी आपका मार्गदर्शन कर सकते हैं और आज की जटिल समस्या का कोई समाधान खोजने में सहायता कर सकते हैं। मानव-जाति ने शायद चिरन्तन स्थिर रहने वाले बहुत कम सत्यों का पता लगाया है, जो देश-कालातीत हों; किन्तु उनका भी ज्ञान मानव को अनेक परीक्षणों तथा त्रुटियों के बाद हुआ है। किन्तु ज्ञान और बुद्धि के लिए सदा अतीत की ओर देखने से बचिए। प्रकृति ने आपकी आंखें आपके सिर पर पीठ की ओर नहीं बनाईं। कुछ लोग कहते हैं—"इस सूर्य के प्रकाश में कुछ भी नया नहीं है।" और कई लोग यह कहते हैं कि "इतिहास अपने को दोहराता है।" किन्तु सत्य तो यह है कि प्रत्येक दिन, प्रत्येक घंटा, नहीं नहीं प्रत्येक मिनट और प्रत्येक क्षण नवीन निर्माण करता है, नई रचना करता है।

आपको इतिहास से बहुत कुछ सीखना है। किन्तु यह कभी मत भूलिए कि प्रत्येक नर तथा नारी को नवीन इतिहास का भी निर्माण करना है, अपने रचनात्मक मन-मस्तिष्क से उन्होंने नया इतिहास बनाना है। बोलिंगब्रुक ने इतिहास की जो परिभाषा दी है, उसे स्वीकार कीजिए—"उदाहरण देकर दर्शनशास्त्र का अध्यापन।" किन्तु स्मरण रखिए, यह अपूर्ण दर्शन है, जिसे हमने अपने विचारों तथा जीवित वर्तमान से पूर्ण बनाना है। आगस्त कोम्टे ने कहा है—"मृत मानव जीवितों पर राज्य करते हैं।" किन्तु यदि यह सत्य होता, तो जीवन एक नितान्त दुःखान्त नाटक होता। सौभाग्य से, मृत मानव केवल जीने में हमारी सहायता करते हैं; क्योंकि हम उन्हीं की सन्तान हैं, वे जीने में हमारी सहायता करते हैं, हम पर शासन नहीं करते। आप अतीत में से अपने लिए घड़े-घड़ाये, कटे-कटाए तैयार उपदेश और आदर्श प्राप्त नहीं कर सकते। आप केवल सामान्य विचारों और सिद्धान्तों को देखकर अपने लिए निष्कर्ष निकाल सकते हैं। मैं लाभार्टाइन्स की इस उक्ति से सहमत नहीं हूं—"इतिहास से सब कुछ जाना जा सकता है, यहां तक कि भविष्य भी।" इतिहास उस तरह से पूर्व-दृष्टि तथा पूर्व-ज्ञान नहीं प्रदान कर सकता, जिस प्रकार कि भौतिक विज्ञान अथवा रसायन-शास्त्र से प्राप्त हो सकता है। उन अति-प्रशंसक भाषणकर्ताओं से सावधान रहिए, जो आपको धर्म या राजनीति में नवीन साहस-कार्यों से रोकते हैं। कोई बात पेरू, रोम या मैसोपोटामिया में कभी हुई तो यह आवश्यक नहीं कि भविष्य में भी होगी और कोई बात नहीं हुई तो यह आवश्यक नहीं कि भविष्य में भी नहीं होगी।

(5) सामाजिक स्वस्थता तथा शक्ति प्रदान करने में इतिहास अचूक

है। वह हमें सदाचार की प्रेरणा देता है। अतीत के वृत्तान्तों को कई महान् नर-नारियों ने अपने व्यावहारिक जीवन मे उतारने का प्रयत्न किया है। इतिहास से हमें चारित्रिक शक्ति बढ़ाने वाले 'टानिक' की प्राप्ति होती है। इस इतिहास रूपी टानिक का प्रयोग सभी पीढ़ियों को करते रहना चाहिए, नही तो उनका दृष्टिकोण संकुचित हो जाएगा और मस्तिष्क दुर्बल। इतिहास द्वारा हमें धर्म, राजनीति, कला तथा विज्ञान के उन पावन आन्दोलनो का परिचय मिलता है। हमें यह ज्ञान होता है, मानव ने इन क्षेत्रो में विजय प्राप्त करने के लिए त्याग और बलिदान रूपी मूल्य चुकाया। यह एक रहस्यपूर्ण नियम है कि बलिदान किए बिना कोई प्रगति नही होती। कुछ नर-नारियों को बलिदानी वीर की मृत्यु वरण करनी पड़ती है, कुछ लोगों को अपने जीवन को खतरे में डालना पड़ता है, कुछ एक को अकथनीय कष्ट सहन करना पड़ता है और कुछ एक को अनेक निर्दय संयम और नियमो का पालन करना पड़ता है, कुछ एक को भूख और प्यास, सर्दी और थकान झेलनी पड़ती है, सुख और आराम को तिलांजलि देनी पड़ती है, अत्याचार और जेल भोगना पड़ता है, देश-निकाला—तब जाकर किसी ऐसे तथ्य की खोज होती है, जो मानवमात्र के ज्ञान और सद्गुणों को ऊंचा उठा देता है। इतिहास के मानव-सागर मे से चुने हुए इन तीन प्रकार के मोतियों का वर्णन मिलता है—शहीद, तपस्वी और शूरवीर। गेटे ने सत्य ही कहा है—"इतिहास से हमें सर्वोत्तम वस्तु यह मिली है कि वह हममे उत्साह भरता है।" आत्मबलिदान की भावना अमर है। यह देश-काल का परिहास करती है—देश-कालातीत है। यह भावना जाति, रंगभेद की सीमा लांघ जाती है। जीसस एक यहूदी था, जिसने दो हजार वर्ष पूर्व उपदेश दिया और मारा गया। किन्तु यूरोप, एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया ने उसकी इस गौरवपूर्ण मृत्यु को उसके नाम पर गले लगाया। उसके आदर्शों को अपना लिया। गौतम बुद्ध प्राचीन भारत का एक घूमता-फिरता उपदेशक था, किन्तु हजारों भिक्षु तथा साधारण जन चीन, जापान, और तिब्बत मे उसके उपदेशों से प्रभावित हुए। यह उसके व्यक्तित्व का जादू ही था। इटली में पिट्रार्क ने एक मशाल जलाई, और उस मशाल ने शीघ्र ही सारे यूरोप में उजाला कर दिया। सैंकड़ों लोगों ने उसके प्रकाश को फैलाने और मध्ययुग के अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिए असंख्य कष्ट सहे। होली ट्रिनिटी, कंबोडिया और श्रीलंका के पवित्र पगोडा मे हम क्यों सिर झुकाते हैं? त्याग और बलिदान ही इसमे मूल प्रेरक शक्ति है। मिस्र की ममियां केवल शरीर को सुरक्षित रखती हैं, उसमे केवल व्यक्ति का ढंग ढांचा ही

रहता है; किन्तु इतिहास द्वारा मानवता का कल्याण करने वाले प्रत्येक महान् पुरुष के मस्तिष्क तथा उसकी आत्मा की रक्षा की जाती है।

इतिहास के अध्ययन की शुद्ध विधि

इतिहास के अध्ययन की शुद्ध विधि अवश्य जाननी चाहिए। इतिहास एक तेज धार वाला उस्तरा है, यदि आप इसे कुशलता से पकड़ते हैं तो यह आपकी सहायता करता है, आप इससे निर्मल तथा आकर्षक प्रतीत होते हैं, किन्तु जरा-सी असावधानी बरतने पर यह आपके चर्म को यहा तक कि आपके गले को भी काट देता है। सभी चर्च, राजनैतिक दल, और राष्ट्रीय शासन इतिहास का बुरा प्रयोग करते हैं, वे इतिहास के साथ दुर्व्यवहार करते हैं और इसे गलत ढग से पढाते हैं, क्योंकि वे बच्चो को कट्टरपंथी कठमुल्ला, खतरनाक देशभक्त बनाते हैं। इतिहास में ऐसी विराट् शक्ति है कि वह चाहे तो किसी के व्यक्तित्व को महान बना दे और चाहे तो उसके चरित्र को भ्रष्ट कर दे। इतिहास वरदान भी हो सकता है और अभिशाप भी। परिणाम इसके सत्प्रयोग या दुष्प्रयोग पर निर्भर है।

(1) इतिहास को सम्पूर्ण सभ्यता के जन्म और विकास का लेखा-जोखा मानना चाहिए। इतिहास का अध्ययन करते हुए तमाम मनुष्य-जाति को एक घटक (Unit) समझिए। सम्पूर्ण मानव-जाति को 'एक' समझिए। आपके लिए इतिहास का केन्द्रीय विषय 'सम्पूर्ण मानव-जाति' से कम नही होना चाहिए। स्पष्ट समझ लीजिए कि मानवता एक तथा अविभाज्य है। मानवता और इतिहास को कभी एक-दूसरे से पृथक् नही किया जा सकता।

(2) आप उन भयकर पथप्रदर्शकों का कभी अनुकरण न करें कि 'इतिहास का अर्थ है, यूरोप का इतिहास' और इससे अधिक कुछ नही। यह बड़ा विचित्र तथा दु खदायी अनुभव है कि किस प्रकार कई सुशिक्षित विद्वान अब तक भी इतिहास को यूरोप तक ही सीमित समझते और बताते हैं। यूरोप का इतिहास, इतिहास का एक अंग है, न कि सम्पूर्ण शरीर। यूरोप के इतिहास को तीन भागो मे विभक्त किया जा सकता है—प्राचीन, मध्ययुगीन तथा आधुनिक। किन्तु उसे 'विश्व का इतिहास' कदापि नही कहा जा सकता। खेद की बात है कि कुछ इतिहासकार कुछ पृष्ठ चीन, जापान, फारिस और हिन्दुस्तान को देने के उपरान्त शेष सारा जोर यूरोप पर लगा देते है और यूरोप की घटनाओं का विस्तृत वृत्तान्त प्रस्तुत करते हैं। यह बुद्धिहीनता की बात है कि एक भाग को ही समस्त विश्व समझ लिया गया।

(3) बहुत-से विद्वानों ने इतिहास को 'राष्ट्रीय' टुकड़ों में काट-काटकर रख दिया है। उन्होंने विद्वत्तापूर्ण बृहत् ग्रन्थ इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी, अलबानिया, आरमीनिया और ईराक आदि पर लिख डाले हैं। किन्तु वे लोग इतिहास के निर्दय हत्यारे हैं। यह दुर्भाग्य है कि मानव-जाति अनेक 'राष्ट्रों' में विभक्त हो चुकी है; किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि ये राजनैतिक अस्थायी दीवारें इतिहास के राज्य में खड़ी कर दी जाएं। कांट का महान् विचार 'विश्व इतिहास' विगत शताब्दी में भुला दिया गया है। घोर राष्ट्रवाद पवित्र इतिहास के भी टुकड़े करना चाहता है, और इतिहास रूपी शरीर के टुकड़ों (अंगों) से वे अपना-अपना राष्ट्र-शरीर सजाना चाहते हैं; परन्तु इससे उनकी शोभावृद्धि नहीं होगी। घोर राष्ट्रवादी राज्य अपने तरुणों के मस्तिष्क को विषाक्त कर देगा; किन्तु जो वैज्ञानिक इतिहासकार होगा—जो घोर राष्ट्रवाद से निरपेक्ष होगा, वह अवश्य सच्चा इतिहास पढ़ाएगा और लिखेगा। मानव ! सावधान ! तूने इतिहास के खण्ड-खण्ड कर दिए हैं, अब तू भी चैन की नींद न सो सकेगा। एक संकीर्ण 'राष्ट्रवादी' इतिहासकार धार्मिक, राजनैतिक, बौद्धिक आन्दोलनों का सही अर्थ नहीं बता सकता, जो उसके देश में एका-एक फूट पड़े।

(4) कुछ महान इतिहासकारों ने, उदाहरणतः रांके, ड्रोयसेन, मारेन-ब्रेचर तथा फ्रीमैन ने एक नया सिद्धान्त निकाला—'इतिहास अतीत राजनीति है'। उनकी यह शिक्षा है कि इतिहास केवल राज्यों के उत्थान-पतन की कहानी है और उसका विषय सभ्यता—फिलासफी, कला, साहित्य, दस्तकारी, व्यापार, इत्यादि नहीं। जिस इतिहास में इस प्रकार राज्य-सम्बन्धी उथल-पुथल को गौरव प्रदान किया गया हो और सभ्यता के अन्य अंगों की तरफ से आंख मूंद ली गई हो, उसमें केवल युद्धों के वर्णन, समझौते, संविधान, कानून, राजविद्रोह तथा अन्य राज-नैतिक घटना-समूह ही जड़ा हुआ होगा। वह इतिहास एकांगी है। उपर्युक्त बातें इतिहास के बाह्य आकार मात्र की रचना करती हैं न कि सम्पूर्ण इतिहास की। जे० आर० सीले ने कहा है—"इतिहास राज-नीति का व्याख्या है। राजनैतिक वर्ग, या सगठन, राष्ट्र इत्यादि ही उसके अध्ययन का विषय है।" किन्तु यह एक पथभ्रष्ट करने वाला तथा विचार-हीन सिद्धान्त है। संकीर्णता इतिहास-ज्ञान 'बद्ध' बना देती है, यह मानव-सक्रियता के केवल एक ही पक्ष पर प्रकाश डालती है। यह ठीक है कि 'राज्य' महत्त्वपूर्ण है, किन्तु यही एकमात्र महत्त्वपूर्ण नहीं है। किन्हीं परिवर्तनों में राजनैतिक घटनाएं निर्णायक होती हैं, उनमें राजनैतिक

उथल-पुथल को रंगमंच के मध्य भाग पर विराजमान होने का पूर्ण अधिकार है; किन्तु अन्य परिवर्तनों में धर्म, कला, साहित्य, विज्ञान अथवा अर्थशास्त्र सर्वोपरि प्रभावशाली होते है, अतः उन अंशों में इतिहास को उनका बखान अवश्य करना चाहिए। इटैलियन पुनर्जागरण की महान् कला अधिक महत्त्वपूर्ण है, न कि तत्कालीन राजनैतिक षड्यन्त्र। ईसा की 13वीं शताब्दी में यूरोप इसलिए गौरवपूर्ण हुआ कि उसमें विश्वविद्यालय तथा फ्रायर्स खोले गए, न कि इसलिए कि राजनैतिक घटनाओं के कारण। चीन मे त'आंग वंश कविता तथा कला के कारण स्मरण किया जाता है, किन्तु राजनैतिक दृष्टि से इस काल में कोई बड़ी घटनाएं नहीं हुईं। इतिहास के लिए कौन अधिक महत्त्वपूर्ण था—ईसामसीह या टिबेरियस ? बुद्ध अथवा अजातशत्रु ? डारविन या ग्लैडस्टन ? आगस्ट कोम्टे या नैपोलियन III ? गेटे या ड्यूक आफ वैमार ? इससे यह स्पष्ट है कि यह आवश्यक नही कि प्रत्येक काल का राजनैतिक इतिहास तत्कालीन मानव की सबसे महत्त्वपूर्ण सक्रियता हो, संभव है किसी अन्य विषय मे किसी काल का महत्त्व हो और संभव है तत्कालीन राज्य एक ठूंठ की तरह निष्क्रिय शक्ति रही हो और धर्म, साहित्य संगम या व्यापार मंडल ही मानव-जीवन की धमनियों मे फड़क रहा हो। संभव है उस काल में राज्य को 'इतिहास' मे मूसे का काम करना पड़े और वास्तविक अन्न का काम मानवता के किसी और विषय को मिले। लावेल में हमे चेतावनी दी है—"मनुष्य संविधानों से कुछ अधिक है।" इतिहास, राजनीति से बहुत कुछ अधिक है। इतिहास अपने को केवल अतीत राजनीति से ही क्यों बांध ले ? इतिहास केवल राजनीतिज्ञों का कालयापन या मनोरंजन नही है। यह तो उस सबका रिकार्ड है कि मानव ने क्या सोचा है, क्या किया है, कितना साहस दिखाया है और कितने कष्ट उठाए हैं। मानव केवल एक 'प्रजा' या 'मतदाता' ही नही है, वह एक पिता या माता, जीविकोपार्जन करनेवाला, एक कला-प्रेमी और एक विचारक भी है। अतः मानव के समूचे कार्यसमूह की जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए तथा उसकी आलोचना तथा सराहना की जानी चाहिए।

इतिहास का नवनीत

सामान्यतः सर्वप्रथम आप विश्व-इतिहास पर अनेक उत्तम पुस्तकों का अध्ययन करें। इसके अनन्तर आप निम्नलिखित कालों, आन्दोलनों तथा महान् व्यक्तियों पर अपना ध्यान विशेष रूप से केन्द्रित करें—

(1) प्राचीन मिस्र, मूर्तिकला तथा स्थापत्यकला।

(2) अखेनातून : उसकी जीवनी तथा रचनाएं।
(3) फारस तथा हेल्लास के मध्य युद्ध।
(4) यूनानी प्रजातन्त्र तथा समाजवाद।
(5) यूनानी दर्शनशास्त्र थलेस से प्लेटिनस तक।
(6) यूनानी कला (मूर्तिकला तथा स्थापत्यकला)।
(7) होमर का 'ओडेस्सी' महाकाव्य।
(8) यूनानी दुःखान्त नाटक (एस्कीलस, सोफोकिल्स, यूरिपिडस)।
(9) सिकन्दरिया के वैज्ञानिक तथा विद्वान् (ई० पू० तृतीय शताब्दी)।
(10) हिब्रू धर्म-प्रवर्तक।
(11) ईसाई चर्च का आरम्भ तथा विकास : इसके शहीद तथा सन्त।
(12) जोसेस्तर तथा जोसेस्तरवाद का उत्थान।
(13) बुद्ध और भारत में बुद्ध मत। सम्राट् अशोक। जैनमत।
(14) नागार्जुन तथा महायान। गान्धार शिल्प (स्थापत्यकला)।
(15) कन्फ्यूशियस, मेन्शियस तथा उनके आन्दोलन। लाओ-त्से तथा ताओवाद।
(16) रोम का आरम्भिक इतिहास। प्रजातन्त्र और गणतन्त्रवाद।
(17) रोम में वर्ग-संघर्ष।
(18) जस्टिनियन का शासन। रोमन कानून। बाइज़ेन्टाइन कला।
(19) मिस्र में मोनास्टिसिज्म का उत्थान। सेंट बासिल और सेंट बेनेडिक्ट।
(20) यूरोप में ईसाई-मत का प्रसार। आयरिश सन्त तथा विद्वान्।
(21) सेंट फ्रांसिस और उसका संप्रदाय। आध्यात्मिक फायर्स।
(22) मुहम्मद और इस्लाम का आरम्भ।
(23) इस्लाम-पुनर्जागरण; मुस्लिम फलसफ़ा तथा विज्ञान।
(24) सूफीमत तथा उसके सन्त।
(25) दरवेश सम्प्रदाय।
(26) फारसी की डिडैक्टिक कविता।
(27) चीन का त' आंग राजवंश। बुद्ध मत का प्रसार। चीनी चित्रकला।
(28) भारत मे गुप्त साम्राज्य। भारतीय साहित्य तथा कला। रामायण।
(29) फारस में सासानी काल।

(30) बाइजेन्टाइन साम्राज्य में पुनर्जागरण (ई० की नवीं शती)। फोटियस और अरेयास।

(31) यूरोप में आरम्भिक जागरण।

(32) लम्बार्डी के कम्यूनों तथा सम्राट में युद्ध।

(33) इटली तथा यूरोप में महान् पुनर्जागरण। नए स्कूल-कालेज। फ्लोरेंस में प्रजातन्त्र। इटली की चित्रकला, मूर्तिकला तथा स्थापत्यकला।

(34) उत्तर भारत के वैष्णव सन्त। सुधारक। आधुनिक हिन्दू संप्रदाय। तमिल सन्त।

(35) चीन के बौद्ध धर्म गुरु तथा जापान : उनके संप्रदाय और मत। जापानी स्थापत्यकला।

(36) चीन में सुंग दार्शनिक।

(37) केप आव गुड होप की खोज और अमेरिका। कोलंबिया।

(38) प्रोटेस्टेंट सुधारवाद। लूथर, कालविन, ज्विग्ली, अनाबेपटिस्ट, प्यूरिटन्स, सोशिनियन्स, इंग्लेंड तथा अमेरिका में नॉनकान्फर्मिस्ट। गुस्तावस अडोलफस। डच स्वाधीनता युद्ध।

(39) भारत का मुगलों के विरुद्ध स्वतन्त्रता-युद्ध। मुगल तथा राजपूत चित्रकला। उत्तर भारत में मुगल स्थापत्यकला। दक्षिण भारत में हिन्दू स्थापत्यकला।

(40) यूरोप तथा अमेरिका में विज्ञान की प्रगति।

(41) जर्मन संगीत—बाख से वेगनर तक।

(42) आधुनिक अंग्रेज़ी कविता। फ्रेंच दु:खान्त नाटक तथा सुखान्त नाटक। जर्मन नाटक, गीत, लघुकथाएं। रूसी उपन्यास तथा बैले। फ्रांसीसी तथा ब्रिटिश प्रकृति-दृश्य चित्रकार।

(43) आधुनिक प्रजातन्त्र। अंग्रेजी, अमेरिकन तथा फ्रेंच क्रान्तियां। यूरोपियन तथा दक्षिणी अमेरिकन राष्ट्रीय आन्दोलन। संसदें, दासता का अन्त।

(44) यूरोप में समाजवाद। रूसी क्रान्ति। पैराग्वे में जेसुइस्ट। उत्तरी अमेरिका की कम्यूनिस्ट आबादियां।

(45) आधुनिक दर्शनशास्त्र तथा धर्म। पोज़िटिविज़म। स्पिनोज़ा। स्पेंसर। मुक्तविचार तथा नैतिक आन्दोलन (यूरोप तथा अमेरिका में)। थियासोफी। ब्रह्मसमाज। बहाई मत। क्रमोटो (जापान में)।

(46) शान्ति आन्दोलन। एस्पेरांटो। लीग ऑव नेशन्स।

उपर्युक्त वास्तव में आवश्यक तथा ज्ञान-वर्धक काल तथा आन्दोलन हैं यदि आप अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए इतिहास का मक्खन निकाल

लेना चाहते हैं तो उपर्युक्त विषयों पर अपना ध्यान विशेष रूप से केन्द्रित करें।

इतिहास से कुछ सबक

यदि आप उपर्युक्त विधि से इतिहास का अध्ययन करेंगे, तो आपको कुछ आवश्यक तथा लाभदायक सबक मिलेंगे।

(1) आप महाकवि गेटे के विश्व मानवता पर विश्वास करने वाले बन जाएंगे। गेटे ने कहा है—"सभी राष्ट्रों से ऊपर मानवता महत्त्वपूर्ण है।" मानव-जाति की एकता तब आपके मन में सूर्य के प्रकाश की भांति प्रकाशमान होने लगेगी और आप तुच्छ घृणा के कीटाणुओं का विनाश करेंगे, जो इस प्रकार के विघातक रोगों को पैदा करते हैं, 'संकीर्ण राष्ट्रीयता' तथा जाति-अभिमान। कांट ने यह सिखाया है कि विश्व-इतिहास के अध्ययन से हममें यह योग्यता आनी चाहिए कि मानवजाति की एकता के दर्शन कर सकें। टेनीसन ने यह आशा प्रकट की है कि विश्वमानवता की भावना का परिणाम एक दिन 'मानव-संसद तथा समस्त संसार की एक फेडरेशन' में होगा। इतिहास आप पर यह प्रकट करता है कि किस प्रकार सभी देशों तथा जातियों ने असंख्य कष्ट झेलकर सुदीर्घ अवधि में प्रकृति पर विजय प्राप्त करने में, बुराइयों को मिटाने में, और समाज तथा व्यक्ति को सुधारने में अथक प्रयत्न किया है। इतिहास यह भी प्रमाणित करता है कि सभी जातियां तथा राष्ट्र एक-दूसरे पर आश्रित हैं। यूनानियों ने बहुत कुछ मिस्रियों से सीखा, और रोमन्स ने यूनानियों से सीखा। चीनियों तथा हिन्दुओं ने एक-दूसरे से बहुत आदान-प्रदान किया। मुसलमान पहले यूनान तथा भारत के शिष्य थे, बाद में वे यूरोप के गुरु बन गए। आधुनिक यूरोपियन अपरिमित रूप से यूनान, रोम तथा इस्लाम के ऋणी हैं। हम पुनर्जागरण के लिए इटली के ऋणी हैं, सुधारवाद के लिए जर्मनी के ऋणी हैं, और फ्रांस के जन-क्रान्ति तथा पोज़िटिविज़्म आदि के कारण ऋणी हैं। अतीत काल में जातियां तथा राष्ट्र रक्त-सम्मिश्रण के द्वारा फलते-फूलते रहे हैं। भारत में आर्यों तथा आदिमवासियों का रक्त-मिश्रण हुआ। इटली में एट्रुस्कन्स तथा रोमन्स का हुआ, स्पेन में अरबों तथा स्पेनियों का हुआ, इंग्लैंड में कैल्ट्स तथा ट्यूटन्स का हुआ, प्रशिया में स्लाव्स तथा ट्यूटन्स का हुआ, ब्राज़ील में यूरोपियनों तथा अमेरिकनों का हुआ, इत्यादि। इतिहासकार टैरेन्स के साथ उल्लासपूर्वक चिल्ला उठता है, "मैं एक मानव हूं और मानव-संबंधी कोई चीज़ मेरे लिए विदेशी नहीं है।"

इस प्रकार, विश्व-इतिहास के अध्ययन से आपका बौद्धिक अदूरदृष्टि रोग नष्ट हो जाएगा, जिससे कुछ कट्टर राष्ट्रवादी देशभक्त तथा जातिवादी दार्शनिक रुग्ण हैं। वे केवल मानवता के एक अंश को ही देखने मे समर्थ हैं, उसके समग्र रूप को नही। वे केवल छोटे-से देश के ही गुणगान करना पसंद करते है, या अधिक से अधिक देशों के एक समूह के अथवा किसी एक ही जाति के। वे अतिरंजित विचारो के जाल मे उलझ गए है, और उनकी उदारता यही तक जाती है कि वे सिद्ध कर सकें कोई राष्ट्र अतीत मे, महान् रहा है, वर्तमान में है या भविष्य मे होगा और वह अन्य सबसे श्रेष्ठ होगा, अथवा किसी राष्ट्र ने सभ्यता के विकास में अन्य सभी से कही अधिक योगदान किया है। उनमे से कुछ तो वास्तव मे सस्कृति पर अपना एकाधिकार मानते हैं और उसे किसी एक राष्ट्र या जाति की देन मानते है। ऐसा भद्दा और हास्यास्पद गर्वरोग वस्तुतः आध्यात्मिक पतन का चिह्न है। 'राष्ट्र के पुजारी' तथा 'जातिवादी' दयनीय मस्तिष्क रोग के शिकार है। इसी रोग से ग्रस्त जे० मिचलेट ने घोषणा की थी—"तर्क तथा इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि मेरा गौरवपूर्ण राष्ट्र अब तक मानवता के जलयान का नाविक रहा है। इस निर्णय पर पहुचने मे मुझे राष्ट्रवाद ने प्रभावित नही किया'''।" सच है एक पियक्कड़ सदा कसमें खाता है कि उसने शराब नही पी रखी। एफ० पी० जी० गुइज़ोत ने लिखा—"अतएव, फ्रांस का सम्मान किया जाना चाहिए कि उसकी सभ्यता ने सभ्यता का पुनर्निर्माण, अन्य किसी भी राष्ट्र या जाति से अधिक ईमानदारी से किया है।" फिचे ने घोषणा की थी—"सस्कृति तथा विज्ञान की प्रगति जर्मनी पर आश्रित रहेगी।" एच० एस० चेम्बरलेन ने कहा—"ट्यूटन मानवता के चुने हुए लोग हैं।'''उत्तरी यूरोप के लोगों ने विश्व इतिहास का निर्माण किया है।" कुछ संकीर्ण जातिवादी यहां तक कहते हैं कि जीसस क्राइस्ट ट्यूटनिक मूल वंश का था। (लेकिन मूसा तथा कन्फ्यूशियस के बारे मे वे क्या कहेंगे?) कुछ अन्य हैं जो आर्यों की जयकार करेंगे तथा सेमिटिक्स को हीन बतायेंगे। वे भूल जाते हैं मिस्र तथा मेसोपोटामिया के संस्कृति में सेमेटिक अग्रणी थे और आर्य उनके शिष्य बने थे। एक हिन्दू ने अपनी पुस्तक का नाम ही 'हिन्दू सुपीरिआरिटी' रखा है। यह पुस्तक भारत को समर्पित करते हुए उन्होंने लिखा है—"भारत! तू धरती पर स्वर्ग है, तूने ही विश्व को सभ्यता तथा धर्म प्रदान किया है, चिरन्तन, अति नश्वर और अमर!" अंधी राष्ट्रवादी विचारधारा को इसी तरह की गीतोंवाली उक्तियां याद आती हैं। इस प्रकार के सभी इतिहासकार 'पागल प्रेमी' हैं। उनके

विचार 'कल्पनाओं का पुलिन्दा' हैं। वे केवल मानवता के एक भाग को ही प्रेम कर सकते हैं। साथियो, आओ, अब हम समूची मानवता को प्यार करना सीखें।

(2) इतिहास के अध्ययन से आप मरे हुओं के प्रति सहनशील तथा दयालु बन जाएंगे। सच्चा इतिहासकार सभी व्यक्तियों का अध्ययन उनके काल तथा वातावरण के परिप्रेक्ष्य में करता है, अपने उन्नत आदर्शों के मापदण्ड से नहीं। इस प्रकार, संभवत: आप भी यह सीख जाएंगे कि मृतकों के प्रति सहानुभूति, जो कि किये गए किसी आक्षेप का उत्तर देने में सर्वथा असमर्थ है।

(3) इतिहास के अध्ययन से आप भावनापूर्ण किन्तु विवेकी सुधारक बन जाएंगे। इतिहास आपको विश्वास करा देगा कि प्राचीन संस्थाओं में स्थायी मूल्य के सभी अंश अवश्य ही सुरक्षित रखे जाने चाहिए और प्रत्येक प्राचीन संस्था अथवा विचारधारा सर्वथा सड़ी-गली नहीं है। वह अच्छे-बुरे का सम्मिश्रण है। आप यह खोज करने में सफल होंगे कि ऐतिहासिक धर्मों तथा रीति-रिवाजों में क्या कुछ सराहनीय तथा संरक्षणीय है। आप सब एक मूढ़ विश्वासी अज्ञ की भांति आचरण नहीं करेंगे। साथ ही, आप समय-समय पर संस्थाओं में सुधार और संशोधन करने में विश्वास रखेंगे—"ताकि एक ही अच्छा रिवाज सारे संसार को भ्रष्टाचारी न बना दे।" आप निर्दयता और निर्भीकता से उन समस्त संस्थाओं को समाप्त कर देंगे या कुचल डालेंगे, जिनकी उपयोगिता अब नष्ट हो चुकी है, जिस प्रकार एक माली किसी वृक्ष की सड़ी-सूखी डालियों को काट-छांट देता है।

(4) आपको विश्वास हो जाएगा कि निम्नलिखित प्रस्ताव उचित हैं—

1. *व्यक्तिगत निरंकुश राज्य एक अभिशाप है।* विधान सभा (या संसद) द्वारा संचालित शासन, कुशासन का एकमात्र इलाज है। (उदाहरण—यूनान, रोम, भारत, इंग्लैंड, फ्रांस)।

2. एकेश्वरवाद से असहिष्णुता बढ़ती है। (उदाहरण—इस्लाम, ईसाई मत)।

3. अधिकतम व्यक्ति-स्वातन्त्र्य सभी प्रकार की प्रगति का मूल स्रोत है। (उदाहरण—एथेंस, इंग्लैंड, भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, स्कैंडेनेविया, स्विट्ज़रलैंड)।

4. ब्रह्मचर्य के नियम पर आधारित संगठित साधु-संघ हानिप्रद है। (उदाहरण—कैथोलिक मोनेस्ट्री तथा बौद्ध भिक्षु संघ)।

5. चुने हुए लोगों का शासन (Oligarchy) सदा ही अत्यन्त स्वार्थी तथा क्रूर होता है और यह अनन्त गृह-युद्ध को जन्म देता है। (जैसे— रोमन, फ्यूडल बैरन्स, फ्रेंच बुर्जुआ, जापानी ज़मींदार)।

6. नए आन्दोलनों के लिए त्याग तथा सादा जीवन अत्यावश्यक हैं। (उदाहरण—बुद्ध, ईसा मसीह, मुहम्मद, दयानन्द, मेज़िनी, कार्ल मार्क्स)।

7. कई बार प्रगति के हेतु आत्मबलिदान (शहादत) को वरण करना पड़ता है। (उदाहरण—सेंट स्टीफन, एटिएने डोलेट, वानिनी, फेरेर, तेग बहादुर, कुर्रत-अल-आइन)।

8. आर्थिक असमानता से अव्यवस्था फैलती है या प्रगति का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। (उदाहरण—पेरू, यूनान, फ्रांस, रूस)।

9. स्थायी सेनाएं जनता की स्वतन्त्रता के लिए संकट का कारण हैं। (उदाहरण—मुगल साम्राज्य, रूस, प्रूशिया, टर्की)।

10. बहुदेववाद, एकेश्वरवाद तथा परलोकवाद आदि विज्ञान तथा प्रगति के विरोधी हैं। (उदाहरण—पेरू, मिस्र, बैबीलोनिया, बाइजेन्टियम, भारत, इस्लाम, मध्ययुगीन यूरोप)।

11. महान् कला सदा महान् सामाजिक आदर्शों की सन्तान होती है। उदाहरण—पेरिक्लीन कला, गोथिक गिर्जे, बौद्ध स्थापत्यकला)।

12. विज्ञान की खोज को विधिवत् प्रोत्साहन देकर प्रकृति-विजय को बहुत सीमा तक साध्य बनाया जा सकता है। (उदाहरण—विगत शताब्दी में यूरोप)।

13. नेतागण चाहें तो जनता को आनन्द की ओर ले जा सकते हैं और चाहें तो सर्वनाश की ओर। (उदाहरण—थेमिस्टोक्लस, निसियास, सिकन्दर, क्रामवेल वाशिंगटन, नेपोलियन, चेथम, चार्ल्स द्वादश, बन्दा, खलीफा उमर, लेनिन)।

14. दृढ़निश्चयी सशस्त्र अल्पसंख्या नये धर्म, कानूनों तथा संस्थाओं को जनता पर बरबस ठूस सकती हैं। (उदाहरण—मुस्लिम फारस तथा कश्मीर में; इंग्लिश प्रोटेस्टेंट्स; बोलशेविक्स, फासिस्ट तथा इन्कास)।

15. योग्य एवं उत्साही व्यक्ति जनता का धोखे या बल से शोषण करेंगे, यदि उन्हें व्यक्तिगत आचरण के ऊंचे आदर्शों का प्रशिक्षण न दिया गया। प्रत्येक आन्दोलन से ढोंगी तथा परजीवी (Parasites) के टोले पैदा होने की संभावना होती है। आरम्भ में भले ही उस आन्दोलन के उद्देश्य कितने महान् हों। (उदाहरण—ईसाई पादरी, श्रमिक संघों के पदाधिकारी और समाजवादी नेता)।

16. साम्राज्यवाद सदा ही निर्दयता तथा अन्याय का जनक होता

है, इससे विजयी तथा पराजित दोनों ही पतन की ओर अग्रसर होते हैं। (उदाहरण—असीरिया, फारस, रोम, स्पेन)।

17. विभिन्न संस्कृतियों के संपर्क से प्रगति को प्रोत्साहन मिलता है। (उदाहरण—यूनानी, भारतीय तथा चीनी संस्कृति : मध्य एशिया में ; यूनानी तथा हिब्रू संस्कृति : रोमन साम्राज्य मे; रोमन तथा ईसाई संस्कृति : जोरस्थियन फारस मे ; मुस्लिम तथा भारतीय संस्कृति : अब्बासी साम्राज्य में; यूरोपियन, हिन्दू तथा इस्लामी संस्कृति : भारत मे)।

18. राजनैतिक मेलजोल तथा संयोग अनिवार्य हैं। (उदाहरण—इंग्लैंड में हेप्टार्की की समाप्ति; इग्लैंड और स्काटलैंड का संघ, जर्मन साम्राज्य; संयुक्त राज्य अमेरिका)।

इतिहास के सिद्धान्त

आप इतिहास के सभी धार्मिक (सांप्रदायिक), परलोक सिद्धान्तवादी तथा निराशावादी सिद्धांतों को मानने से इन्कार कर दें।

(1) 'इतिहास के दर्शन' में सेंट आगस्टाइन, ओरोसियस, तबारी; बोसुएट, वुचेज, रावाइस्सन-मोलियन, केशवचन्द्र सेन ने आस्तिकतावाद के सिद्धान्तों को आगे बढाया, इनमे समस्त ऐतिहासिक घटनाओं को 'ईश्वरेच्छा' और 'दैवेच्छा' स्वीकार किया गया है। इस प्रकार बोस्सुएट ने इतिहास को रोमन चर्च की स्थापना की भूमिका माना है। केशवचन्द्र सेन ने कहा है—"इतिहास ईश्वर का साक्षात्कार कराने वाली विद्या है, यह धर्म-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण बातों से भरी पड़ी है।" मैथ्यू आरनाल्ड ने इसी कल्पित विचार को कविता में प्रकट किया है, जिसका सार यह है—"ईश्वर ने चिट्ठियों का एक पुलिन्दा—इतिहास—मानव को सौंपा। मानव ने उन्हें कई गुना कार्य रूप मे परिणत करके—यूनान, रोम, इंग्लैंड; फ्रांस आदि का निर्माण किया।" इत्यादि।

इस प्रकार इन्होने इतिहास को एक कठपुतली का तमाशा बनाकर रख दिया है, जिसका सूत्र ईश्वर के हाथ में है और वह सबको अपनी इच्छा पर नचाता रहता है!

(2) जी० डब्ल्यू० एफ० हीगल, वी० कजिन, ए० फाऊली, वी० ग्रोस तथा अन्य कई विचारकों ने इतिहास की व्याख्या अपनी सनकों और उडानों के अनुसार करने का प्रयत्न किया है। इनके फिलासफी-भरे मस्तिष्कों ने जो ताना-बाना बुना है, वह विचित्र है। तथ्यों से उसका कोई सम्बन्ध नही। अनेक ऐतिहासिक घटनाओं को स्पष्ट करने के लिए कई

इतिहासकारों ने भी नाना सिद्धान्तों का ताना-बाना बुनने का प्रयत्न किया है; किन्तु उनसे इतिहास की व्याख्या करने में कुछ भी सहायता नहीं मिलती। किसी राष्ट्र अथवा जाति की भावना अथवा प्रतिभा को ही निर्णायक कारण माना गया है, उसके आर्थिक, भौगोलिक, सामाजिक तथा वैयक्तिक कारणों का उल्लेख ही नहीं किया गया। इस प्रकार की अधूरी व्याख्याएं इतिहास के अध्ययन में सहायक नहीं हो सकतीं। इसका तो केवल यह अर्थ है कि किसी राष्ट्र ने कोई काम किया; क्योंकि वह उसे करने में समर्थ था, या किसी राष्ट्र ने कोई काम नहीं किया; क्योंकि वह उसे करने में असमर्थ था। ई० रेनन ने अरब की सभ्यता का महत्त्वपूर्ण कारण उनकी 'सेमेटिक स्पिरिट' को माना और जे० मोरले ने घोषणा की कि यूनानी और यहूदी लोग राजनैतिक संश्लेषण की सर्वोच्च योग्यता से रहित थे। कनिंघम ने कहा है कि यूनानी और फीनिशियन क्रमशः जिन सिद्धान्तों का प्रतिनिधित्व करते हैं..." इस प्रकार की व्याख्याएं व्यर्थ के शब्दाडंबर मात्र हैं।

(4) इतिहास के विषय में वैज्ञानिक दृष्टिकोण यह होगा कि सभी यान्त्रिक तथा भाग्यवादी सिद्धान्त अस्वीकार कर दिए जाएं। क्योंकि ये विचार इतिहास के निर्माण में केवल वातावरण के प्रभाव को स्वीकार करते हैं और व्यक्तित्व की उपेक्षा करते हैं। इस प्रकार के सिद्धान्तों को अर्ध-वैज्ञानिक थ्योरियां कहा जा सकता है; अतः इनमें या तो संशोधन होना चाहिए, या इनका पूर्ण विकास किया जाना चाहिए। यदि आपको कोई इतिहासज्ञ ऐसा मिले, जो आपको यह सिखलाए कि वातावरण या परिस्थितियां ही सर्वशक्तिमान हैं तो आप उसे एक आंख वाला बुद्धिमान मनुष्य समझिए। यदि उसे दो आंखों का वरदान मिला होता, तो वह इतिहास में अवश्य ही मनुष्य के व्यक्तित्व की शक्ति को स्वीकारता। मेरी यह शिक्षा है कि इतिहास दो शक्तियों का उत्पादन है—1. परिस्थितियां या वातावरण और 2. व्यक्तित्व। व्यक्तित्व पिता है और वातावरण माता है। व्यक्तित्व सक्रिय शुक्राणु है, वातावरण निष्क्रिय डिम्ब है।

कुछ वैज्ञानिक विचारकों ने, मानवजाति के विकास में, वातावरण के प्रभाव को अतिरंजित कर दिया। बोडिन ने उत्तरी, मध्य तथा दक्षिणी राष्ट्रों तथा उनके निवासियों पर इसी तरह से विचार प्रकट किया है। मोन्टेस्क्यू ने इतिहास की व्याख्या विभिन्न देशों के भूगोल तथा जलवायु के आधार पर की है। उसने भाग्यवाद का खंडन किया है; किन्तु उसने यह बात बारंबार दोहराई है कि सभी नियम-कानून और संस्थाएं भूमि और जलवायु की उपज हैं। उसने यह मत प्रकट किया है कि उष्ण कटि-

संघ-सम्बन्धी क्षेत्रों के लोग अनिवार्यतः गुलामी तथा दुःख उठाने के लिए बने हैं।

इसी प्रकार जे० जी० वोन हर्डर और टी० एच० बक्कल ने भी प्राकृतिक वातावरण पर अत्यधिक ज़ोर दिया है। उन्होंने मानव-इतिहास को प्राकृतिक इतिहास की एक शाखा बतलाया है। ये सभी अत्युक्तियां हैं। एल० फुयेरवाक ने इतिहास को भोजन-विज्ञान पर आधारित बताने का साहस किया है। उसने कहा है—"मनुष्य वही है, जो वह खाता है।" कार्ल मार्क्स तथा एफ० एंगेल्स ने समाज और उसकी संस्थाओं को ढालने में, आर्थिक स्थिति पर अतिरंजित बल दिया। यद्यपि उन दोनों ने भी बाद में स्पष्ट संकेत किया कि इतिहास की 'आर्थिक व्याख्या' की भी एक सीमा है। मार्क्स ने कहा—"पदार्थ जीवन में उत्पादन की विधि ही सामान्यतः सामाजिक, राजनैतिक तथा आध्यात्मिक जीवन को स्वरूप प्रदान करती है। हाथ की चक्की ऐसा समाज प्रदान करेगी जिसके स्वामी सामन्त और ज़मींदार होंगे, भाप की मिल ऐसा समाज प्रदान करेगी जिसके स्वामी औद्योगिक पूंजीपति होंगे। आदर्श इसके सिवा कुछ नहीं है कि पदार्थ जगत ही मानव-मस्तिष्क पर प्रतिबिम्बित होता है और फिर विचार के रूप में परिवर्तित हो जाता है।" एंगेल्स ने लिखा था—"प्रत्येक ऐतिहासिक युग में, आर्थिक उत्पादन तथा आदान-प्रदान की विद्यमान विधि और अनिवार्यतः उसका अनुगमन करती हुई सामाजिक संगठन की स्थिति ही एक ऐसे आधार का निर्माण करती है, जिसके ऊपर उस युग का राजनैतिक तथा बौद्धिक इतिहास निर्मित होता है।" बहुत-से समाजवादी तथा साम्यवादी विचारकों ने विचारों, आन्दोलनों और घटनाओं की व्याख्या पूर्णरूपेण 'भौतिक पदार्थवाद के सिद्धान्त' के आधार पर करने का प्रयत्न किया है; किन्तु ये भूल जाते हैं कि बाद में एंगेल्स ने स्वयं अपने विश्लेषण के इस ढंग को अस्वीकार कर दिया था और उसे सतही बताया था। उसने लिखा—"मार्क्स तथा मैं अंशतः इस तथ्य के लिए उत्तरदायी हैं कि नवयुवक कई बार आर्थिक तथ्यों पर आवश्यकता से अधिक जोर देने लगते हैं।" और हमें मार्क्स की यह अप्रतिम उक्ति नहीं भुलानी चाहिए: "मैं एक मार्क्सिस्ट नहीं हूं।"

यह अवश्य स्वीकार किया जाना चाहिए कि इतिहास में वातावरण का बहुत महत्त्वपूर्ण भाग है। और यह अनिवार्य है। यह सुझाव देना मूर्खतापूर्ण होगा कि आरम्भिक सभ्यता का उदय अरब के रेगिस्तान में अथवा तिब्बत के दुरूह ठंडे पहाड़ों में हो सकता था। पर्वतवासियों का चरित्र तथा उनकी संस्थाएं सदा ही उन्हें मैदानी इलाके के

पृथक् करते हैं। समुद्रतट के निवासी जीवन के विषय में, निश्चय ही एक भिन्न दृष्टिकोण रखते हैं; क्योंकि उन्हें पानी में काम करना पड़ता है। एथेन्स, र्होड्स तथा सीडोन कभी स्पार्टा के समान नहीं हो सकते। स्विस लोग यूरोप के राजाओं को अपनी आदमी सेना में भर्ती करने के लिए सप्लाई करते रहे और साथ ही अपनी प्रजातान्त्रिक संस्थाओं की निरंकुश राजाओं के काल मे, रक्षा करते रहे। हिमालय के कठोर कष्ट-सहिष्णु बच्चे अपने चेहरों और आत्माओं में भी, हिमचोटियों और हिम-नदों की छाप रखते हैं। कोई भी व्यक्ति ग्रीनलैंड अथवा टिएरा (Tierra del Fuego) में सभ्यता के विकास की आशा नही कर सकता। उष्ण कटि-बन्ध या उसके आसपास के देशों के लोग, जैसे भारत, जावा, तथा ब्राज़ील के निवासी अपने शरीर तथा मनोवृत्ति में—इंग्लैंड, जर्मनी, तथा साइबेरिया के लोगो से भिन्न होंगे; क्योंकि उष्णकटिबंध में जलता-तपता, और उज्ज्वल सूर्य एक ऐसा बुनियादी तथ्य है कि जिसकी कभी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। उत्तर और दक्षिण में कुछ न कुछ अन्तर सदैव रहेगा; क्योंकि उनकी जलवायु तथा भोजन कभी समान नही हो सकता। मनुष्य, प्रकृति का पूर्ण उल्लघन नहीं कर सकता। चीन और फ्रांस—क्रमशः उत्तर और दक्षिण ने वस्तुतः दो भिन्न राष्ट्रों को जन्म दिया है।

वातावरण तथा भौगोलिक स्थिति के अतिरिक्त, जनता की आर्थिक तथा राजनैतिक संस्था भी, आशिक रूप में उसके नियम-कानूनों, रीति-रिवाजों तथा विचारों को प्रभावित करती है। एक कृषि-प्रधान देश में, यथा अर्जेन्टाइना, भारत अथवा दक्षिणी फ्रांस में लोग अवश्य ही इंग्लैंड, जर्मनी तथा उत्तरी फ्रांस (जहां ऊंचे दर्जे का औद्योगीकीकरण हो चुका है) के लोगों से भिन्न प्रकार से सोचते तथा काम करते है। यहा तक कि एक ही देश मे, विशेष वर्ग जैसे मछिहारे तथा खान-मजदूर अपनी अलग-अलग चारित्रिक विशेषताएं रखते हैं। हमारा दैनिक भोजन, न केवल हमारा पेट भरता है, बल्कि हमारे मस्तिष्क को तथा आत्मा को एक विशिष्ट सांचे मे ढालता, रग देता तथा नियंत्रित करता है। बंगाल, इग्लैंड तथा जर्मनी में जर्मीदारी प्रथा के शिकार किसान अवश्य ही पंजाब, फ्रांस तथा स्वीडन के स्वतन्त्र किसानों की अपेक्षा गुलाम मनोवृत्ति वाले होंगे। आपका जन्म एक विशेष युग मे, एक देश में होने से, उस देश के वातावरण व परि-स्थितियों का प्रभाव आप पर अवश्य ही पड़ेगा। वातावरण वस्तुतः हमारे तन-मन की मिट्टी को एक विशिष्ट सांचे मे ढालता है।

किन्तु एक और बात है जो इतिहास को मोड देने मे विशेष महत्व रखती है। वह है—व्यक्तित्व। अर्धवैज्ञानिक दार्शनिक, जो वातावरण

के प्रभाव में अत्युक्ति करते हैं, वे भूल जाते हैं कि इतिहास को ढालने में दो शक्तियां समान रूप से प्रभावी होती हैं—वातावरण और व्यक्तित्व। वे सिद्धान्त जो वातावरण को सर्वशक्तिमान मानते हैं, इतिहास की तथ्य रूपी चट्टानों से टकराकर चूर-चूर हो जाते हैं। एक ही वातावरण ने भिन्न-भिन्न युगों में विभिन्न प्रकार (Types) के मनुष्यों को जन्म दिया है, विभिन्न प्रकार के रीति-रिवाजों, विभिन्न प्रकार के कायदे-कानूनों, विभिन्न प्रकार के धार्मिक तथा दार्शनिक विचारों को पैदा किया है। और अत्यन्त विभिन्न प्रकार के वातावरण में रहने वाले विभिन्न देशों के लोगों की संस्थाओं में विचित्र समानता पाई जाती है। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता, साथ ही इससे यह सिद्ध होता है कि वातावरण सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता। इसी भ्रम में बकिल ने गलत विचार प्रकट किया कि मिस्र तथा भारत की सभ्यताएं अवश्य ही समान होंगी; क्योंकि दोनों का वातावरण बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। मॉन्टेस्क्यू ने उष्ण कटिबन्ध देशों में सामन्तवादी प्रथा को अनिवार्य बताया, जबकि हम जानते हैं कि ईसापूर्व पांचवीं शताब्दी के भारत में स्वतन्त्र गणतन्त्र विद्यमान थे। और सामन्तवाद ने फ्रांस, इंग्लैंड, जर्मनी तथा रूस में बड़ी भारी बर्बादी की और घोर अत्याचार किये, हालांकि ये देश उष्ण कटिबन्ध से कोसों दूर हैं। अरब लोग ऐसे देश में निवास करते हैं, जो भट्टी के समान तपते हैं; किन्तु उन्होंने शीत-प्रधान क्षेत्रों पर विजय प्राप्त की। रेनन ने विचार प्रकट किया कि अरबों में एकेश्वरवाद इसीलिए पनपा कि वे रेगिस्तान में रहते थे, किन्तु यही रेगिस्तान—अरबों का घर अनेक शताब्दियों तक, मुहम्मद से पहले, बहुदेववाद का घर रहा, उस समय अरबों को एकेश्वरवाद का ध्यान तक नहीं आया था। अखेनातन, मूसा तथा अनाक्सागोरस, जोकि इतिहास में सर्वप्रथम एकेश्वरवादी प्रसिद्ध हैं, वे रेगिस्तान में पैदा नहीं हुए थे। कवि वर्ड्सवर्थ का विश्वास था कि स्वतन्त्रता की भावना का सम्बन्ध विशेषतया पहाड़ों और समुद्र से है और शिलर ने लिखा—"Freedom dwells upon the mountains" [illegible] "स्वतन्त्रता का निवास पर्वतों पर है।" मॉन्टेस्क्यू ने भी कहा कि [illegible] का रिश्ता पर्वतों से है, किन्तु राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य भावना [illegible] अर्वाचीन इतिहास में खूब पनपी, नेपोलियन-युग में जर्मनी [illegible] खूब फली-फूली, महाराष्ट्र, नेपाल और पंजाब में भी [illegible] प्रजातन्त्र पर आधारित नागरिक स्वतन्त्रता के दर्शन [illegible] इतिहास में मिलते हैं, ये अपने अपूर्ण रूप में एथेंस और [illegible] भारत में, हालैंड, इंग्लैंड, स्कैण्डेनेविया, फ्रांस [illegible]

दिखलाई देती है। इससे यह स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता एकमात्र पर्वतीय अथवा समुद्रतटीय लोगों की बपौती नहीं रही। कश्मीर के पर्वत, तिब्बत और काकेशस ने जनता को स्वतन्त्रता का वरदान नहीं दिया। स्वतन्त्रता की स्थापना—उत्तर और दक्षिण में, पूर्व और पश्चिम में, पर्वतों और मैदानों में, समुद्रतटों में और बंजर पठारों में, ताड़ और पीपल के नीचे, जहां और जब किसी व्यक्तित्व ने वातावरण को वश में करके कर्म किया वहीं स्वतन्त्रता पनपी। झुलसाने वाली गर्मी ईराक में पड़ती है, किसी समय वे यूरोपियनों से अधिक विज्ञान तथा दर्शनशास्त्र की उन्नति में लगे हुए थे। पुनर्जागरण काल के इटालियन विद्वान् धूप से तपते इटली में जन्मे थे, वे शीत-प्रधान इंग्लैंड तथा जर्मनी विद्वान साधुओं की अपेक्षा, अपरिमित परिश्रमी थे। ऐसा भी तो एक समय था, जब एंग्लो-सैक्शन लोग बल तथा शक्ति के लिए प्रसिद्ध नहीं थे। जलवायु, अनिवार्यत विश्व में सर्वत्र एकसमान आलस्य अथवा स्फूर्ति का जनक नहीं है।

वातावरण का प्रभाव होता अवश्य है, परन्तु व्यक्तित्व द्वारा इसका प्रतिरोध किया जा सकता है। जहां तक आर्थिक प्रभाव का सम्बन्ध है, यह इतना महान नहीं कि इसे एकमात्र प्रभावी कारण माना जाए। यह अन्य अनेक शक्तियों में एक शक्ति अवश्य है और इसके प्रभाव को परिवर्तित किया जा सकता है और यहां तक कि सर्वथा व्यर्थ किया जा सकता है। आर्थिक व्यवस्थाएं तथा कृषि, घरेलू दस्तकारी तथा यातायात में, आदिम युग से लेकर ईसा की 18वीं शताब्दी तक कोई मूलाधारभूत परिवर्तन नहीं हुए थे। इतनी सुदीर्घ शताब्दियों तक ये समस्त विश्व में उल्लेखनीय रूप से एकसमान रहे हैं। हल और दराती, घोड़ा-गाड़ी और नौका, चरखा और रहट आदि सभी सभ्य देशों में तब तक प्रयोग में आते रहे, जब तक कि अति आधुनिक काल में भाप तथा विद्युत का आविष्कार नहीं हुआ था। इनके प्रयोग में प्रथम शताब्दी या 10वीं शताब्दी के मध्य कोई विशेष अन्तर न था। इस समयावधि में आर्थिक जीवन की तकनीक सर्वथा स्थिर और अप्रगतिशील रही। किन्तु इसी पांच सहस्र वर्ष की समयावधि में हम देखते हैं कि धर्म, साहित्य, राजनीति, कला तथा जीवन-दर्शन-सम्बन्धी प्रयोगों तथा उपलब्धियों में विस्तीर्ण विविधता पाई जाती है। इस दौरान मानवजाति ने—एकतन्त्र शासन (Monarchy), कुछ विशिष्ट व्यक्तियों का शासन (Oligarchy), प्रजातन्त्र, नगर-राज्य, राष्ट्र-राज्य, साम्राज्य, नक्षत्रदेवतावाद, पशुदेवतावाद, बहुदेववाद, एकेश्वरवाद, नास्तिकतावाद, पैन्थीइज्म, दुखान्त, सुखान्त, गीतिकाव्य, ग्रीक और गोथिक स्थापत्यकला, इत्यादि-इत्यादि—अनेक प्रयोग किये तथा

उपलब्धियां प्राप्त कीं और इनके दु:ख-सुख को प्राप्त किया। बौद्धिक, कलात्मक तथा राजनैतिक प्रयोगों की इस आश्चर्यजनक विविधता के सर्वथा विपरीत मानव समाज का 'आर्थिक आधार बिल्कुल स्थिर, अपरिवर्तनशील तथा प्राय: सर्वत्र एकसमान रहा।' निश्चय ही इस प्रकार की विविधता का कारण किसी एक तथ्य द्वारा उत्पन्न नहीं किया जा सकता, जो कि स्वयं बहुत ही कम—'न' के बराबर परिवर्तित हुआ हो। इस बात को सिद्ध करने के लिए कि 'आर्थिक' कारण का प्रभाव बहुत कम रहा, प्रमाणों का पिरामिड खड़ा करने की जरूरत नहीं है।

मनोविज्ञान तथा नैतिक आचार-विज्ञान के क्षेत्र में कठोरता से 'आर्थिक कारण-कार्य के तर्क' को घुसेड़ना अव्यावहारिक कुतर्क होगा। सैकड़ों उत्साही रूसी विद्यार्थी समाजवाद की विजय के हेतु एकान्तिक लगन से काम करते तथा कष्ट सहन करते रहे, यह ऐसा आन्दोलन था, जो उनके अपने वर्ग स्वार्थों के सर्वथा विरुद्ध था और उनकी बुर्जुआ शिक्षा के भी विपरीत था। वास्तव में, समाजवाद के अनेक नेता उच्च और मध्यम वित्त वर्गों से आए थे, उन्होंने अपने ही कार्यों से यह सिद्ध कर दिया कि 'आर्थिक कारण-कार्य' का तर्क ठीक नहीं। उन्होंने विचारों की खातिर कष्ट सहन किये, न कि आर्थिक कारणों से। सेंट साइमन, राबर्ट ओवेन, लुई ब्लांक, मार्क्स, बाकूनिन, क्रोपाटकिन, एंगेल्स, हिंडमेन, ब्रांटिंग, जौरिस, मेटीयोट्टी, अर्नेस्ट जोन्स तथा अन्य आत्म-बलिदानी नेताओं ने समाजवाद की सेवा में अपना जीवन निछावर कर दिया और इस प्रकार इस तर्क को मिथ्या सिद्ध कर दिया कि इतिहास को बदलने के 'आर्थिक कारण-कार्य' ही प्रधान हैं।

'मार्क्सवाद' के रूढ़िवादी, पांडित्यप्रदर्शन करने वाले पंडितों की बात ही यदि सत्य होती, तो समाजवादी क्रांति उन्हीं देशों में फूट पड़ती, जो पूंजीवादी प्रथा में बहुत उन्नति कर चुके हैं; किन्तु यह विस्फोट वास्तव में हुआ रूस में, जहां पूंजीवाद सबसे कम विकसित था। अतएव, के० कोट्स्की हक्का-बक्का रह गया और रूढ़िवादी इनकार की उसने शरण ली, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई बालक चिड़ियाघर में जाए, वहां जिराफ को देखे और उसके मुख से अनायास निकल जाए—"हैं! इस प्रकार का पशु नहीं है, ऐसा तो नहीं।" के० कोट्स्की का 'मार्क्सवाद' का सिद्धान्त केवल अर्धसत्य है; क्योंकि इसने पदार्थ-वातावरण को खूब बढ़ा-चढ़ा दिया और व्यक्तित्व के महत्त्व को बिल्कुल कम कर दिया। धार्मिक क्षेत्र में, यह सत्य है कि सुधारवाद (Reformation) पोलैण्ड में असफल हुआ, क्योंकि उस देश में व्यापारिक तथा औद्योगिक मध्यवित्त वर्ग नहीं था। जैनमत

तथा प्युरिटनिज्म को मुख्यतः नगरवासी व्यापारिक-श्रेणी ने अंगीकार किया। किन्तु स्काटलेंड मे जहां मध्यवित्त वर्ग का अभाव था, कालविनिज्म सफ़ल हुआ, और भारत के व्यापारी तीन भागों में विभक्त हो गए—उन्होने हिन्दुत्व, जैनमत, तथा बुद्धमत के प्रति भक्ति प्रदर्शित की। जावा के लोग हिन्दुत्व से इस्लाम में तबदील हो गए, यद्यपि वहा आर्थिक व्यवस्था मे कोई परिवर्तन नही आया था। प्रारम्भिक ईसाई चर्च ने मुख्यतः शहरी-व्यापारी वर्ग तथा श्रमिक वर्ग को आकर्षित किया था, किन्तु यही धार्मिक मत, बाद में उत्तरी यूरोप के किसानो, सामन्तो और राजाओं को भी स्वीकार्य हुआ।

उनका धर्म-परिवर्तन किसी आर्थिक आन्दोलन का परिणाम नही था। चीन तथा जापान में बौद्धमत का प्रसार किसी आर्थिक क्रान्ति का परिणाम नही था। इस्लाम पहले धनी मध्यवित्त वर्ग मे फैला, किन्तु आज फारस और मिस्र के किसान-मजदूर उसके अधिक कट्टर भक्त हैं। इतिहास द्वारा यह सिद्ध होता है कि अनेक धार्मिक मत और आन्दोलन, बिना आर्थिक शक्तियों या वर्ग-स्वार्थों से सम्बन्ध रखे, आगे बढ़ सकते हैं। मानव एक संश्लिष्ट प्राणी है। वह केवल धन ही नही चाहता, बल्कि सदाचार, हास्य, संगीत, रहस्य आदि भी चाहता है। अपने उच्च मनोविज्ञान की प्रेरणा से, कभी-कभी वह अवश्य ही नवीन विचारो के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए अपने को अपनी आर्थिक स्थिति के विचार से—भूस्वामी, व्यापारी या मजदूर प्रकट करता है; किन्तु वैसे अनेक बार शुद्ध साधारण मानव के रूप में वह प्रतिक्रिया व्यक्त करता है, उस समय उसकी प्रतिक्रिया ऐसी होती है, मानो वह वर्गहीन समाज में रह रहा हो। भला, जब वर्ग और श्रेणियों का भेद समाप्त हो जाएगा, तब इस रूढ विचार का क्या अर्थ होगा कि समाज में सब प्रकार के परिवर्तनो का आधार आर्थिक शक्तिया हैं? तब क्या दर्शनशास्त्र, नैतिक आचार-विज्ञान तथा कलाक्षेत्र मे परिवर्तन या विकास होना बन्द हो जाएगा? फिर क्या मानव-मन स्थिर और निष्क्रिय बन जाएगा? क्या फिर कोई टेक्नीकल आविष्कार नही होगा? मानव-मन ही मानव-इतिहास के निर्माण मे मुख्य कारक है, मशीन नहीं; क्योंकि मशीन भी मन की ही रचना है। एक मजदूर इस समय एक श्रेणी से सम्बन्ध रखता है; किन्तु प्रकृति ने जिस समय मानव का निर्माण किया था, उस समय के कही बहुत बाद मे जाकर 'लोभ' ने 'प्रोलेतेरियत' वर्ग को जन्म दिया और यह भी मानव की ही अपनी रचना है। वर्ग-भेद एक दिन अवश्य मिट जाएगा; किन्तु मानवता सदा रहेगी, यह अमर है। जिस समय एक मजदूर एक सुन्दर सूर्यास्त के दृश्य का आनन्द लेता है, या एक

मधुर सेब खाता है, संगीत को सुनता है अथवा अपनी पत्नी के होंठ चूमता है, एक अतिथि का स्वागत करता है, या किसी मित्र-सम्बन्धी पड़ोसी आदि की शवयात्रा में श्मशान तक जाता है, कविता पढ़ता है, या जीवन और मृत्यु की समस्या पर विचार करता है, उस समय वह अपनी-मानवता की मूल प्रेरणा से काम कर रहा होता है, न कि अपने किसी वर्ग स्वार्थ की प्रेरणा से। जब लोग फ्लोरेंस की सड़कों पर मेडोना का जलूस निकालते थे, या डायना की जयजयकार करते थे, या गेरीबाल्डी का अभिनन्दन करने के लिए हजारों की संख्या में एकत्र होते थे, या मोलीसन का सम्मान करते थे, या हरनानी के लिए आपस मे लड़ते थे, या विक्टर ह्यूगो की शवयात्रा पर हजारों की तादाद में मूक सम्मान प्रकट करते हुए गए थे, या राम के जीवन और चरित्र को प्रतिवर्ष झांकियां निकाल कर सदियों से मनाते आए हैं, या लोग फारस से भागकर भारत आए थे ताकि वे अपने पूर्वजों के विश्वास की रक्षा कर सकें, या जियोनिज्म के आह्वान पर 'फिलस्तीन दौड़े गए थे, या 'पीटर दि हरमिट' की अपील पर जेरूसलम मे मार्च करते हुए गए थे, या पार्थेनन के निर्माण के लिए धन देने के लिए मतदान किया, या जेरक्सीस, मारडोनियस, औरंगजेब के सामने झुकने से दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया, या वैलीफोर्ज में भूख और शीत को सहन किया, या वाल्मी, लुटजेन, तूर्स में लोकनायकों की भांति लड़े, या वोल्तेयर के जलूस में शामिल हुए, या बुद्ध के किसी अवशेष के स्वागत में सम्मिलित हुए—तब उन क्षणों में, उनके मन में धन के विचार का लेश-मात्र न था।

इतिहास को मोड़ देने मे अर्थशास्त्र के प्रभाव को ही एकमात्र प्रभाव मानने वाले मानव-प्रकृति को मनमाने ढंग से तोड़-मरोड़ कर, विकृत करके प्रस्तुत करते हैं। वस्तुतः मानव-प्रकृति विविध रंगों का इन्द्रधनुष है। लेकिन अर्थवादी केवल सोने के पीले रंगमात्र को देखते हैं, और कुछ नहीं। यदि इतिहास की उचित रूप में तथा ईमानदारी से व्याख्या की जाए तभी इस शोचनीय पीलिया रोग का इलाज हो सकता है।

और, मैं एक प्रश्न पूछता हूं कि आर्थिक ढांचे में परिवर्तन कौन करता है? क्या नये यन्त्रों ने स्वयं अपना आविष्कार किया? हाथ की चक्की और भाप की चक्की ने, जिनका कार्ल मार्क्स ने जिक्र किया है, स्वयं ही अपना निर्माण कर लिया था? क्या उत्पादन और वितरण के नये ढंग अपने-आप स्थापित हो गए थे? क्या नये सामाजिक वर्ग रहस्यमय ढंग से अपने आप या यान्त्रिक रूप में बन जाते हैं? नहीं, हर्गिज नहीं। नर और नारी हैं, जो इनका निर्माण करते हैं, इनमें सुधार करते हैं, इनमें रद्दोबदल

करते है या इन्हें तोड-ताड कर फेंक देते है। स्त्री और पुरुष ही समाज के आर्थिक ढाचे मे परिवर्तन करते हैं, वे इस काम को टेक्नीकल प्रगति के द्वारा करते हैं, पदार्थों का वितरण करने के नए ढग निकालते हैं, वे ही श्रम-कब्जा-पेशा-विजय-अधिग्रहण—आदि के आधार पर संपत्ति पर व्यक्तियो के अधिकार का निर्धारण करते हैं। ये सारे आर्थिक क्रियाकलाप औजारो या यन्त्रो द्वारा नही किये जाते। अन्त में, यह तत्त्व निकलता है कि 'आर्थिक कारण-कार्य' मानव प्राणी के मन, इच्छाशक्ति और व्यक्तित्व पर निर्भर हैं। आर्थिक कारणो का वह कर्त्ता है, न कि कृति। प्रत्येक कला तथा विज्ञान मानव का मन और इच्छाशक्ति की ही देन हैं।

यदि वस्तुत:, मानव के सभी आदर्शों के निर्धारण मे वातावरण और आर्थिक-राजनैतिक कारण ही प्रधान होते, तो यह स्पष्ट करना असभव होता कि किसी भी समय मे नये विचार कैसे उत्पन्न हुए अथवा किसी भी दमनकारी शासन को कैसे उखाड़ फेंकना या उसमें सुधार करना सभव होता। वातावरण, अवश्यमेव उन्ही विचारों और भावो को जन्म दे सकता है, जो सर्वथा उसके अनुकूल हो। आर्थिक-राजनैतिक सस्थाए अवश्य ही मनुष्यों को एक विशिष्ट ढाचे मे ढालती है, जो सर्वथा उनके अनुरूप होता है। इस प्रकार, राजतन्त्र द्वारा राजभक्त प्रजा पैदा की जाती है, सामन्तवाद यह शिक्षा देता है कि अच्छी असामी अवश्य अपने सरदार के पीछे-पीछे चले—उसका अनुसरण करे। किन्तु यदि ये बाह्य-प्रभाव ही सबसे प्रबल होते, तो कोई भी संस्था या परपरा कभी भी कैसे बदली जाती? कौन उसके विरुद्ध विद्रोह करता? वह कौन-सी शक्ति है जो असंतोष पैदा करती और सुधारकों, आविष्कारकों या क्रान्तिकारियों को जन्म देती? रोमन साम्राज्य क्यों ईसाई आदर्शवादियों को सिर उठाने देता, जिन्होने बड़ी दृढता से सम्राट की मूर्ति की पूजा करने से इनकार कर दिया। उनको यह विचित्र विचार कहां से आया? क्योंकि यह विचार तत्कालीन आर्थिक-राजनैतिक ढांचे की पैदावार नही हो सकता। कैथोलिक चर्च अपने अन्दर प्रोवेन्स, वालडेस, तथा बोहीमिया को उठने देता? पूजीवाद अपने विरोधी समाजवाद को क्यो पैदा होने देता? वास्तविकता यह है कि जनता की बहुत भारी सख्या बहुत देर तक वातावरण तथा आर्थिक-राजनैतिक स्थिति की दासता मे और अकर्मण्य रहती है; क्योंकि उनमें स्वतन्त्र रचनात्मक यानि कर्तृत्वशील व्यक्तित्व का अभाव होता है। किन्तु एक अल्पसंख्या सदा ही पुरानी परम्परा के शासन की आलोचना और निन्दा करती है, ये कुछ-एक विद्रोही ही अन्त में नवीन संस्थाओं को स्थापित करने में सफल होते हैं। परन्तु उनमे यह

नवीन स्फूर्ति और अन्तर्दृष्टि आती कहां से है ? यह कहना मन्दबुद्धि की बात होगी, संश्लेषण ही विश्लेषण तक पहुंचाता है। मैं पूछता हूं कि "ऐसा क्यों है ?" संश्लेषण को अवश्य ही अपने को सुरक्षित बनाये रखना चाहिए। संश्लेषण क्यों ऐसी शक्ति उत्पन्न करता है, जो उसी का विरोध करती है और उसी का विनाश कर देती है ? स्पष्ट है कि कोई कर्तृत्व शालिनी गुप्त शक्ति अवश्य है, जो संश्लेषण से भिन्न है। वह शक्ति और कुछ नहीं, मानव-व्यक्तित्व ही है, जो प्रत्येक युग में, केवल इनी-गिनी आत्माओं में महान् तथा कर्तृत्वशाली होती है। केवल समर्थन से विरोध या निषेध का जन्म नहीं हो सकता। यह ठीक है कि समर्थन और व्यक्तित्व —इन दोनों के संयोग से विरोध और निषेध भी उत्पन्न हो सकता है। व्यक्तित्व के द्वारा ही विधि और निषेध को मिलाकर एक नवीन संश्लेषण को जन्म दिया जाता है। व्यक्तित्व के बिना कभी भी किसी नवीन विधान, संस्था, परम्परा, धारणा, विचार या संस्कृति को जन्म नहीं दिया जा सकता।

वातावरण और व्यक्तित्व के द्वारा किस प्रकार एकसाथ मिलकर महान् घटनाओं को जन्म दिया जा सकता है इसी का अब मैं यहां चित्रण करूंगा। तुर्कों की राजनीतिक सक्रियता, यूरोपवासियों की मसालों की आवश्यकता, और एक व्यापारिक श्रेणी के आर्थिक स्वार्थ ने इस विचार को जन्म दिया कि भारत के लिए एक नवीन मार्ग की खोज की जाए। कोलम्बस की साहसी प्रवृत्ति ने, इसाबेला की बुद्धिमत्ता और जहाजियों की वीरता ने उस विचार को मूर्त रूप प्रदान किया। इग्लैंड का प्यूरिटन आन्दोलन मिल्टन द्वारा 'पैराडाइज लास्ट' के लिए अनुपयुक्त विषय चुने जाने के लिए उत्तरदायी था; किन्तु प्यूरिटनिज्म ने विशिष्टता से रचित मस्तिष्क को जन्म नहीं दिया था, जिसने समन्वय का आविष्कार किया। मिल्टन का वह मस्तिष्क उसके व्यक्तित्व का एक अंग था। उस काल के प्रत्येक प्यूरिटन ने महान् कविता नहीं लिखी। फ्रेंच क्रान्ति, विशेष आर्थिक-राजनैतिक स्थितियों तथा रूसो, वॉल्टेयर, डिडेरो तथा अन्य विचारकों के प्रचार का सामूहिक परिणाम थी। उस क्रान्ति ने नेपोलियन के लिए अवसर उपस्थित किया; किन्तु क्या किसी गंभीर विचारक विद्वान् का यह मत हो सकता है कि समस्त नेपोलियनीय संग्राम कभी भी लड़े जा सकते थे, यदि एक आदमी जिसका नाम नेपोलियन था, जो प्रतिभाशाली और महत्वाकांक्षी था, वह न होता। यह उसीका व्यक्तित्व था, जिसने इतने भीषण और बहुसंख्यक युद्धों को आयोजित किया। वह प्रतिभा और महत्वाकांक्षा भी उस काल में उतनी ही आवश्यक थी जितनी कि

की आर्थिक-राजनैतिक शक्तियों की हलचल। पूंजीवाद ने समाजवाद के विकास के लिए बाह्य उपकरण प्रस्तुत किये; किन्तु पूंजीवाद अनेक वर्षों तक प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर लन्दन के ब्रिटिश म्यूजियम में जाकर नहीं लिखता रहा। और उसने 'दास केपिटल' की रचना नहीं की। यह एक विशेष व्यक्ति था, जिसका नाम कार्लमार्क्स था। उसी ने उक्त ग्रन्थ की रचना की। पूंजीवाद ने मार्क्स के माता-पिता को इसके लिए शारीरिक रूप में समर्थ नहीं बनाया था कि वे उस विशिष्ट मौलिक मस्तिष्क वाले व्यक्ति को जन्म दें।

वातावरण तथा व्यक्तित्व की एकसमान महत्ता को चिरकाल-पूर्व ही थेमिस्टोक्लीस ने स्वीकार किया था। प्लूटार्क घटना का इस प्रकार वर्णन किया है—"एक दिन सेरिफास नामक एक छोटे-से नगर के एक नागरिक ने थेमिस्टोक्लीस से कहा—"अपने गौरव के लिए आप अपने नहीं; बल्कि महान् एथेंस नगर के ऋणी है।" उत्तर में थेमिस्टोक्लीस ने कहा—"बिल्कुल ठीक; मैं यदि सेरिफास में पैदा हुआ होता, तो मुझे इतनी ख्याति न मिलती; किन्तु यदि तुम्हारा जन्म एथेंस में हुआ होता, तो तुम इतने महान् या शक्तिशाली न होते।"

वातावरण को बिना जली मोमबत्ती से तुलना दी जा सकती है और व्यक्तित्व को दियासलाई से। बिना माचिस के मोमबत्ती कभी नहीं जल सकती। किन्तु दोनों के संयोग से प्रकाश की उत्पत्ति होती है, जिससे संसार में प्रकाश होता है।

(4) कुछ दार्शनिकों ने ऐसे सामान्य, आवश्यक और व्यापक नियम की खोज करने का प्रयत्न किया है, जिसके प्रकाश में अतीत (इतिहास) की स्पष्ट व्याख्या की जा सके। किन्तु खेद है! इतिहास किसी भी सर्वव्यापक विश्वजनीन 'नियम' को व्यक्त नहीं करता, जिसके अनुसार समाज का विकास हुआ। इतिहास की घटनाओं पर किसी प्रकार का नियम अनिवार्य रूप से लागू नहीं होता। हां, यह संभव है कि घटना हो जाने के बाद बुद्धिमत्ता से स्पिनोजा के शब्दों में यह कहा जाए कि जो कुछ हुआ है, उसके सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता था। इतिहास का निर्माण किसी पूर्वनिर्धारित योजना या नियम के अधीन नहीं हुआ।

मानव के इतने असंख्य-विविध-रूप; सश्लिष्ट, विशाल ज्ञान-कर्म-भंडार पर कोई भी एकमात्र 'नियम-कानून' या सिद्धान्त लागू नहीं किया जा सकता। सब धान बाईस पंसेरी की बात गलत है। प्रत्येक तथाकथित नियम घटनाओं के केवल एक लघु समूह पर ही लागू होता है, वह सम्पूर्ण अतीत पर व्यापक नहीं है। इतिहास में अनेक महामार्ग, टेढ़ी-तिरछी

सड़कें, पगडंडियां हैं, इनके नक्शे विभिन्न विचारकों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार से बनाये जा सकते हैं। समूचे इतिहास को एक बिस्तर पर लिटाकर नहीं कहा जा सकता कि इसे यही एक रोग है। इस मानसिक मतिभ्रम का कारण यही धारणा है कि इतिहास भी भौतिक विज्ञान तथा रसायन-शास्त्र जैसे यथातथ्य विज्ञानों का अनुकरण करे। समाज-शास्त्र का प्रत्येक महत्त्वाकांक्षी न्यूटन यही प्रयत्न करता रहा कि वह इतिहास के विकास का कोई एक सर्वव्यापक नियम खोज निकाले। किन्तु इतिहास कभी भी यथातथ्य विज्ञान के स्तर तक नहीं गिराया जाना चाहिए। इतिहास को इस तथ्य पर गर्व है कि उसके स्वरूप को ग्राम और सेंटीमीटर से नहीं तोला-नापा जा सकता। इतिहास का गौरव इसी में है कि वह अपने को पूर्व-दृष्टि तथा भविष्यवाणी के अयोग्य मानता है।

आगस्ट कोम्टे, हरबर्ट स्पेंसर, सी० फौरियर प्रभृति विचारकों ने इसी प्रकार किसी न किसी एक व्यापक नियम को खोज निकालने की कोशिश की है; किन्तु प्रत्येक नियम किसी एक अंश पर लागू होता और अन्य अंशों पर नहीं।

कतिपय हठी आशावादियों ने विकासवाद (Law of Progress) का सिद्धान्त खोज निकाला है। विकासवाद का यह विचार एस्किलस, यूरिपिडस, अरस्तू, सेनेका, सिसरो, प्लिनी, टरटुलियन, श्रदर मेराई, ह्यूगो आफसेंट विक्टर, टामस एक्विनास, रोजर बेकन, फ्रांसिस बेकन, रेने डिस्कार्टेस, पास्कल तथा अन्य कई लेखकों ने अपने ग्रंथों में विस्तार से शब्दाडंबर-पूर्ण शैली में वर्णन किया है। किन्तु इसको पहले-पहल स्पष्ट शब्दों में, विस्तारपूर्वक तथा बुद्धिमत्तापूर्ण रीति से वर्णन करने का श्रेय अट्ठारहवीं शताब्दी के इन यूरोपियन विचारकों को है—बोडिन, चैस्टेल्लाक्स, सी० एफ० वोल्ने, ई० डब्ल्यू लीवनीज, मर्सियर, वॉल्तेयर—इत्यादि। इन्होंने यह स्पष्ट समझाने का प्रयत्न किया कि यूरोपीय देशों ने अनेक शताब्दियों में सभ्यता में प्रगति की। आवश्यक एवं निरंतर विकास का सिद्धान्त इन नामों से संबंध रखता है—ए० आर० जे टरगोट तथा कण्डोरसेट। इसे उन्होंने 'the organic principle of history' स्वीकार किया। टरगोट ने जो लिखा है उसका सार यह है—"पीढ़ी-दर-पीढ़ी और युग के बाद युग में मानव अपना परिवर्तन रूप प्रकट करता रहा है, जो सदा विभिन्नता तथा वैविध्यपूर्ण दृश्य उपस्थित करता है। विचारशक्ति, राग-द्वेष और स्वतन्त्रता—ये नई घटनाओं को जन्म देते हैं।···मानव निरन्तर प्रगति ही करता जाता है।" इसी प्रकार सेंट साइमन, ए० बजार्ड, गुइझोट, जे०मिचलेट, डब्ल्यू गार्डविन, राबर्ट ओवेन

इत्यादि ने मानवजाति के भविष्य के बारे में बड़े ही आशावादी विचार प्रकट किये हैं और निरन्तर विकास की प्रक्रिया को अनिवार्य बताया है।

थोड़े-से शब्दों में विकासवाद के सिद्धान्त का सार यह है—"मानव-संसार उन्नतिशील है। प्रत्येक विभाग में उत्तरोत्तर विकास हो रहा है। क्या प्राकृतिक और क्या मानसिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, वैज्ञानिक—जीवन के सभी अंगों में कल से आज और आज से आनेवाला दिन आगे है। पशु-पक्षियों का शरीर मनुष्य के शरीर का एक प्रकार से पूर्व रूप है। काल-क्रम से परिस्थिति के परिवर्तित हो जाने के कारण शीतोष्ण के प्रभाव से अंग-प्रत्यंग घट-बढ़कर, झड़कर और बढ़कर लम्बे, छोटे और गोल होकर; अर्थात् भिन्न-भिन्न प्रकार के परिवर्तनों में से गुजरते हुए वर्तमान भिन्न-भिन्न जातियों का निर्माण हुआ है। मानव-काया सबसे बढ़कर सूक्ष्म अतएव उत्क्रान्तियुक्त है। मछली और मेंढक के, हाथी और शेर के, भेड़ और बकरी के, गौ और घोड़े के, मुर्गे और मोर के स्मारक कुछ न कुछ अंश अब तक इसमें विद्यमान हैं।

आरम्भ में मानव-मस्तिष्क अनुभव तथा शिक्षा के अभाव के कारण बहुत दूर की सोच न सकता था। शनैः-शनैः उसकी सार-ग्रहणकारी शक्तियां पदार्थों की तह तक घुसने लगीं। पक्षियों की पी-पी और चीं-चीं से, भेड़-बकरियों की मैं-मैं से, गौ और भैंस की बां-बां से, सूखे पत्तों की सरसर से, झाड़ियों और वृक्षों के झुंडों में झंझावात के प्रकोप से पैदा होने वाले झंकार से, बादलों की गरज से और बिजली की कड़क से बोलना सीखकर मानव ने लाखों बोलियों और सहस्रों विभिन्न भाषाओं का विस्तृत ढांचा बना लिया है। मैं और तू के दो शब्दों के कोष का विस्तार कोसों में भी न समाने वाले साहित्य के रूप में हो गया है और नित्य बढ़ता चला जा रहा है।

पहले-पहल मनुष्य सूर्य और चांद को देखकर आश्चर्य करता था कि यह तेज और शीतल प्रकाश के गोले कहां से आ जाते हैं? प्रातः और सायं की लाली, पूर्णमासी की चांदनी से छाई और अमावस्या की घोर अंधकारमयी रात उसे चकित कर देती थी। विशाल पर्वत और लहराता समुद्र—उसे भयभीत कर देते थे। मनुष्य विकास करते-करते अब ऐसे स्थान पर पहुंच गया है कि वह पर्वतों के आगे हाथ जोड़ने के स्थान पर उनमें से सुरंगें निकालता और सड़कें बनाता है। नदियों के कवित्त नहीं गाता, उनकी छाती पर पुल बनाकर हजारों और लाखों मन की गाड़ियां चलाता है। आज दार्शनिक बुद्धि, विज्ञान के सहारे स्थूल से सूक्ष्म और सूक्ष्म से अदृश्य तक जा पहुंची है। इसी प्रकार धार्मिक तथा सामाजिक

जीवन आरम्भिक दशा से निकलकर निरन्तर [illegible]
प्रथम, जहा आत्मरक्षा ही एकमात्र विचार था, [illegible]
विकसित हो चुका है। पहले जहा व्यक्ति [illegible]
ही पूर्ण कर लेता था (और आवश्यकताएं [illegible]
सामाजिक जीवन इतना संश्लिष्ट हो [illegible]
दूसरे से इतना जुड़ गया है कि लाखों [illegible]
मिलकर नगर बसाते हैं।

इसके विपरीत अनेक विचारकों ने [illegible]
प्रकट किये है। इनमें से कुछ [illegible]
सकता है। हिन्दू पण्डितों का [illegible]
'सतयुग' था। तब से निरन्तर [illegible]
सतयुग के बाद त्रेतायुग आया, [illegible]
युग चल रहा है, जिसमें [illegible]
हेसियड ने भी तीन युग [illegible]
इस विचारक का स्वर भी [illegible]

अरस्तू ने इतिहास के [illegible]
निरंकुश शासन के मार्ग से [illegible]
निरंकुश शासन तक जा [illegible]

रोमन्स में ओविड ने [illegible]
कहा है कि निरन्तर [illegible]
का उल्लेख किया है। [illegible]
अनुसरण करते हुए, [illegible]
किया है। जी० वी० [illegible]
अनिवार्य अन्त [illegible]
है। रूसो ने [illegible]
क्योंकि मानव-[illegible]
होता गया है। [illegible]
का अम्यार, [illegible]
निराशावादी [illegible]

विकास का कोई अदृश्य विश्व-जनीन नियम नहीं है, जो अवश्य ही हमारे लाभ के लिए काम करता रहे, भले ही हम कैसे हो और क्या करें। मेरा मत है कि इतिहास एक बेमेल मिश्रण है। यह एक मिश्रित टाकियों से बना कपड़ा है, जिसमे कही प्रगति का टुकड़ा जुड़ा है, तो कही अवनति का—विभिन्न देशो मे और विभिन्न युगों में। एक निश्चित काल मे कुछ लोगो ने, किसी दिशा या किन्ही दिशाओ मे कुछ प्रगति की है, किन्तु उसी समय किसी और दिशा मे उनकी प्रतिगति भी हुई है। युग के अन्त में वे कुछ बातों मे अपने पूर्वजो से श्रेष्ठ हैं, तो कुछ अन्य क्षेत्रो मे अवनत। प्रत्येक दशक में या प्रत्येक शताब्दी में—विश्व के हरएक देश मे एक-समान प्रगति हुई हो—ऐसा तो मुझे दिखलाई नही देता। मानवता कभी भी यह कहने के योग्य नहीं हुई— "प्रतिदिन, प्रत्येक प्रकार से, प्रत्येक क्षेत्र में मै श्रेष्ठतर होती जा रही हूं।" मानवजाति की सुदीर्घकालीन यात्रा अनियमित, अस्तव्यस्त, क्रमहीन, बेतरतीब और उलट-पुलट चलती रही है। न तो यह एक सीधी सरल रेखा के समान रही है और न ही गोल चक्र के समान और न सर्पाकार, या किसी अन्य विशेष आकार या निश्चित आकार मे होती रही है। यह तो कभी ऊपर-नीचे, कभी नीचे-ऊपर, कभी आगे-पीछे, कभी पीछे-आगे, कभी दाएं से बाएं, कभी बाएं से दाएं, और कभी बिना कानून, बिना नियम—अनियमितता-अराजकता की दशा मे रही है। मानवता की उक्त विभिन्न दशाएं नर-नारियों की गुणशीलता या दुष्टता, उद्यमशीलता या आलसीपन, बुद्धिमत्ता या मूर्खता, रचनात्मकता या क्षयात्मकता, क्रान्तिकारिता या रूढ़िवादिता पर आश्रित रही है।

मैं किसी भी अज्ञात विकास-नियम में विश्वास नही रखता, जोकि व्यक्तित्व से स्वतन्त्र कार्य करता हो। यदि व्यक्तित्व को एक निश्चित श्रेष्ठता के स्तर तक रखा जाए, तो समाज सभ्यता के मार्ग पर अग्रसर होगा। यदि व्यक्तित्व को पतन के गर्त मे गिरने दिया जाएगा, तो समाज का क्षय होने लगेगा, उसकी प्रगति का मार्ग स्वतः रुक जाएगा। सभ्यता की तुलना एक उद्यान से की जा सकती है। और व्यक्तित्व उसका माली है। यदि माली क्रियाशील है, सुप्रशिक्षित है, कुशल है, कारीगर है—तो उद्यान सुन्दर तथा शानदार होगा। लेकिन यदि माली सुस्त है, आलसी है, असावधान है, अनाड़ी है—तो व्यर्थ के झाड़-झंखाड़ तथा कांटेदार झाड़ियां—फल-फूलवाले पेड़-पौधो-बेलो का गला घोंट देंगी।

एक सर्वेक्षण

अब मैं अतीतकाल की सभ्यताओं पर संक्षेप से विचार करूंगा। इसका भी संकेत करूंगा कि उनकी प्रगति या अवनति के क्या-क्या कारण थे। इससे हमें यह शिक्षा मिलती है कि व्यक्तित्व के कौन-से विशेष गुण हैं, जिनके कारण प्रगति होती है।

मिस्र और बेबीलोनिया का उत्थान हुआ और ये फूले-फले; क्योंकि वहां की आर्थिक स्थिति सामाजिक विकास के लिए बहुत अनुकूल थी। इन उर्वर देशों मे भोजन सुगमता से प्राप्य था। मिस्रवासियो ने सर्वप्रथम कला (मूर्तिकला और स्थापत्यकला) में तथा आचार-विज्ञान में महानता प्राप्त की। किन्तु सैनिकवाद, मिथ्या विश्वास और सामाजिक असमानता के कारण उसका पतन हुआ। पहले तो पुजारी वर्ग ने विज्ञान का संवर्द्धन किया; किन्तु शीघ्र ही वे पतित हो गए और पराशी तथा रूढ़िवादी श्रेणी बन गए। वे पाशविक वृत्तियों को बढ़ावा देने लगे। परलोक संवारने की धुन में इहलोक का जीवन क्रियाशून्य तथा शक्ति-रहित हो गया। वहां प्रजातन्त्र न था और दमन व अत्याचार के विरुद्ध कोई संरक्षण न था। हमें विद्रोह या विप्लव की घटनाएं बहुत कम पढ़ने को मिलती हैं। समाज में स्त्रियों का ऊंचा दर्जा था और वे अधिक स्वतन्त्रता का अधिकार रखती थीं। लोगों में व्यक्ति के सम्मान और स्वतन्त्रता की कोई भावना न थी। अतएव वे सामाजिक गुलामी में पिसते थे। राजा और सामन्त वर्ग द्वारा किये जाने वाले शोषण का विरोध न करते थे। मिस्र ने अनेक मतिमान् व्यक्तियों और दार्शनिकों को जन्म दिया, जैसे प्ताह् हेतप, काकेम्ना, हेरुतातफ, तुआऊफ, अनी, आमेन हेतप इत्यादि।

बेबिलोनियन लोगों ने विज्ञान (नक्षत्र-विद्या), कला (स्थापत्य), तथा शासन (हम्मूरबी के राजनियम) इत्यादि में पर्याप्त प्रगति की। वे मृत्यु के बाद जीवन के विषय में न भयभीत थे और न चिन्तित। किन्तु अपने देवी-देवताओं की उपासना में वे भी मिस्रियों की ही भांति पवित्र थे। मिस्र की ही भांति—निरंकुश शासन तथा पुरोहित-वर्ग ने इस सभ्यता के विकास का मार्ग भी अवरुद्ध कर दिया। हम राशि पक्ष (Zodiac), समय के महीनों, घंटों और मिनटों में विभाजन, तथा सप्ताहों के सात दिनों में विभाजन के लिए बेबिलोनियन सभ्यता के ऋणी हैं।

असीरिया में भी सभ्यता का विकास हुआ; किन्तु घोर अत्याचारी साम्राज्यवाद ने जनता के चरित्र को नष्ट कर दिया और सभ्यता का पतन हुआ। किन्तु असीरियन्स ने बेबीलोनियन साहित्य के महान

पुस्तकालय स्थापित किए। असीरियन साम्राज्य ने बैबीलोनिया से संस्कृति उधार ली और फिर अपने आसपास के देशों में उसका प्रसार किया। यूनान भी इसके सम्पर्क में आया। असीरियन साम्राज्य ने इस उत्तम उद्देश्य मे बड़ी सहायता दी। किन्तु अन्यायपूर्ण युद्ध ने इस सभ्यता का अन्त लाकर उपस्थित कर दिया।

फिनीशियन लोगों ने मिस्री तथा बैबीलोनियन संस्कृति का विदेशों में बड़ा प्रसार किया। फिनीशियन महान समुद्री नाविक और व्यापारी थे। उनकी अक्षरमाला यूनानी तथा रोमन लोगों द्वारा हमें प्राप्त हुई।

प्राचीन फारस में जोरोस्त्रियन धर्म के आधार पर एक उदात्त सभ्यता का विकास हुआ। इसने एक धर्मोपदेष्टा (Prophet=जोरोस्त्र) के आदर्श जीवन को अनुकरणीय तथा प्रेरणास्रोत बनाया। यह एक बड़े लाभ की बात हुई; क्योंकि व्यक्तित्व ही प्रगति की नींव है। जोरोस्त्र मत ने धार्मिक द्वैतवाद को जन्म दिया। किन्तु आगे चलकर नेकी की बदी के ऊपर विजय का मत्र दिया। इस मत ने विचार, शब्द तथा कार्य में पवित्रता के महत्त्व पर बल दिया। इसने कृषि का सम्मान किया, शारीरिक व्यायाम और स्वच्छता पर जोर दिया और सचाई को आवश्यक बताया। किन्तु इस धर्म-विश्वास (मजहब) में दूसरे धर्मों के प्रति सहिष्णुता न थी। इसके पुरोहित-वर्ग ने अनेक मिथ्या विश्वासों का आविष्कार कर लिया, जैसे—स्वर्ग, नरक, मृत्यु-उपरान्त जीवन तथा ईश्वरीय न्याय का दिन आदि। इन मिथ्या विश्वासों को हिब्रू लोगों ने उधार लिया और उनसे ईसाई मत तथा इस्लाम ने इन्हें अंगीकार किया। फारस अन्ध-विश्वासों और मिथ्या धारणाओं का गढ बन गया। अनेक शताब्दियों तक आचार-सम्बन्धी स्तर बहुत ऊंचा रहा; किन्तु किसी प्रकार की प्रजातन्त्र-संस्थाएं स्थापित न हुईं। हैरोडोटस बताता है कि पारसी लोग प्रजातन्त्र की अपेक्षा निरकुश राजतन्त्र को क्यों प्रश्रय देते थे। पर्सिपोलिस के विशाल खंडहर, मानो का जीवन और उसके विचार, मित्राइज्म पारसी धर्म से ही ईसाई मत ने ग्रहण किया। साइरस तथा नौशेरवान के नाम तथा कार्य-कलाप, जोरोस्त्र के उपदेश, फिरदौसी का युग, और पारसी लोगों का भारत पर चारित्रिक प्रभाव—ये सब पारसी सभ्यता की देन हैं। साम्राज्यवाद ने उच्चवर्ग के लोगों के चारित्रिक बल को नष्ट कर दिया। मिथ्याविश्वासों तथा रूढिवाद की गुलामी ने जनता को बंधन में जकड़कर रख दिया। यही कारण हुआ कि इतना विशाल देश मैसीडोनियन्स तथा अरबों के आक्रमणों का प्रतिरोध करने में असमर्थ रहा। पारसियों ने भारतीय साहित्य तथा लोककथाओं को ग्रहण किया, शतरंज का खेल

क्रूर मिथ्या विश्वासों (पौराणिक ढोंगों) ने प्राचीन मेक्सिको को गुलाम बनाकर रख दिया था। वहां के लड़ाकू कबीले अपने युद्धबन्दियों को देवता के लिए बलि चढ़ा देते थे। छोटे परिमाण के साम्राज्यवाद ने निरन्तर के संघर्ष को जन्म दे दिया था। कुछ सीमा तक भौतिकवादी संस्कृति का विकास भी किया गया। सचित्र ऐतिहासिक रिकार्ड रखने का इन्होंने रिवाज चलाया। कोरटेज लोगों ने आसानी से मेक्सिकी लोगों को जीत लिया, क्योंकि अजतेक समाज, मिथ्या विश्वासों और राजनैतिक अत्याचारों के कारण, दुर्बल हो गया था। ट्लाक्सक्लान कबीले ने आक्रमणकारी कोर्टेज की सहायता की।

पेरू में, इन्का लोगों ने, जो कि पर्वतवासी थे, एक सभ्यता को जन्म दिया और एक साम्राज्य की भी स्थापना की। वे सूर्य को पूजते थे। वे अपने अधीन कबीलों को, अपना मजहब मनवाने के लिए मजबूर करते थे। उन्होंने कुजको में एक महान् सूर्यमन्दिर का निर्माण किया, जिसके आधार पर वर्तमान गिरजाघर बना हुआ है। मिस्रियों की ही भांति, वे अपने शासकों के मृत शरीरों को ममी के रूप में रखते थे। वे प्रेतवाद (Cult of the dead) में बहुत विश्वास रखते थे। वे एक प्रकार के राज्य-समाजवाद में रहते थे, जिसका प्रशासन अफसरशाही के हाथ में था। सब प्रकार का समस्त उत्पादन राज्य की सम्पत्ति होता था और प्रत्येक के लिए काम करना अनिवार्य था। समस्त साम्राज्य में सबको समान भोजन-वितरण का प्रबन्ध था और भूख से कोई न मरता था। लेकिन राज्य का नियंत्रण बहुत अधिक था। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर बहुत अधिक प्रतिबन्ध था। नेताओं के आपसी झगड़ों तथा ईर्ष्या-द्वेष ने राज्य को दुर्बल बना दिया। पिजारो ने इस स्थिति का लाभ उठाया। इस मनोरंजक राज्य का पतन मिथ्या विश्वासों तथा निरंकुश शासकों के कारण हुआ।

चीन ने एक प्रगतिशील सभ्यता का विकास किया, जो अभी तक जीवित है। चीनी लोग भाग्यशाली थे कि उन्हें सभ्यता के आरंभिक काल में ही कई महान् नेता मिल गए थे। कन्फ्यूशियस ने उन्हें नैतिक आचार संबंधी शास्त्र प्रदान किया। वह मिथ्याविश्वासी नहीं था। उसने सामाजिक कर्त्तव्यपालन तथा व्यावहारिक आचार-विचारों की शिक्षा दी। उसने आर्थिक प्रगति तथा शिक्षा पर बहुत बल दिया। वह गिने-चुने धार्मिक नेताओं में से है जो विद्वान् भी थे तथा शिक्षा का मूल्य जानते थे। उसने सुशिक्षित दार्शनिक श्रेणी का संगठन किया और राज्य के शासन का प्रबन्ध उनके हाथ में दिया। चीनी सभ्यता की मानवजाति को यह बहु–

मूल्य देन है। सुंग राजवंश के अन्त तक चीन प्रगतिशील रहा। कन्फ्यूशियस ने 'परिवार' को अत्यधिक महत्ता दे दी थी। अतएव जनता में समाज-भावना का विकास न हो सका। वहा परिवार के प्रति कर्त्तव्य की भावना बहुत प्रबल रही, नागरिकता की भावना वहा नही पनप सकी। पूर्वजो की पूजा-भावना के कारण राष्ट्र सकीर्ण प्राचीनतावादी हो गया। चीन के नाटको ने जनता को चिरकाल तक प्रभावित किया। चीन की चित्रकला विश्व को एक महान् देन है।

ताओवाद ने चीन मे रहस्यवादी भावनाओं को जन्म दिया। किन्तु इसमें मानवतावाद तथा विश्वजनीनता की भावना कन्फ्यूशियस से अधिक है। धीरे-धीरे इस मत के लोग महन्तवाद और परजीवी लोगो के हाथ में चले गये। कन्फ्यूशियस मत बुद्धिमत्तापूर्ण और युक्तियुक्त है, किन्तु उसमे चारित्रिक उत्साह का अभाव है, जिससे पथप्रदर्शक और सन्त पैदा होते है। साथ ही यह मत विश्व-मानवता के लिए, चीनी कट्टर-राष्ट्रवाद का जन्मदाता है।

चीन का इतिहास हमें यह शिक्षा देता है कि समाज के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उसके पास बुद्धिसंगत, तर्कपूर्ण और युक्तियुक्त धर्म हो, जिसकी स्थापना किसी बुद्धिमान पथप्रदर्शक ने की हो। व्यक्तित्व जनता मे एकता पैदा करता है और उन्हे विकारग्रस्त होने मे बचाता है। परिवार की एकता तथा स्थिरता द्वारा, समाज की अव्यवस्था तथा विशृंखलता से रक्षा होती है। सामाजिक उद्देश्यो के लिए स्वेच्छा से मेलजोल अनेक गुणो को उत्पन्न करने वाला गमला है। सभा-समाज की इस स्वतन्त्रता का अवश्यमेव संरक्षण किया जाना चाहिए, इसीसे समाज की प्रगति हो सकती है। बुद्धमत तथा ताओवाद के कारण चीन में मिथ्या विश्वास फैले। इससे चीन की पुरानी सभ्यता का ह्रास हुआ। अन्य प्रगतिशील सभ्यताओं से सम्पर्क का अभाव भी चीनी सभ्यता के ह्रास का कारण हुआ। औरों से कटकर अलग-अलग रह जाने के कारण इस सभ्यता मे उथलापन आ गया। चीन में धार्मिक स्वतन्त्रता तथा सहनशीलता चिरकाल तक रही। इसीलिए एक चीन-वासी कन्फ्यूशियस मत, बुद्ध मत तथा ताओवाद से लाभ उठाने मे स्वतन्त्र था।

हिन्दू लोगों की शक्ति तथा वीरता के कारण भारत मे एक प्रगतिशील सभ्यता का विकास हुआ। हिन्दुओं ने दो गुणों पर अत्यधिक बल दिया—वीरता और सचाई। उन्होंने दो महान् पुरुषो के जीवन-वृत्तांत दो महाकाव्यों में सुरक्षित रखे जो आज तक चरित्र-सम्बन्धी शिक्षा प्रदान करने के साधन हैं। उन्होंने जनता के लिए राम को आदर्श पुरुष (मर्यादा

पुरुषोत्तम) स्वीकार किया। उसे सर्वगुणसम्पन्न, सुविकसित व्यक्तित्व-शाली, संगठनकर्ता माना, जिसमें शक्ति, सुन्दरता तथा सूक्ष्म बुद्धि का संयोग है, साथ ही उदात्त चरित्र भी है। प्राचीन हिन्दुओं का आदर्श वैसा ही था, जैसा हैलेनिक लोगों का। परिवार के प्रति कर्त्तव्यपालन तथा स्थिर परिवार की भावना के संस्कार दिए गए। हिन्दुओं ने धार्मिक सहनशीलता के सिद्धान्त का भी विकास किया। सम्राट् अशोक ने अपने शिलालेखों में इस विचार को भली भाँति व्यक्त किया है। उस दिन से आज तक हिन्दू तथा बौद्ध, पूजा-विधि या सिद्धान्तों के कारण, कभी एक-दूसरे से नहीं लड़े-झगड़े। इस सहनशीलता की प्रवृत्ति के कारण वे पारसी लोगों को शरण देने में समर्थ हुए, जो आक्रमणकारियों के अत्याचारों से जोरोस्त्र मत की रक्षा के लिए भागकर भारत आ गए थे, और आज भारत में पारसी मत, फारस से भी अधिक फल-फूल रहा है। जाति-प्रथा, लगातार रहने वाली आन्तरिक अशांति, धन का अति संग्रह, उच्च वर्णों तथा पंडे-पुजारियों, पुरोहितों के भोग-विलास और भ्रष्टाचार, निरंकुश राज-शासन प्रथा, और केन्द्रीय शासन के अभाव के कारण हिन्दू राजनीति का पतन आरम्भ हुआ, जब अफगानों ने उत्तरी भारत में आक्रमण किए और मुस्लिम राज्य स्थापित किए। मुसलमानों के राज्य में, बहुत-से धार्मिक आन्दोलन चलाए गए, जिससे जाति-भेद को समाप्त किया जाए और पुरोहित-वर्ग की गुलामी दूर हो। इस काल में महान् स्थापत्य-कला ने देश की शोभा बढ़ाई। यह अफगान-मुगल स्थापत्यकला, मानव-सभ्यता के लिए, भारतीय सभ्यता की अद्भुत देन है। मुगल बादशाहों के अत्याचारों ने राष्ट्र को उत्तेजित किया। उन्होंने विदेशी शासन का प्रति-रोध शुरू कर दिया। सिख तथा मराठा आन्दोलन चले, जिनमें देश के बहुत बड़े भाग में पुनः राष्ट्रीय स्वाधीनता की स्थापना हुई। सिखों ने धार्मिक तथा सामाजिक सुधार के आन्दोलन के साथ राजनैतिक आन्दोलन को संयुक्त कर दिया। इस विषय में सिख आन्दोलन की प्यूरिटनिज्म से तुलना की जा सकती है।

आधुनिक काल में, ब्रिटिश सभ्यता का भारत पर बहुत भारी प्रभाव पड़ा। इससे एक नया आन्दोलन चला तथा एक नयी विचार-तरंग पैदा हुई। भारत जोकि चिरकाल तक रहस्यवाद और अध्यात्मवाद का गढ़ रहा, वह सहिष्णु तो था किन्तु अकर्मण्य और सामाजिकता की भावना से शून्य था। इस देश की दार्शनिकता ने आध्यात्मिक जीवन पर इतना जोर दिया कि लौकिक जीवन में यह देश पिछड़ गया। मध्ययुग में भी और आधुनिक युग में, भौतिक उन्नति की दृष्टि से पीछे रह गया। पुरोहित-वर्ग

तथा निरंकुश शासकों ने जनता को नाना बन्धनों में जकडकर पंगु बना डाला। आबादी की बहुसंख्या निरामिषभोजी बन गई। इससे जनता में कोमलता, नम्रता, सज्जनता आ गई; किन्तु इसके लाभ हुए तो हानियां भी हुईं।

हेलास के इतिहास ने, प्राचीन विश्व को एक मनोरंजक तथा महत्त्व-पूर्ण सभ्यता प्रदान की थी। इन्होंने मानवजाति को सर्वोत्तम महाकाव्य, नाट्य, कविता, सर्वोत्तम मूर्तिकला तथा सर्वोत्तम दर्शनशास्त्र प्रदान किया। साथ ही इसने अति श्रेष्ठ स्थापत्य, गीतिकाव्य, कविता, भाषण-कला और इतिहास प्रदान किया। इसने रेखागणित, ओषधि-विज्ञान, तथा मैकेनिक्स प्रदान किया। इसकी दार्शनिकता बुद्धिवाद, न्याय, स्वतन्त्रता तथा विज्ञान पर जोर देती है। इसने विश्व-मानवता के सिद्धान्त को भी उपलब्ध किया। किन्तु राजनीति में यूनानी लोग नगर-राज्य से आगे नहीं बढ़े यद्यपि संकटकाल में कई बार उन्होंने राज्यपरिषद (Federation) का संगठन किया। इनके नगर सदा ही परस्पर लड़ते रहते थे और युद्ध के नियम अत्यन्त क्रूर तथा बर्बरतापूर्ण थे। दास-प्रथा एक स्वीकृत परम्परा थी। यहां तक कि प्लेटो (Plato) को भी एक बार गुलाम के तौर पर बेच दिया गया था। धनी और निर्धन के वर्ग-संघर्ष की समस्या को स्पष्टतया समझा जाता था तथा समाजवाद और साम्यवाद के सिद्धान्तों पर खुलकर चर्चा होती थी। चीन की भांति, यहां भी शिक्षा में संगीत की शिक्षा पर बहुत अधिक जोर दिया जाता था। हैलेनिक सभ्यता के दोष ये थे—गुलामी की प्रथा, आन्तरिक युद्ध, अप्राकृत समलिंगी व्यभिचार, दुर्बल के प्रति दया का अभाव। किन्तु यूनानी सभ्यता वस्तुतः मानव-सभ्यता की रीढ़ की हड्डी है। इसमें यदि बौद्धमत, ईसाई धर्म तथा बुद्धि-वाद के गुणों का सम्मिश्रण किया जाए, तो भावी सभ्यता के लिए यह एक आधार हो सकता है।

रोमन लोग वास्तव में संगठित डाकुओं का निर्दय टोला था। रोमन 'सभ्यता' केवल हैलेनिक संस्कृति का झीना आवरण था। वे निर्दय, अत्याचारी, शोषक और इन्द्रियसुखभोगवादी थे। किन्तु उन्होंने संसार को राजनैतिक संगठन का विचार प्रदान किया। उन्होंने राज्य के हित में व्यक्ति के हितों का बलिदान करने का विचार पैदा किया। रोम साम्राज्य की एकता एक अद्भुत उपलब्धि थी, जिससे इटली के लोगों ने संसार पर धाक जमा दी। इस साम्राज्य का जब विकास हुआ, तो स्टोइक्स तथा क्रिश्चियन्स द्वारा उपदिष्ट अन्तर्राष्ट्रीयतावाद (Cosmopo-litanism) का आदर्श प्रत्यक्ष रूप में परिणत हुआ। रोमन साम्राज्य ने

अन्तर्राष्ट्रीय राज्य की स्थापना करके दिखला दी। जब गाल्स लोगों को सीनेट में प्रवेश की अनुमति दी गई, तो विश्व में एक नये सिद्धान्त का जन्म हुआ। नागरिकता की स्थापना से जाति तथा राष्ट्र के भेद-भाव समाप्त हो गए। रोमन्स ने पूर्वी मेडिटेरेनियन लोगों को भी एक राज्य के रूप में सगठित किया, यद्यपि ईसाई मत ने उन्हें सामाजिक रूप में इससे पूर्व ही एक कर दिया था। इस प्रकार बाइज़ेन्टाइन स्टेट का उदय हुआ, जो भद्दी तथा ईर्ष्या-द्वेष, वैर से भरी हुई थी; किन्तु फिर भी उसने अपने मुख्य केन्द्र कुस्तुनतुनिया में ग्रीक साहित्य तथा दार्शनिकता के अमूल्य रत्नों का सरक्षण किया। एथेंस की दार्शनिक विचारधारा की परम्परा समाप्त होने के बाद (सन् 529 ई० में) यूनानी सभ्यता केवल कुस्तुन-तुनिया के विश्वविद्यालय में ही जीवित थी। कुस्तुनतुनिया से इटली को ग्रीक विद्या की प्राप्ति हुई और यहीं से आधुनिक सभ्यता का जन्म हुआ। इस प्रकार फ्लोरेन्स का कुस्तुनतुनिया के मार्ग से रोम के साथ सम्पर्क जुड़ा। लैटिन भाषा को लुक्रेशियस के यूनानी साहित्य पर गर्व है, जोकि एकमात्र बुद्धिवादी महाकाव्य है। रोमन सभ्यता के ये दोष थे—राज-नैतिक अत्याचार, आर्थिक शोषण, प्रशासनिक (अफसरी) लूट, भद्दे तथा निर्दयतापूर्ण मनोरंजन, व्यापक सैनिकवाद, और खूब फैले हुए मिथ्या विश्वास। ट्यूटन्स द्वारा पश्चिमी साम्राज्य का पतन, विश्व के लिए एक वरदान था; क्योंकि वे बर्बर नहीं थे।

पूर्वी रोमन साम्राज्य ने ग्रीक संस्कृति की रक्षा करने में उपेक्षा दिखलाई। किन्तु सिरासिन्स (Saracens) तथा तुर्कों के विरुद्ध कई शताब्दियों तक युद्ध करने में यही अग्रणी रहा। यदि एशिया के मुसलमान, यूरोप द्वारा मध्यवित्त वर्ग पैदा करने से पूर्व, कुस्तुनतुनिया पर कब्जा कर लेते, तो सभवतः तमाम ग्रीक हस्तलिखित ग्रन्थों को वे समाप्त कर देते। सब यूनानी साहित्य का दुनिया से निशान मिट जाता, जिस प्रकार फारस से जोरोस्त्रियन साहित्य मिट गया। इस प्रकार बाइजेन्टियम ने इतिहास में बड़ा महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा किया है और हमें अवश्य ही उसके कृतज्ञ होना चाहिए। बाइजेन्टाइन मिशनरियों ने रूसी तथा स्लाव लोगों को भी ईसाई बनाया और इन बर्बर जातियों को यूरोप के अन्य राष्ट्रों की पंक्ति में ला खड़ा किया। रूस में क्रिश्चियन चर्च ने जनता का सामान्य गुणों तथा सज्जनता और दयालुता का उपदेश दिया और मानवता के हेतु ऊँचे दर्जे का त्याग और बलिदान सिखलाया। ईसाई मत ने ही हर्जेन, टालस्टाय और राज्य-क्रान्ति के नेताओं का मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रकार लाल रूस का घनिष्ठ सम्बन्ध साम्राजी बाइजेन्टियम से है। कला के आरम्भिक

आदर्श (मेडोना आदि) का बाइज़ेन्टाईन से गहरा संबंध है। यह कुस्तुन-तुनिया ही था, जिसने बगदाद के अरबी दरबार में ग्रीक विद्वान् प्रस्तुत किये और यूनानी पुस्तकों का अरबी में अनुवाद हुआ। बाइजेन्टियम ही इस्लामी देशों में भी पुनर्जागरण (Renaissance) मूल स्रोत था। किन्तु हैलेनिक आन्दोलन को मुस्लिम रूढ़िवादी मुल्लाओं ने कुचल दिया। अतएव इस्लामी समाज पर उसका कुछ प्रभाव न हुआ। बाइजेन्टाइन सभ्यता के दोष ये थे—निरंकुश शासन, अफसरशाही, जमींदारी, पर-धर्म-असहिष्णुता इत्यादि।

मध्ययुगीन यूरोप के इतिहास को प्रायः अन्धकार युग (Dark Age) कहा जाता है। किन्तु इस युग में जो पीढ़ियां जीवित थी, मानवता के लिए उन्होंने अनेक उपलब्धियां प्राप्त की। पश्चिमी साम्राज्य के पतन तथा इटली के पुनर्जागरण के मध्य में, एक नये ढंग की चारित्रिक श्रेष्ठता का विकास किया गया। यद्यपि उसमें कुछ दोष थे; किन्तु वह अपने तरीके की एक अपूर्व और शानदार थी। सेंट बेनेडिक्ट ने मोंट केसिनो में अपने मठ की स्थापना की। उसके अनुयायी प्रत्येक भिक्षु का जीवन सादगी, शारीरिक परिश्रम, अध्ययन तथा शिक्षा-प्रदान का आदर्श था। उन्होंने हैलेनिज्म तथा ईसाइयत के सर्वोत्तम पक्षों का सम्मिश्रण करने का प्रयत्न किया। उनके हाथ में आकर क्रिश्चियेनिटी एक प्रगतिशील आन्दोलन बन गया। उन्होंने उत्तरी यूरोपीय देशों को ईसाई बनाया। उनके आश्रमों तथा अस्पतालों ने क्रूरता के उस युग में प्रेम का प्रवाह बहाया। ये निःस्वार्थ दार्शनिक ब्रह्मचारी रहते थे। साथ ही, संत संप्रदाय (Monasticism) ने कुछ निर्धन नर-नारियों को सामान्य जीवन के कष्टों के अभिशाप से मुक्त होने के लिए शरण दी, जिन्होंने साहित्य, कला, तथा विज्ञान में बड़ा यश पाया। मध्ययुग के पूर्वार्ध में, चर्च एक प्रजातान्त्रिक संस्था था, जो जनता का एक संगठन था, न कि राजाओं और सामन्तों का। एक निर्धन किसान का पुत्र पादरी का गौरवपूर्ण पद प्राप्त कर सकता था, जो सामन्त और लार्ड पर नियन्त्रण रखता था। बाद में, चर्च भी शोषक वर्ग में, एक सहयोगी के रूप में सम्मिलित हो गया। किन्तु प्रजातन्त्र के लिए केनोस्सा एक विजय थी, पादरीवाद के लिए नहीं। उस समय प्रजातन्त्र का गठन एक धार्मिक तथा पितृस्नेहपूर्ण अधिकारी के रूप में ही हो सकता था। प्रजातान्त्रिक तथा सामाजिक समन्वयपूर्णता का अचल प्रत्यक्ष प्रमाण देखना हो, तो गोथिक गिरजाघरों को देखिए, जिनके भव्य सौन्दर्य तथा गौरव को आधुनिक भवन भी प्राप्त नहीं कर सके। उनके आकर्षण और शक्ति का रहस्य है कि वे नगरवासी जनों

के प्रजातन्त्र तथा नैतिक आचार-सम्बन्धी आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते रहे हैं, जिनका सार विश्वास, आशा तथा प्रेम में समाहित है। ज्योंही एक बसता और फूलता-फलता त्योंही वह सामन्तवादी अत्याचार से अपने को मुक्त कर लेता, और एक गिरजाघर बना लेता, जो इसको सामाजिक क्लब, पूजाघर, नाट्यगृह, चित्रगैलरी तथा स्कूल-कालेज का एकमात्र अधिष्ठान बन जाता था। इन गिरजाघरों को केवल 'धार्मिक' संस्थान समझना भूल होगी, जैसे कि मोथोडिस्ट चर्च थे। ये अधिष्ठान तो सामाजिक भवन थे, जहां जाति का सम्पूर्ण जीवन ही केन्द्रित था। वे *संस्थान सामाजिक एकता के प्रतीक थे, खेद है कि उस सामाजिक एकता* का आज अभाव है। नगरों की मध्यवित्त श्रेणी ने पेरिस तथा आक्सफोर्ड के विश्वविद्यालय भी स्थापित किये, जहां निर्धन छात्र प्राचीन यूनानी ग्रन्थों के लेटिन अनुवाद पढ़ते थे। इस प्रकार, यूरोप में आंशिक पुनर्जागरण का आरम्भ हो गया था। आक्सफोर्ड तथा पैरिस कारडोवा, बगदाद तथा कुस्तुनतुनिया और रोम के रास्ते से एथेन्स के साथ सम्बन्धित हुए। उस महान् सुधारक सेंट फ्रांसिस ने जिस प्रजातान्त्रिक तथा नैतिक आचार-सम्बन्धी आन्दोलन का सूत्रपात किया, उसने कुछ समय तक तो परजीवी वर्ग को मुसीबत में डाल दिया; किन्तु उसे अपना आर्थिक कार्य-*क्रम त्यागने के लिए बाध्य किया गया। मध्ययुगीन समाज में, धन तथा* काम को पवित्र वस्तु नहीं समझा जाता था, जिसका भक्ति से कोई सम्बन्ध हो। लोग बहुत से अवकाश दिवस मनाते थे। यद्यपि उनके पास आवश्यक पदार्थों की बहुत कमी होती थी।

मध्ययुगीन सभ्यता के दोष थे—निरंकुश शासन, सामन्तवाद, ज़मीदारी, युद्ध, विज्ञान की अनभिज्ञता, मिथ्या विश्वास, दरिद्रता, महा-मारियां, अत्यधिक सत्ता और मठों में भ्रष्टाचार।

इस्लामी सभ्यता, जिसका आरम्भ अरबों की विजयों से हुआ, का आधार एक विश्वास और उपासना-विधि था। अतः धार्मिक विषयों में *यह असहिष्णु है। यह हैलेनिक पुनर्जागरण को आत्मसात् न कर सका,* जिसका आरम्भ खलीफा अलामामू ने किया था। इस्लाम में स्वतन्त्र विचार के ऊपर रूढ़िवाद प्रभावी था, और इस्लामी देश परिवर्तनहीन, प्रगतिहीन रहे। समाज में एक प्रजातन्त्र की भावना फैली, जैसेकि चीन में। किन्तु राजनैतिक प्रजातन्त्र से उनका अब तक भी बहुत कम परिचय है। एकेश्वरवाद ने इस संस्कृति को मूर्तिकला तथा चित्रकला से वंचित कर दिया; क्योंकि पैगम्बर मुहम्मद को यह बड़ा ख्याल था कि लोग पुनः मूर्तिपूजा न करने लगें। शराब की मनाही ने जनसाधारण को

गभीर तथा मितव्ययी बनाया। मुसलमान यदि उतनी अपनी चिन्ता करते, जितनी कि वे खुदा के गौरव और सम्मान की करते है, तो वे एक उत्तम सभ्यता के निर्माण मे सफल होते; क्योकि उन्होने सादगी, भ्रातृभाव तथा दान की भावना अपना ली थी। अतीतकाल मे स्त्रियो को पर्दे में—समाज से अलग-थलग रखने की वृत्ति ने समाज का ह्रास किया। कुछ क्षेत्रो मे शरीर भोग को ही प्रेम समझा जाता है। अनेक शताब्दियो तक वैज्ञानिक अध्ययन को निरुत्साहित किया गया। और कला-कौशल भी बद्ध तथा जड़ हो गए। फारस में, बहाई-वाद इस्लाम के मुकाबले पर प्रतिद्वंद्वी सिद्ध हुआ, जहा इस्लाम के विरुद्ध विद्रोह को फ्रांस के साहित्य तथा दार्शनिकता ने सहायता पहुचाई। टर्की ने पुरानी परम्पराओ को उखाड फेंका है, उसने मुस्लिम कानून को भी समाप्त कर दिया है, जो कि वास्तव मे मध्ययुग का अवशेष था। इस समय मुस्लिम देशो में बुद्धिवाद बहुत पनप रहा है। मुस्लिम सभ्यता के दोष है—मिथ्या विश्वास, असहिष्णुता, निरकुश शासन, जमीदारी प्रथा, अफमरशाही, सकीर्ण राष्ट्रवाद और सार्वजनिक शिक्षा का अभाव।

आधुनिक सभ्यता का आरम्भ ईसा की पंद्रहवी तथा सोलहवी शताब्दी मे, महान् पुनर्जागरण (Renaissance) के साथ-साथ हुआ। इसका मूल स्रोत हैलेनिक संस्कृति, कला, साहित्य, इतिहास तथा यूनानी दर्शन के पुनरध्ययन में था। इस प्रकार हैलास ने क्रिश्चियन चर्च से अपना प्रतिशोध लिया, जिसके नेता यह विश्वास करते थे कि उन्होंने हैलेनिज्म को सदा के लिए समाप्त कर दिया है। किन्तु हैलास कभी नहीं मर सकते। फ्लोरेंस के लोग तथा विशेषतया नवीन व्यापारिक तथा धनिक वर्ग ने ग्रीक के अध्ययन को प्रोत्साहन दिया। उत्तरी योरुप के देशों को नवीन उपदेश देने वाला ईसा का शिष्य इरेस्मस था। उसके आदेश से शिक्षा में सुधार किया गया। नये स्कूल-कालेजो की स्थापना की गई। कला को पुनर्जीवित किया गया। साहित्य तथा विज्ञान की रचना की गई तथा राजनीतिक समस्याओं पर बुद्धि-पूर्वक विचार-विमर्श होने लगा। उस काल से लेकर, आधुनिक संस्कृति उत्तरोत्तर दृढ से सुदृढतर होती चली गई। राज्य शासन को प्रजातन्त्रीय रूप दिया गया, और अधिक परिमाण में धर्म-निरपेक्ष बनाया गया। चर्च अपना सम्मान तथा यश खो रहे थे। शिक्षा आम जनता की पहुंच के योग्य बना दी गई। नगर की सफाई व्यवस्था मे सुधार किया गया। वैज्ञानिक खोजो तथा आविष्कारो ने समाज को सम्पन्न बनाया। बुद्धिवाद तथा बुद्धिसंगत नैतिक आचार-शास्त्र ने रूढ़िवाद तथा मिथ्या विश्वास का स्थान लिया। पुनर्जागरण की

तुलना में, सुधारवाद (Reformation) एक जनप्रिय आन्दोलन था। रिनेसा तो केवल उच्च तथा मध्यवर्ग तक ही सीमित था। पुराने कैथोलिक चर्च से प्रोटैस्टैंट्स ने बहुत से मिथ्या विश्वास उत्तराधिकार में प्राप्त किए थे, उनके साथ उन्होंने कुछ अपनी ओर से भी जोड दिये थे। एक प्रकार से उन्होंने एक प्रतिगामी आन्दोलन का नेतृत्व किया था। किन्तु कुल मिलाकर प्रोटैस्टैटिज्म ने प्रगति का काम अधिक किया था। इसने पादरियों और साधुओं के एक हजार वर्ष पुराने एकाधिकार को तोड़ दिया। इसने संगठित साधु-संप्रदाय को समाप्त कर दिया तथा उनके पवित्र अधिकारों तथा शोषण को समाप्त कर डाला। इससे लोगों ने धर्म के विधि-विधानों से छुटकारा पाया और वे अधिक सच्चे तथा ईमानदार बन गए। अनेक मत-मतान्तरों के द्वारा इसने ईसाइयत को सर्वथा श्रेयहीन कर दिया। मध्यवित्त लोगों तथा आम जनता को संगठित करके, इसने प्रजातन्त्र की भावना फैलाई, संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान तथा शिक्षा-विधि इसी की देन है, जो कि विश्व इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना है। प्रोटैस्टैटिज्म ने ईसाइयों को कई भागों में विभक्त कर दिया और इसने बाइबिल पर अंधविश्वास के सिवा ईसाइयत के अन्य सभी मिथ्या विश्वास समाप्त कर दिये। इसी कारण आगे चलकर बुद्धिवाद को पनपने का मौका मिला, यद्यपि आरम्भ में प्रोटैस्टैटिज्म के आंशिक बुद्धिवाद ने वैज्ञानिक बुद्धिवाद के विकास में बाधा पहुंचाई। किन्तु प्रोटैस्टैन्ट चर्च कला, ऐतिहासिक परंपरा, अथवा विज्ञान के मूल्यांकन में असफल रहा। कालविन के हाथों में आकर इसने राजनैतिक प्रजातन्त्र का नेतृत्व किया और अमेरिका में लोकप्रिय सरकार की स्थापना में सहायता दी। इसने सार्वजनिक साक्षरता पर बल दिया, (यद्यपि सार्वजनिक शिक्षा पर नहीं)। रिनेसा के पास आम जनता के लिए कोई सन्देश न था, और हम देखते हैं कि रिनेसा तथा रिफार्मेशन कई अंशों में एक-दूसरे से आगे थे। मेलंक्थन, इरेस्मस, डोलेट तथा अन्य प्रसिद्ध नेताओं ने दोनों आन्दोलनों में बढ-चढकर भाग लिया। बपटिस्ट पहला सम्प्रदाय था जिसने इंग्लैंड में सामान्य सहिष्णुता के सिद्धान्त का प्रचार किया तथा प्रोटैस्टैंट सम्प्रदाय की विविधता ने अन्तिम रूप में धार्मिक सहिष्णुता को असंभव तथा अव्यावहारिक बना दिया। जब प्रगतिशील आन्दोलन के रूप में सुधारवाद की शक्ति क्षीण हो गई, तो फ्रेंच क्रान्ति के अगुआ सक्रिय दिखाई दिये। इसी समय पूंजीवाद भी विकसित होना आरम्भ हुआ। फ्रेंच क्रान्ति ने सामन्तों, जमीदारों और पादरियों के शासन का अन्त कर दिया और सत्ता मध्यवर्ग के हाथों में सौंप दी, श्रमिकवर्ग उनके नम्र साथी बना दिये। इसने

व्यक्ति की भाषण-स्वतन्त्रता, सभा-स्वतन्त्रता-अधिकारों की घोषणा की और शासन पर पितृ-परम्परागत अधिकारों की निन्दा की। इसने विश्वास की स्वतन्त्रता तथा नास्तिकता को सामाजिक व्यवस्था मे खुली छूट दे दी। इसने सार्वजनिक शिक्षा की आधारशिला रखी। पहले प्रजातन्त्र आया, फिर सार्वजनिक शिक्षा ने उसका अनुसरण किया। इसने अर्थशास्त्र तथा राजनीति के अध्ययन को बढ़ावा दिया। और इसने अपना प्रेरणा स्रोत ग्रीस तथा रोम को बनाया, न कि फिलस्तीन को। इसे रिनेसा की राजनैतिक चरितार्थता भी कहा जा सकता है। किन्तु इसने विश्व मे राष्ट्रवाद को उत्तेजित किया। राष्ट्रवाद ने कैथोलिक चर्च की शक्ति को भंग करने का उपयोगी कार्य किया और इसने साम्राज्यवादी लिप्सा तथा आक्रमण से राष्ट्रों को सरक्षण दिया, परन्तु अब इसकी मियाद खतम हो चुकी है, इसका काम हो चुका, अतः अब इसकी विश्व को आवश्यकता नहीं है। फ्रेंच रिवोल्यूशन ने पूजीवाद को भी फैलने का लाइसेंस दे दिया, जिसने व्यक्तिवाद तथा आर्थिक प्रतियोगिता को गौरवमय स्थान दिया। पूजीवाद तथा राष्ट्रवाद—ये दो शक्तिया, जिन्होने गत शताब्दी मे विश्व को आगे बढाया था, उन्होने ही अब विश्व को युद्ध और दरिद्रता के गढ़े में धकेल दिया है।

पुनर्जागरण (रिनेसा) ने विश्व सस्कृति को दो भागों मे विभक्त कर दिया। एक तो वह जिसका आधार मिथ्या विश्वास है और दूसरी वह जिसका आधार बुद्धिवाद और उसका सहयोगी विज्ञान है। इतिहास का मुख्य राजमार्ग हैलेनिज्म है। अन्य आन्दोलन सहायक या आसपास की सड़के हैं। अंग्रेजी तथा फ्रेंच अध्यापकों के द्वारा यह नवीन सभ्यता अपने हल्के रूप में फारस, भारत, चीन, तथा अफ्रीका में भी पहुंची और इसने पुराने विश्वासों की जडें हिला दी। पुरानी बद्ध और रूढ़ संस्कृतियों के प्रत्येक क्षेत्र में इससे हलचल मच गई। इस प्रकार एथेंस का अमर साम्राज्य निरन्तर हो रहा है। किन्तु रिनेसा की पूर्ति होनी बाकी है। हैलेनिज्म को अवश्य ही अपने अन्दर कुछ ऐसे तत्त्वों का समावेश करना चाहिए जो उसके मूलस्वरूप में अन्तर्भूत थे; किन्तु क्रिश्चियेनिटी तथा बुद्धमत मे जिनका अभाव था। रिनेसा की चारित्रिक तथा सामाजिक पूर्ति अभी तक नही पूर्ण हो पाई। हैलेनिज्म तब तक पूर्ण नही हो सकता, जब तक कि नये प्लेटो, अरस्तू, तथा जेनोम नही पैदा होते, नयी अकादमिया नही खुलती और 'पूर्ण राष्ट्र मे पूर्ण नागरिक' की कल्पना कार्यरूप मे परिणत नही होती। रिनेसा समाप्त नही हो गया, अभी तक तो इसने अपना पूरा रूप भी नही दिखलाया है। इसकी पूर्ति नैतिक आचार तथा सामाजिक

क्षेत्र में अवश्य होनी चाहिए, जिस प्रकार कि यह कला, विज्ञान तथा साहित्य के क्षेत्र मे सफल हुआ है। अब इसे नयी दार्शनिकता, नये अर्थ-शास्त्र और नयी राजनीति का निर्माण करना है, जिनका आधार तर्क तथा स्वतन्त्रता होगे। हैलेनिज्म ने प्राचीन नैतिक आचारशास्त्र की जड़ें तक हिला दी हैं, जिनका आधार मिथ्या विश्वास तथा रूढि-रीति था। अब इसे नवीन नैतिक आचारशास्त्र तथा नवीन राज्य-शासन को जन्म देना है, जिसका आधार बुद्धिवाद हो।

4

मनोविज्ञान का ज्ञान

आप इस आवश्यक विज्ञान का अध्ययन दोनों प्रकार से करें – पुस्तकों से भी तथा प्रयोगशाला में भी। आपको इससे अत्यन्त बहुमूल्य शिक्षा प्राप्त होगी।

(1) आपको ज्ञात होगा कि मनोविज्ञान तथा शरीर-क्रिया विज्ञान अन्योन्याश्रित हैं। मन का शरीर पर भारी प्रभाव पड़ता है। जैसा कि स्पेंसर ने कहा है—"जैसी आत्मा होगी, वैसा ही शरीर का स्वरूप बनेगा।" किन्तु यह भी समान रूप से सत्य है कि शरीर ही मस्तिष्क को सांचे में ढालता और नियंत्रित करता है। ऐसा कोई भी विचार या भाव नहीं है जो अपने साथ तदनुसारी शारीरिक परिवर्तनों को न लाता हो। जैसे आंखों के बिना रूप-दर्शन, दांतों के बिना चर्वण, आमाशय के बिना पाचन नहीं हो सकता, उसी प्रकार मस्तिष्क के बिना चिन्तन भी सम्भव नहीं। मुझे यहां तक कहना चाहिए कि मनोविज्ञान के बिना शरीर-क्रिया-विज्ञान की स्थिति भी नहीं है। अनेक वैज्ञानिकों ने इस तथ्य पर उचित बल नहीं दिया।

(2) मनोविज्ञान का अध्ययन करते हुए यह विवाद आपके सम्मुख उपस्थित होगा कि क्या मानसिक तत्त्व, उदाहरणतः चिन्तन, विचार, भावना तथा उद्देश्य अभौतिक (immaterial) आत्मा (Self or Soul) की परिवर्तित स्थितियों के ही नाम हैं अथवा ये उस अंग (मस्तिष्क) की स्थितियों के नाम हैं, जिसमें इनकी अवस्थिति होती है। इस विषय में कई वाद हैं। कोई तो शरीर से भिन्न आत्मा की अवस्थिति मानता है, जो कर्ता है जो कहता है—"मैं सोचता हूं, मैं अनुभव करता हू, मैं कर्म करता हूं, मैं हूं।" लेकिन कुछ विद्वान कहते हैं कि यह अहंकार (Ego) है। कुछ लोग इसे आत्म-चेतना नाम देते हैं। यह अहंकार अथवा आत्म-चेतना एक प्रकाश के समान है। प्रकाश के द्वारा हम सब कुछ देखते हैं

किन्तु कोई ऐसी चीज है, जिससे प्रकाश को देखें। अस्तु, यह 'ईगो' ही सम्पूर्ण व्यक्तित्व का आधार तथा केन्द्र है। वह नही है (अहकार की कोई सत्ता नही है क्योकि वह दिखाई नहीं देता,) यह कथन उसी प्रकार असमीचीन होगा जैसे कोई अधिकारी किसी यात्री के जन्म प्रमाण पत्र खो जाने पर कहे कि उस यात्री का जन्म ही नही हुआ। वैज्ञानिक भले ही कहें इसे प्रयोगशाला और काच नलिका मे सिद्ध करो, नही तो इसकी सत्ता नही है, किन्तु विचारो तथा भावनाओ का निरन्तर प्रवाह क्या इसकी सत्ता को सिद्ध नहीं करता ? मैं अहकार के द्वारा सभी पदार्थों को सिद्ध करता हूं, किन्तु अहंकार को कोई पदार्थ सिद्ध नही कर सकता। कोई बाह्य उपकरण मुझ पर यह सिद्ध नही कर सकता कि मैं हूं। इसके विस्तार में जाना व्यर्थ होगा कि मस्तिष्क की विविध अवस्थाओं मे किस प्रकार आत्म-चेतना सक्रिय होती है।

(3) आपको मनोविज्ञान विश्लेषण के अद्युनातन तथ्यों तथा सिद्धान्तो से पूर्णतया परिचित रहना चाहिए, किन्तु आख मूदकर इन पर विश्वास करके इनका मानसिक 'दास' नही बन जाना चाहिए। फ्रायड, एडलर, जुग तथा अन्य विचारक एकागी दार्शनिक हैं, जैसे कि मार्क्स तथा कोम्टे। वे मानव स्वभाव के विविध, सश्लिष्ट एवं जटिल स्वरूप को एक ही सरल सिद्धान्त द्वारा समझाने का प्रयत्न करते हैं। आप मनो-वैज्ञानिक विश्लेषण के तथ्यो को समझने और उनकी समीक्षा करने का प्रयत्न कीजिए; किन्तु उसकी अत्युक्तियों को अस्वीकार कीजिए।

(4) आप मानस (psychic) शास्त्र में रुचि लीजिए जिसे आध्या-त्मिक भी कहा जाता है। एतत्सम्बन्धी आधुनिकतम अनुसन्धानो का अध्ययन कीजिए, उदाहरण चार्लस रिचेट, एच० प्राइस् तथा अन्य। किन्तु अपनी मनोवृत्ति निरन्तर वैज्ञानिक बनाये रहिये। किसी भी व्यक्ति या विचार के विषय मे पूर्वाग्रह मत रखिए। तथ्यो को देखना, उनका संग्रह करना अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु केवल तथ्यो का ही संग्रह कीजिए, किसी के कहने पर (चाहे 'वह' कोई भी हो) तथ्य मत मान लीजिए। विज्ञान इसमें आपकी सहायता करेगा। एक रूढिवादी आलोचक के लिए जो टेलीपेथी के अस्तित्व से इनकार करता है, उसे आप हैमलेट (*Hamlet*) के शब्दो में स्पष्ट कह दीजिए—"धरती और आकाश मे और भी वस्तुएं हैं, जिनका आपकी दार्शनिकता ने अभी स्वप्न भी नही देखा।" आपको चाहिए कि मस्तिष्क को खुला रखें और जिज्ञासावृत्ति, कौतूहल-प्रवृत्ति को जागृत रखें, किन्तु अन्धविश्वास तथा मिथ्या विश्वास से दूर रहें। मनोविज्ञान के अध्ययन मे धर्म या रहस्यवाद कोई सहायता नही कर सकते, विज्ञान

इसमें बड़ी सहायता कर सकता है।

(5) व्यवहारवाद—(Behaviourism) भी व्यक्तित्व की उपेक्षा करता है। यह मनोविज्ञान सम्बन्धी कुछ पक्षों के अध्ययन में सहायक है; किन्तु इसी में सारा मनोविज्ञान नहीं समा जाता।

(6) जब आप ईगो पर विश्वास करते हैं, तो आपको यह भी अवश्य स्वीकार करना होगा कि मानव मन में रचनात्मक शक्ति है, जो विकास की प्रक्रिया को अग्रसर करती है। मन केवल प्रभावों का निष्क्रिय ग्रहण-कर्ता ही नहीं है, बल्कि उनका उत्पादक भी है। मन किसी सर्वथा नवीन विचार अथवा भाव को भी जन्म दे सकता है जो सर्वथा मौलिक हो और विश्व में अभी तक कहीं भी व्यक्त न हुआ हो। जिस प्रकार कोलम्बस ने पहले से विद्यमान अमेरिका को खोज निकाला और विश्व पर प्रकट कर दिया, मन केवल इतना ही काम नहीं करता। यह वस्तुतः उस विचार को भी जन्म दे सकता है जिसका पहले कोई अस्तित्व ही नहीं था। इस विज्ञान युग में इस तथ्य पर बहुत बल देने की आवश्यकता है।

5
अर्थशास्त्र से परिचय

अर्थशास्त्र के अध्ययन में आपको पर्याप्त समय और मन लगाना चाहिए। इसकी गणना भी मूल विज्ञानों में है। भोजन, वस्त्र, आवास—अब तक भी मानव जाति की शक्ति का बहुत-सा भाग इनका प्रबन्ध करने में व्यय होता है। पदार्थों का उत्पादन, वितरण तथा उपभोग—ये गंभीर अध्ययन के विषय हैं। अर्थशास्त्र के अध्ययन से आपको इतिहास, राजनीति तथा समाजशास्त्र के गहरे अध्ययन के लिए अन्तर्दृष्टि प्राप्त होगी। अर्थशास्त्र आपको अनेक युद्धों, क्रान्तियों, धर्मों तथा दलों के जन्म के कारण बताएगा। वर्तमान काल के राजनैतिक तथा औद्योगिक नेताओं के उद्देश्यों तथा कार्यविधियों पर भी यह प्रकाश डालेगा। यह आपके मन से जड़ता को दूर करेगा। एक सम्मेलन में मैं उपस्थित था। वहां किसी ने प्रश्न किया—"वास्तव में इंग्लैंड पर कौन राज्य कर रहा है?" इस प्रश्न के विभिन्न अनेक उत्तर दिये गए। जैसे, "संसद", "क्रिश्चियन धर्म", "जनमत", "समाचार पत्र", "अध्यापक" इत्यादि। जब मेरी बारी आई, मैंने कहा—"इंग्लैंड पर धन शासन कर रहा है।" सम्मानित महिलाएं तथा भद्रपुरुष यह सुनकर स्तम्भित रह गए। वे अर्थशास्त्र से अनभिज्ञ थे। अर्थशास्त्र के ज्ञान बिना आप राजनीति तथा समाजशास्त्र को हृदयंगम नहीं कर सकते, जिस प्रकार कि आप गणित के बिना भौतिक विज्ञान को नहीं समझ सकते। प्रथम विश्व महायुद्ध का कारण स्वतन्त्रता नहीं, प्रजातन्त्र नहीं, न्याय नहीं, शान्ति नहीं; बल्कि धन ही था।

अर्थशास्त्र का अध्ययन आपको यह समझने के लिए विवश करता है कि राष्ट्र के सुचारु रूप से चलाए जाने में सम्पदा का क्या महत्त्व है। इसमें आप उत्पादन पर विचार करते हैं; जो कि उपभोग पर आश्रित है। बहुत से अर्थशास्त्री उपभोग पर पर्याप्त एवं उचित रूप से विचार

नहीं करते; किन्तु आपको इस भूल से बचना है। यह विज्ञान हमें बताता है कि विचार करें कि हम क्या उपभोग करें और कितना ? अर्थशास्त्र को नैतिक आचार विज्ञान तथा मनोविज्ञान से पृथक् नहीं किया जाना चाहिए। अन्यथा यह केवल अंकों का खिलवाड़-मात्र रह जाएगा। संपदा हमारे उद्देश्य के लिए साधन है, अपने आप में यह उद्देश्य नहीं है, चाहे व्यक्ति की दृष्टि से सोचें या राष्ट्र की दृष्टि से। संपदा श्रेष्ठ व्यक्तियों के नियन्त्रण तथा निर्देश में रहनी चाहिए। किसी विशेष काल की आवश्यकता रूप उद्देश्य के अनुसार ही संपदा का परिमाण होना चाहिए। यह कथन असमीचीन होगा कि राष्ट्र को अपनी शक्ति के अनुसार पदार्थों का अधिकतम उत्पादन करना चाहिए; क्योंकि इसी से राष्ट्र को महत्तम कुशलता तथा सुख की प्राप्ति नहीं होगी। क्योंकि ऐसी अनेक बातें हैं जो पदार्थों की अपेक्षा अधिक महत्त्व रखती है। यह तथ्य आपको एकांगी अर्थशास्त्री के विचार-प्रभाव से बचाएगा। जिस प्रकार खनिक मजदूर कोयले की धूल से काला हो जाता है, उसी प्रकार कई अर्थशास्त्र के अध्ययनातिरेक के कारण एकांगी विचारक बन जाते हैं। वे जीवन के अन्य पक्षों की उपेक्षा करने लगते हैं।

आप अर्थशास्त्र का गहन और विस्तृत अध्ययन करें; किन्तु 'अर्थशास्त्रवादी' बनने से बचें। क्योंकि केवल आवश्यकता से अधिक उत्पादन-मात्र से मानव को सुखी नहीं बनाया जा सकता। चींटी और मधुमक्खी के जीवन का आदर्श अति संचय हो सकता है, किन्तु मानव का नहीं। इसके विपरीत आपको विदित होगा कि अनेक प्रकार के उत्पादन ऐसे हैं, जिनसे मानव व्यक्तित्व दुर्बल बनता है।

जब आप 'वितरण' की समस्या का अध्ययन करेंगे, तब आपको ज्ञात होगा कि सभ्यता का आधार न्याय होना चाहिए, न कि डाकूपन। आपका हृदय द्रवित हो जाएगा जब आप करोड़ों शोषित गुलामों का, दासों को, श्रमिकों को देखेंगे, जिनके जीवन का सारा श्रम-फल कुछ प्रबल तथा चालाक लोग हड़प कर जाते हैं। आपका खून खौल उठेगा कि समाज में कितना अन्याय है! तब आप निर्धन तथा पददलित के पक्षसमर्थन का बीड़ा उठाएंगे और निश्चय करेंगे आप अपना जीवन समानता के मंत्र के उद्देश्य में लगा देंगे। अर्थशास्त्र के अध्ययन से आप समाजवादी बन जाएंगे। तब आप कल्पना के संसार में विचरण करते हुए सोचने लगेंगे कि भविष्य में एक समाजवादी राष्ट्रकुल (Socialist Commonwealth) की स्थापना हो, जिसमें कोई शोषित न हो। रूढ़िवादी अर्थशास्त्रियों से सावधान रहिए, जो पूंजीपतियों के भाड़े के टट्टू हैं।

कोई भी प्राध्यापक अर्थशास्त्र को उसी तरह नहीं पढ़ा सकता, जिस प्रकार भौतिक विज्ञान तथा रसायन शास्त्र को पढा सकता है। उसे अवश्य ही प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप मे—किराया, ब्याज, लाभ आदि की या तो निन्दा करनी पड़ेगी या समर्थन, इससे आपको पता चल जाएगा कि उसके विचार क्या हैं। प्रेम तथा राजनैतिक विचार को छिपाया नही जा सकता। इसीलिए यदि आप पूजीवादी अर्थशास्त्रियों के ग्रन्थों का अध्ययन करेंगे, तो आप यह पाएगे कि उनके सचेतन अथवा अवचेतन मन मे पूंजीवाद का समर्थन विद्यमान है। इसके विपरीत यदि आप समाजवादी लेखकों की रचनाओ का अध्ययन करेंगे, तो आप हर प्रकार के शोषण का विरोध पाएंगे। आप फौरियर तथा मार्क्स (Marx) को अवश्य पढ़ें, जिन्होने अपनी अद्‌भुत प्रतिभा के द्वारा पूजीवाद समाज का विस्तृत विश्लेपण किया है। वे समाजवादी अर्थशास्त्र के प्रवर्तक हैं। आप ग्रे, ब्रे, थामसन तथा हाजस्किन की पुस्तकें भी अवश्य पढ़ें। इन प्रावतन विचारकों के लेखो से मार्क्स को अनेक विचार तथा सुझाव प्राप्त हुए थे। आप योर्नस्टीन वेबलिन के ग्रन्थ को भी अवश्य पढें, जो एकमात्र अमेरिकन विचारक है। मार्क्स के विचारो पर वारंवार पुर्नविचार कीजिए और वास्तविक मार्क्सवाद के मूल्य तथा महत्त्व को समझने का प्रयत्न कीजिए। यदि आप मार्क्सवाद को नही समझ सकते तो आप मानवता की प्रगति में कदापि सहयोगी नही हो सकते।

6

दर्शनशास्त्र में प्रवेश

आपको दर्शनशास्त्र के अध्ययन पर भी पर्याप्त समय लगाना चाहिए। फिलासफी से डरने की बात नही है। वह कोई हौआ नहीं है। फिलासफी तो 'बुद्धिमत्ता से प्रेम' है। यदि आप विचार करते हैं, तो इतने में ही आप दार्शनिक अर्थात् फिलासफर है। प्रत्येक मनुष्य या तो दार्शनिक है या मूर्ख !

दर्शनशास्त्र कई प्रश्नों तथा समस्याओं पर विचार करता है। उनमें कुछ एक समस्याएं अत्यन्त आवश्यक है; किन्तु कुछ अनावश्यक भी हैं। आपको अनावश्यक समस्याओं पर माथापच्ची करने की आवश्यकता नही।

लोगों ने फ़िलासफी को बदनाम कर दिया है, क्योंकि कई फिलासफरों ने बहुत अधिक समय तथा शक्ति का व्यर्थ की बातों पर अपव्यय किया है, जिन बातों का जन-साधारण के लिए कोई महत्त्व नही। प्राचीन विचारकों की अपेक्षा आधुनिक दार्शनिक इस विषय में अधिक दोषी है। उनकी बातों में से कुछ-एक तो निरा गोरखधन्धा है। इस प्रकार की व्यर्थ बातों पर समय गंवाना शोचनीय है।

(1) अनेक विचारक 'अव्यक्त', 'अज्ञात' 'चिरन्तन' की खोज के पीछे हाथ धोकर पड़े रहे; किन्तु वे किसी निश्चित परिणाम पर पहुंचने में असफल रहे है। भारतीय अध्यात्मवादी तथा उपनिषदकार 'अपरिमेय' की खोज में लगे रहे। प्लेटो तथा प्लोटिनस भी रहस्यमय अध्यात्म-जगत की जिज्ञासा में लीन रहे। जर्मन के आदर्शवादी विचारक : श्लीगल, फिक्टे तथा हीगलने 'पूर्ण' के विषय में इस प्रकार सब कुछ कह डाला मानो वह कोई उनका पड़ोसी हो। एफ० एच० ब्रेडले, बी० बोसांके, जे० एम० मक्टेगार्ट, जे० रायस तथा अन्य कई विचारकों ने उसी परम्परा को अपनाया है।

दर्शनशास्त्र मानव की उपलब्धि है, अतः मानव मस्तिष्क की ही भांति यह भी सीमित है। विज्ञान हमें बतलाता है कि 'स्थान-काल', 'घटना' तथा

'परिवर्तन' से परे कोई प्रमेय नही है। मानव 'अपरिमेय' को जानने मे, असमर्थ है। उसका मस्तिष्क सिर से बाहर उडकर नहीं जा सकता। मानव *व्यक्तित्व सर्वथा सीमित है। यद्यपि इसके विकास की 'इति' कही नहीं है।* बन्दर की अपेक्षा मानव इस विश्व को अधिक जानता है तथा सभ्य मानव आदिम बर्बर युग के मानव की अपेक्षा गहन दार्शनिकता उपलब्ध कर चुका है। यदि आप कुतुबमीनार पर जा चढ़ें तो आपकी दृष्टि पर्याप्त दूरी तक देखने मे असमर्थ हो जाती है। इसी प्रकार मानव न केवल भौतिक विकास की, अपितु दार्शनिकता की अनेक सीढ़िया चढ़कर पर्याप्त ऊंचाई तक पहुच चुका है। अब उसकी बुद्धि प्रकृति के रहस्यो को अधिक से अधिक जानने मे समर्थ है और मानव के इस ज्ञान मे निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। किन्तु प्रत्येक युग मे उसकी बौद्धिक शक्ति तथा उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ केवल अपूर्ण विश्लेषण करने मे ही समर्थ हो सकी हैं। वह सम्पूर्ण विश्व के रहस्यों को समझने मे समर्थ नहो हो पाया। इस विश्व को अथाह सागर से उपमा दी जा सकती है। फिर भी दर्शनशास्त्र के द्वारा उसने उन रहस्यो *का अध्ययन करने का प्रयत्न अवश्य किया है।*

फिर भी मानव अपने को एक कैदी की भांति अनुभव करता है, जिसे कारागार के प्रागण तक ही जाने की अनुमति है। मानव करोडों वर्षों के अनन्तर कितना सुनने, देखने या समझने की शक्ति प्राप्त कर लेगा, इस सम्बन्ध मे हम कोई भविष्यवाणी नही कर सकते; किन्तु इतना अवश्य है कि जितना अब तक मानव का विकास हो चुका है, उसके अनुरूप उसकी दार्शनिकता का विकास हो चुका है और हमें उस विकास से अवश्य ही परिचित होना चाहिए। आप उन सभी दार्शनिकों पर अविश्वास करें, जिन्होने समस्त विश्व की व्याख्या करने का प्रयास किया है और जो यह कहते है कि वे विश्व को सम्पूर्ण रूप से जानते हैं। वे सभी नीम हकीम हैं। बुद्धिमान दार्शनिक को कहना अवश्य आना चाहिए—"मैं नही जानता, मैं नही जान सकता।"

दार्शनिक के लिए विज्ञान एक सुरक्षित पथप्रदर्शक है। अतीत काल मे प्राय. दार्शनिकता को विज्ञान से पृथक् करने का प्रयत्न किया गया है। दार्शनिक प्राय: तार्किक ही होते रहे है, विश्वदर्शन का प्रयत्न अवश्य करते रहे हैं। वैज्ञानिकों के पास इस विश्व-दृष्टि का प्राय: अभाव रहा है। सभ्यता की सुन्दर कहानी मे केवल दो या तीन बार दर्शन-शास्त्र तथा विज्ञान का संगम कराने का प्रयास किया गया है। उदाहरणत:, अरस्तू, एपिक्यूरस, स्पेंसर तथा कोम्टे ने ऐसा किया है। विज्ञान के अभाव में दार्शनिकता केवल अफीमची की पीनक है। और दार्शनिकता के अभाव में

विज्ञान एक प्रकार का दार्शनिक खेल है, जिसमें अनेक वस्तुएं [illegible] दिखाई पड़ती है। एक वैज्ञानिक जो कि दार्शनिक नहीं है, वह अधूरा है। आज का संसार इस प्रकार के दार्शनिकों का अभाव अनुभव कर रहा है, जो वैज्ञानिक भी हों। आप [illegible] विचारकों के विचारों से सावधान रहें। जिन दार्शनिकों ने भौतिकी तथा प्रयोगात्मक विज्ञान की शिक्षा प्राप्त नहीं की, वे अधूरे दार्शनिक हैं। जब आप किसी नये फिलासफर की बातों की ओर आकृष्ट हों तो सबसे पूर्व उसकी बौद्धिक योग्यता का परीक्षण कर लें। यदि वह प्रायोगिक विज्ञान से अनभिज्ञ है तो आप उसकी शिक्षा की ओर ध्यान न दें। इस प्रकार के दार्शनिक विज्ञान में अपनी धीमी प्रगति से कतराकर छोटा रास्ता ढूंढने का प्रयत्न करते हैं। वे केवल 'प्रतिभा' या तर्कशास्त्र के बल पर ही दार्शनिक बनने का प्रयत्न करते हैं। यहां तक कि वे अपने आपको वैज्ञानिकों से भी बढ़कर बतलाते हैं। केवल किताबी कीड़े भी दार्शनिक नहीं बन सकते। परीक्षण-नलिका (test-tube) को हाथ में लिए बिना सच्चा दार्शनिक बनना असंभव है। श्रम विभाजन का तर्क इस बारे में स्वीकार नहीं किया जा सकता। वस्तुतः दर्शन विज्ञान है—उन दोनों में कोई अन्तर नहीं है। दर्शन ज्ञान का सम्पूर्ण रूप है और विभिन्न विज्ञान उसके पृथक्-पृथक् खंड हैं, जो अनेक पत्थरों से बना पिरामिड है। ज्ञानी बनने की लालसा रखने वाले व्यक्ति को दार्शनिकता तथा विज्ञान—दोनों का ही विकास करना चाहिए। अन्यथा बुद्धिमान् समझे जाने वाले व्यक्ति वस्तुतः मूर्ख होंगे, जैसे कि वे ऐतिहासिक धर्म-मतों में अब तक प्रायः रहे हैं। हमें इस प्रकार के मनुष्यों की आवश्यकता है, जैसे अरस्तू, थेयोफ्रेस्टस्, अल्बर्टस, मेगनस तथा हर्बर्ट स्पेंसर, जो प्रकृति का विस्तार से अध्ययन करें और विश्व की रूपरेखा अंकित करने का विचार करें। वे दार्शनिक दुर्भाग्यशाली हैं, जो प्रायोगिक विज्ञान से अनभिज्ञ हैं। वे भूल से अपनी मनस्तरंग को ही 'विचार' समझ बैठते हैं। वे अपने मन से ही अद्भुत विधि निकालते रहते हैं। वे अपने अन्तःकरण में देखते हैं, और बाह्य संसार से आंखें मूंद लेते हैं, जैसे कि भारतीय, ईसाई तथा फारस के रहस्यवादी (सूफी लोग)। वे बाह्य जगत को नहीं देखते, प्रकृति से कुछ नहीं सीखते। उनका यह ढंग आत्मदर्शन [illegible] चिन्तन है। यही कारण है कि उनका दर्शनशास्त्र अधिकांश में [illegible] है।

(2) आप अपना अधिक समय दर्शनशास्त्र के [illegible] में ही न गंवा दें। उदाहरणतः बाह्य जगत् की [illegible] समय गंवाने से क्या लाभ ? बाह्यजगत् की [illegible]

इन्द्रियों के द्वारा प्रकृति की व्याख्या करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकृति से भिन्न किसी प्रकृति की अवस्थिति नहीं है। जो कुछ दृश्यमान है, वह सभी, बुद्धिवादी की दृष्टि में 'वास्तविक' है। दर्शन के अध्ययन में 'बाल की खाल निकालने' की प्रवृत्ति से बचें। विवाद के लिए विवाद कभी उपयोगी नहीं हो सकता। हमें दर्शन के तथ्यों का अवश्यमेव अध्ययन करना चाहिए।

(3) आपको प्रमाणों के भेद, प्रमाण की त्रुटियों आदि के सम्बन्ध में भी विवाद करने की आवश्यकता नहीं।

(4) आपको निश्चयवाद (Determinism) और अनिश्चयवाद (Indeterminism) आदि के झंझट में भी नहीं पड़ना चाहिए। इस भूलभुलैया में फंसने के बाद आपका इससे बाहर निकलना असम्भव हो जाएगा। इसीलिए कैथोलिक चर्च ने इस पर बहस करना अनावश्यक करार दे दिया है। बुद्धिवादी को इससे एक पग आगे बढ़कर कहना चाहिए कि इनमें माथापच्ची करना व्यर्थ समय का नाश है।

(5) एक अन्य चिरकाल से चला आया विवाद है 'मन' तथा 'पदार्थ' का सम्बन्ध। यह विवाद विगत अनेक शताब्दियों से चला आया है। इसकी थ्योरियों का कहीं अन्त नहीं।

दर्शनशास्त्र का अब अवश्य ही सरलीकरण तथा आधुनिकीकरण किया जाना चाहिए। सभी प्रकार के वैज्ञानिक साधनों एवं उपकरणों के प्रयोग के साथ इसके अध्ययन को नई दिशा प्रदान की जानी चाहिए। व्यर्थ के वितंडावाद से दर्शनशास्त्र को अब मुक्त करा देने की आवश्यकता है।

तर्क तथा मनोविज्ञान विज्ञान की पृथक् शाखाएं हैं। दर्शनशास्त्र के अध्ययन के लिए ये उपयोगी हो सकती हैं, यह एक अलग बात है; किन्तु दर्शनशास्त्र को इनसे मुक्त किए जाने की आवश्यकता है।

दर्शनशास्त्र का अध्ययन करते हुए आप निम्नलिखित विचारकों की रचनाओं की ओर विशेष ध्यान दें—अरस्तू, एपीक्यूरस, स्पिनोज़ा, लॉक, डिडरो ला मैत्री, द'होलबक, लुडविग फेयरबेक, हरबर्ट स्पेंसर, दीइत्सजेन, रिवोट, बर्ट्रेन्ड रसल, जान आर्थर थामसन, फ्रेडरिक सोडी, कोनवे लायड मोरगन, हक्सले इत्यादि।

7

समाजशास्त्र की समझ

समाजशास्त्र, अध्ययन का एक अत्यन्त आवश्यक विषय है। इससे आपको यह ज्ञान प्राप्त होगा कि अतीत मे, सामाजिक तथा राजनैतिक सस्थाओं का उद्भव तथा विकास किस प्रकार हुआ, तथा इन सस्थाओं पर जलवायु, जातीय चारित्रिक विशेषताओ, आर्थिक शक्तियो, मिथ्या-विश्वासों तथा अन्य बातों का क्या प्रभाव पड़ा। इसके अध्ययन से आपका मन विशाल बनेगा; आपकी सकीर्णता दूर होगी।

(1) आप इस बात मे विश्वास करना छोड़ देंगे कि परमात्मा ने अमुक सस्थाओं तथा परम्पराओं को सदा के लिए बनाया है। 'भगवान ने ही सभी सामाजिक रीति-रिवाजों को जन्म दिया है' इस विचार के कारण भूतकाल मे विकास की गति अवरुद्ध होती रही है। धर्मशास्त्रों में जो यह बात पाई जाती है कि भगवान ने जो आदेश दे दिये हैं वे सदा-सर्वदा के लिए है—यह विश्वास निराधार है। ईसाइयो का यह विश्वास है कि ईसामसीह के अनन्तर किसी पथप्रदर्शक की आवश्यकता नही है और मुसलमानो का यह कथन कि मुहम्मद के बाद कोई पैगम्बर नही होगा, अथवा बुद्धमतावलम्बियो का यह विश्वास कि गौतम बुद्ध के उपरान्त कोई धर्मोपदेष्टा नही होगा—इत्यादि सब रूढ़िवाद है। समाजशास्त्र आपके सम्मुख समाज की परम्पराओं पर विचार-विमर्श प्रस्तुत करता है। वह सामाजिक संस्थाओं का मूल्यांकन तथा महत्त्व निर्देश करता है—उसका आधार बुद्धि होता है, न कि रूढ़िवाद। धर्मशास्त्री आपको बतायेगा कि रविवार के अवकाश की आज्ञा परमात्मा ने सिनई पर्वत पर प्रकट होकर स्वयं दी थी; किन्तु समाजशास्त्री इसके आरम्भ की खोज करता हुआ बेबी-लोनियन सभ्यता तक जा पहुचता है। समाजशास्त्र ने यह खोज की है कि विभिन्न कबीलो तथा राष्ट्रों मे असख्य एक-समान संस्थाए विद्यमान रही हैं। हरबर्ट स्पेंसर की 'विवरणात्मक समाजशास्त्र' इस विषय पर ज्ञान की

सान है। अध्यापक वेस्टरमेक की खोजें आपको चकित कर देंगी और सभवत आपको धक्का-सा लगेगा जब उनसे आपको यह विदित होगा कि मानव-जाति की विभिन्न शाखाओं मे सभी प्रकार के विवाहों के प्रकार सदा ही विद्यमान रहे हैं और अब भी विद्यमान हैं तथा विभिन्न देशो मे भिन्न-भिन्न कारणो से विवाह-विच्छेद का विधान किया गया है। इससे आपको यह भी ज्ञात होगा कि विभिन्न कालों में समाज मे स्त्रियों की कैसी-कैसी स्थिति रही है। समाजशास्त्र के अध्ययन से आपके मन मे सकीर्ण राष्ट्रवाद समाप्त हो जाएगा। इससे आपका मिथ्या गर्व दूर हो जाएगा। इससे आप कूपमण्डूक नही रहेंगे। इससे आप पर यह बात प्रकट होगी कि कुछ देशो मे ऐसे रीति-रिवाज है जो आपके देश की अपेक्षा श्रेष्ठ है। इस शास्त्र के अध्ययन से आपको उन विचित्र व्यवहारों एव रीति-रिवाजों का ज्ञान होगा, जो आदिम काल से कुछ ही जातियों ने अपनाए और जो अब तक भी सभ्य राष्ट्रो में निरन्तर जारी हैं। तब आपको विश्वास हो जाएगा कि सामाजिक सस्थाओ (परंपराओं) की रचना मनुष्य ने—स्त्री तथा पुरुष ने की थी और इनका जातीय विकास से कोई न कोई सबंध है। समय बीतने पर उनमे अवश्य ही परिवर्तन आए हैं। समाजवाद आपके मन से इस मिथ्या विश्वास को दूर कर देगा कि 'राजा' के कोई 'दैवी' अधिकार होते हैं, मामा-फूफा के लड़की-लड़के के बीच विवाह ईश्वर द्वारा वर्जित है, अथवा एक विवाह या अनेक विवाह दिव्य होता है, अथवा स्त्रियों को दासी बनाए रखना पुरुष का दैवी अधिकार है—इत्यादि।

(2) समाजशास्त्र के अध्ययन से आप बुद्धिमान सामाजिक तथा राजनैतिक सुधारक बन जाएगे। फिर आप यह विश्वास करना छोड देंगे कि कोई भी विधि-विधान पूर्ण दिव्य अथवा लाभदायक है और उसे सदा बनाए रखना चाहिए। तब आप कुछ विचारों तथा रीति-रिवाजों को विदेशों से भी ग्रहण करेंगे, यहां तक कि विस्मृत अतीत से भी कुछ विधि-विधान पुनः ग्रहण करने को तत्पर होंगे। आप पर यह बात प्रकट होगी कि कुछ रीति-रिवाज एवं विधि-विधान अपना मूल्य एवं महत्त्व खो चुके हैं और वे त्याज्य है। इस ज्ञान से आपकी आंखें खुल जाएगी। तब आपकी जिज्ञासा बढेगी. और आप सभी देशों के विधि-विधानों का अध्ययन करेंगे और किसी उपयोगी रीति-रिवाज को अपने यहां अपनाना आपको 'खतरनाक' नही प्रतीत होगा। समाजशास्त्र के अध्ययन से बुद्धिवादियों को नवीन विश्वजनीन रीति-रिवाजों तथा विधि-विधानों के निर्धारण मे सहायता प्राप्त होगी।

हम सभी को, अपने राष्ट्र की हानिकारक अंधपरम्पराओं, रूढियों तथा मिथ्या विश्वासों का परित्याग करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।

आइए, समाजशास्त्र का अध्ययन करके हम जातियों तथा राष्ट्रों के बीच में एकता बनाने वाले सूत्रों को खोज निकालें। उसी से भविष्य मे हम नवीन समाज का निर्माण करने मे सफल हो सकेंगे।

8

भाषाओं का ज्ञान

बालक जब बढ़ने लगता है, तो वह बोलना भी सीखने लगता है। भाषा का उचित ढग से प्रयोग बालक को आरम्भ से ही सिखलाया जाना चाहिए। आपको अपनी मातृभाषा पर पूरा अधिकार होना चाहिए। आपकी स्वाभाविक योग्यता जहा तक पहुंच सकती हो, वहां तक बोलने तथा लिखने के द्वारा उसे अभिव्यक्त करना आपको आना चाहिए। भाषा का अध्ययन, वाक्य रचना का अभ्यास और भावाभिव्यक्ति की योग्यता द्वारा ही मानसिक सस्कार की ओर पग बढाया जा सकता है। यह आशा की जाती है कि प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा में ही बालक को मातृभाषा का पर्याप्त ज्ञान हो जाना चाहिए। किन्तु हमारे देश मे वयस्क लोगों मे से भी कितने ऐसे है जो शुद्ध तथा वाग्धारापूर्ण भाषा मे किसी विषय पर निबन्ध लिख सकें ? अगणित कृषक तथा श्रमिक पत्र तक नही लिख सकते। हमारे चहुं ओर जो वातचीत सुनाई देती है उसमे हम असंख्य भूले तथा त्रुटिया पाते है। इसका कारण यह है कि हम भाषा के अध्ययन के प्रति उपेक्षा करते है। वार्तालाप एक ललित कला है, बोली इसका माध्यम है। हम पहनावे मे ओछेपन को नापसद करते हैं; किन्तु बोलचाल मे भाषा के अपप्रयोग या कुप्रयोग को हम सहन कर लेते हैं।

आपको अपनी मातृभाषा पर गर्व होना चाहिए; क्योकि पूर्वजो, कवियो तथा भाषणकर्ताओं की बोली रही है। फ्रांसीसियों तथा फारस-वासियों से हमे निज-भाषा प्रेम की शिक्षा लेनी चाहिए, वे अपनी-अपनी मातृभाषा से बहुत प्रेम रखते हैं।

स्वभावत: शिक्षा का आर
भाषा की शिक्षा यही
अन्य आधुनिक भाषा का
का चुनाव, व्यक्ति के

किन्तु
एक

होगा। यदि आप आवश्यकता से अधिक चतुर नहीं हैं, तो एक विदेशी भाषा भी अवश्य सीखिए; जो कि आपकी अपनी भाषा के ही समान हो। एक फ्रांसीसी के लिए इटालियन भाषा, बंगाली के लिए हिन्दी भाषा जर्मन के लिए इंग्लिश भाषा सरल होगी। यदि आप में भाषा ज्ञान प्राप्त करने की विशेष योग्यता है, तब आप किसी कठिन विदेशी भाषा को अध्ययन के लिए चुन सकते हैं। जहां तक संभव हो, सभी जीवित भाषाओं के विषय में सामान्य ज्ञान अवश्य प्राप्त किया जाना चाहिए। प्रत्येक देश में सभी भाषाओं के अनेक योग्य विद्वान् होने चाहिए। भाषाओं के अध्ययन पर केवल व्यवसाय की दृष्टि से विचार नहीं किया जाना चाहिए। एक व्यापारिक-यात्री, एक राजदूत अथवा यात्रा ब्यूरो में एक लिपिक अवश्य ही अनेक भाषाओं का ज्ञाता होना चाहिए; तभी वह अपने पेशे को भली-भांति निभा सकता है। किन्तु आपको भाषा-अध्ययन पर सर्वप्रथम इस दृष्टि से विचार करना चाहिए कि आपके व्यक्तित्व के विकास के लिए वह आपका कर्तव्य है। एक भाषा के ज्ञान की अपेक्षा यदि आपको दो भाषाओं का ज्ञान हो तो निश्चित रूप से आप अपने व्यक्तित्व को अधिक विकसित पाएंगे। यदि विदेशी भाषाओं का ज्ञान आपके धनोपार्जन में सहायक है, तो आपको दोहरा लाभ प्राप्त होता है। किन्तु सबसे पूर्व आपको अपने मन का विकास करना चाहिए।

कम से कम एक भी विदेशी भाषा यदि आप सीख लेते हैं, तो आपको विभिन्न प्रकार के अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। इससे आपकी बुद्धि सुतीक्ष्ण होगी; क्योंकि आप यह जानते होंगे कि विभिन्न देशों के लोग एक ही विचार को एक समान ढंग से ही प्रकट नहीं करते। यह आश्चर्य की बात है कि 'आपका क्या हालचाल है ?' (How do you do ?) जैसा सरल प्रश्न अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन तथा स्वीडिश भाषाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार से पूछा जाता है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि संसार के सभी देश सौ तक गिनती या घड़ी के डायल को पढ़ना—उसी प्रकार नहीं करते जिस प्रकार आप करते हैं। विदेशी भाषाओं के ज्ञान से आपका घर की चारदीवारी में बन्द—कूपमण्डूक मन विश्व-संस्कृति के निकट आकर जागरूक होगा। आप अन्य राष्ट्रों की विद्यमानता का ज्ञान प्राप्त करेंगे। आपका मन आरामदायक जेल में बन्द नहीं रहेगा, आप अपने देश की भाषा या जीवन विधि के कैदी नहीं रहेंगे। विचारों, रीति-रिवाजों, कविता तथा इतिहास का एक नवीन संसार आप पर प्रकट हो जाएगा। आप संकीर्ण मन, अर्धशिक्षित तंग दिल राष्ट्रवादी नहीं रह जाएंगे। आप एक सुसंस्कृत विश्व मानव बनने की ओर अग्रसर होंगे। मुझे श्रेष्ठ उक्तिया

स्मरण आती हैं—"प्रत्येक नई भाषा का अध्ययन करके मनुष्य नवीन आत्मा प्राप्त करता है।"··· 'जो मनुष्य दो भाषाएं जानता है, उसका मूल्य दो मनुष्यों के बराबर होता है।"·····"जब आप एक विदेशी भाषा पढ़ते हैं, जैसे फ्रेंच, आप उन लोगों में यात्रा करने की आशा कर सकते हैं, जो उन भाषाओं को बोलते हैं।" अन्त में एक दिन ऐसा आ जाता है कि आप यात्रा पर चल पड़ते हैं और एक विचित्र देश में पहुंचकर आपको अद्भुत आनन्द की अनुभूति होती है। वहां आपको फ्रांसीसी चेहरे, फ्रांसीसी नाम, फ्रांसीसी रीति-रिवाज, फ्रेंच में बातचीत, फ्रांसीसी हावभाव, फ्रांसीसी समता, फ्रेंच कोमलता, फ्रेंच कॉफी तथा दूध, फ्रेंच बखशीश, फ्रेंच शाप, फ्रेंच कसमें—देख-सुनकर विचित्र सनसनी होती है। आपको विदित होगा कि फ्रांसीसी बुरे नहीं हैं, जैसा कि अंग्रेज इतिहासकारों ने उन्हें चित्रित किया है। आप तब फ्रांसीसियों को स्नेह करने योग्य मनुष्य पाकर प्रसन्न होते हैं।

इसी प्रकार यदि आप अंग्रेज हैं और फ्रेंच तथा जर्मन भाषाओं को सीख लेते हैं, तब आप संकीर्ण राष्ट्रवाद से मुक्ति पा जाते हैं और फ्रांस तथा जर्मनी में उसी आनन्द के साथ विचरण करते हैं, जिसके साथ आप इंग्लैंड में अनुभव करते हैं। यह खेद की बात है कि प्रत्येक मनुष्य विश्व की समस्त भाषाओं का अध्ययन नहीं कर सकता। क्योंकि समय तथा योग्यता सीमित है। फिर भी जितनी अधिक से अधिक भाषाएं आप पढ़ सकें, अवश्य पढ़िए। अनेक भाषाओं का ज्ञाता होना बड़े ही आनन्द का विषय है। तब आप अनेक भाषाओं की पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं का उन्मुक्त अध्ययन कर सकते हैं। आप तब विदेशी यात्रियों को अपने घर में आमंत्रित कर सकते हैं। आप अपने राजनैतिक आंदोलन के लिए पत्रक, पुस्तकें आदि लिखकर प्रकाशित करके प्रचारित कर सकते हैं।

मैं आपको यह सम्मति दूंगा कि तीस वर्ष की अवस्था प्राप्त करने से पूर्व ही आप अनेक विदेशी भाषाओं का अध्ययन अवश्य कर लें। यह उपलब्धि अपने प्रारम्भिक जीवन में ही प्राप्त कर लेनी चाहिए, क्योंकि बाद के काल में आपको भाषाओं का अध्ययन करने के लिए समय मिलना कठिन हो जाएगा, तथा रुचि भी नहीं रहेगी।

विश्व-भाषा की आवश्यकता

जब आप अनेक भाषाएं सीख लेते हैं, तो आपको विदित होता है कि विश्व की सभी भाषाओं को सीख लेना कठिन है। आपको यह भी विदित होगा कि केवल बोलियों की विविधता ही देशों को एक-दूसरे से पृथक्

करती है तथा उनमे पारस्परिक कलह तथा अविश्वास का कारण बनती है। विविध भाषा-भाषियों के सम्मेलनो मे अनुवाद का ही आश्रय लेना पड़ता है तथा उपस्थित जन-समुदाय मे एकता का जीवन-संचार नही होता । अनेक राष्ट्रों का यान्त्रिक मिश्रण ही सच्ची एकता कायम नहीं कर सकेगा। मन तथा हृदय की वास्तविक एकता—बिना एक भाषा के होनी असंभव है; अतः यदि मानव-जाति अपना सच्चा कल्याण चाहती है, तो यथाशीघ्र एक विश्व-भाषा का विकास करना पड़ेगा । लीग ऑव दी नेशन्स (और अब संयुक्त राष्ट्रसंघ) मे, राष्ट्रों की ऐक्य-भावना का विकास न होने का यही कारण है कि कोई एक विश्वभाषा नही, जो सबको जोड़ने वाली कड़ी का काम करे । प्रभावशाली विचार-विमर्श का प्रश्न ही नहीं उठता, जब तक कि एक ऐसी भाषा न हो जिसके द्वारा एक सदस्य समस्त उपस्थित व्यक्तियों के सम्मुख अपने भावों को उन्मुक्त रूप से अभिव्यक्त न कर सके। रोमन कैथोलिक चर्च, जिसका एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है तथा जिसका केन्द्र रोम है, अपने सभी पादरियो को लेटिन भाषा में सन्देश देता है, यही उसकी सामान्य भावाभिव्यक्ति का माध्यम है। लेटिन भाषा के बिना, एक सप्ताह के लिए भी यह अपनी एकता की रक्षा नही कर सकता । यह विचित्र बात है कि अनेक समाजवादी, युद्ध विरोधी, श्रमिक नेता, प्रोटैस्टैन्ट्स, थियोसोफिस्ट, स्वतन्त्रविचारक तथा अन्य आधुनिक नेताओं ने कई विश्वसंस्थाओं की स्थापना की है तथा अनेक देशों मे उनकी शाखाएं खोली हैं । किन्तु उन्होंने किसी एक भाषा को अपनाने पर बल नहीं दिया है। परिणाम यह है कि ये सभी संस्थाएं वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओ का रूप नही धारण कर सकी । विश्व-व्यापी संस्था के लिए भावाभिव्यक्ति का जो 'एक' माध्यम होना चाहिए उसका अभाव है।

अतएव आपको विचार करना होगा कि एक ऐसी विश्व-व्यापी भाषा का विकास किया जाए जो सभी देशों को एक सूत्र में ग्रथित कर सके ।

सभी जीवित भाषाएं कठिन है, क्योंकि उनका व्याकरण अनियमित है, दूसरे उनकी वर्तनी, 'स्पेलिंग' तथा उच्चारण मे भी अनेक प्रकार की अनियमितताएं विद्यमान हैं। कितने युवक-युवतियां अंग्रेज़ी, फ्रेंच तथा जर्मन भाषाओं को सरलता से बोल सकते हैं? एक साधारण बालक का मस्तिष्क उद्भ्रान्त हो जाता है जब उसे भाषा संबंधी नियमों, अपवादों तथा प्रत्यपवादों का सामना करना पड़ता है । दूसरे, सभी राष्ट्र प्रायः इस विषय में बहुत भावुक हैं, उन्हें अपनी-अपनी भाषा से बड़ा स्नेह है तथा अन्य भाषाओं के प्रति उनके मन में पूर्वाग्रह विद्यमान रहता है। कोई भी

देश किसी विदेशी भाषा को विश्व की सम्पर्क भाषा स्वीकार करने को तैयार नही होता। क्या आप मान सकते है कि रूस चुपचाप अंग्रेज़ी को विश्वभाषा स्वीकार कर लेगा? अथवा चीन अपने विद्यालयो तथा विश्वविद्यालय मे स्पेनिश भाषा की पढाई जारी कर देगा?

इसीलिए हमे एक नयी विश्व-भाषा का आविष्कार करना होगा। अन्तर्राष्ट्रीय भाषा अवश्यमेव सरल होनी चाहिए, इसमे कठिनाइया नही होनी चाहिए, व्याकरण की दुरूहता उसमे नही होनी चाहिए, उसमे विकास की गुंजाइश होनी चाहिए तथा स्थिति लचकीलेपन का गुण होना चाहिए और फिर उस भाषा को प्रचलित करने के लिए एक सजीव आन्दोलन चलाना होगा। यह नितान्त आवश्यक है। एक विद्वान् भले ही एक आश्चर्यजनक भाषा का आविष्कार कर दे किन्तु जब तक उसका प्रचार करने के लिए अत्यन्त योग्य प्रचारक नही मिलते, तब तक उसका प्रचार-प्रसार नही हो सकता। यदि वह भाषा औरो को प्रेरणा प्रदान करने में असमर्थ है तो वह कभी भी स्वीकार्य नही हो सकती। एतदर्थ परिश्रमशील, उत्साही तथा अनथक प्रचारको की आवश्यकता है।

मेरा सुझाव है कि इस्पेराटो को सुधारकर विश्व भाषा का रूप प्रदान किया जाए। यद्यपि यह निर्दोष भाषा नही है, किन्तु हमे सर्वथा निर्दोष भाषा की आवश्यकता नही है और न कोई भाषा सर्वथा निर्दोष हो ही सकती है। परन्तु हमारी आवश्यकता यह है कि एक ऐसी भाषा हो जो पर्याप्त सुगम हो, सरल हो जिसे साधारण नर-नारी अपने खाली समय में दो वर्ष के भीतर आसानी से सीख सकें।

प्राचीन भाषाएं

प्राचीन भाषाओं में से आप एक या दो भाषाओं को अध्ययन के लिए चुन सकते हैं (दो की अपेक्षा एक को विशेष ज्ञान के लिए चुनना उचित होगा)। प्राचीन भाषाओ के अध्ययन के लिए आपको उनके कठिन व्याकरण नियमों के ज्ञान के हेतु परिश्रम करने के लिए कटिबद्ध होना होगा। एक बार यदि आप प्राचीन भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लें तो आप प्लेटो, अरस्तू, लुसीयिस जैसे प्राचीन विद्वानों के सीधे संपर्क मे आ जाएगे, तब शायद आप महायान धर्म की रहस्यमय गहराइयों मे उतर सकेंगे, या कन्फ्यूशियस और मेन्शियस का सत्संग प्राप्त कर सकेंगे, या मुहम्मद साहब के आदेशो को हृदयंगम कर सकेंगे, या अल्फराबी और इब्न-रशीद की प्रतिभा से संपर्क कर सकेंगे। प्राचीन भाषाओं मे से आप अपनी रुचि, योग्यता तथा आवश्यकता के अनुसार—ग्रीक, लेटिन, संस्कृत, चीनी,

अरबी या अन्य भाषाओं का अध्ययन कर सकते है। आप जिस भाषा का भी अध्ययन करें, उसकी सांगोपाग जानकारी प्राप्त करें। जब तक आप कठोर व्याकरण नियमों के अध्ययन तथा शब्दकोष के विपुल प्रयोग के हेतु तैयार नही होगे, तब तक आपका किसी भाषा पर अधिकार नही हो सकेगा।

यदि आप एक योग्य भाषा-शास्त्री है, तो आप ग्रीक अवश्य पढ़िये। अत्यन्त बहुमूल्य कविता, नाटक, दर्शनशास्त्र, अलंकार शास्त्र, जीवन-चरित तथा इतिहास का इसमें बहुत विकास हुआ है। ग्रीक साहित्य में, आत्मसंस्कार के लिए आपको बहुत से विषय अत्यन्त उत्तम रूप मे प्राप्त हो सकते हैं। आधुनिक बुद्धिवाद (Rationalism) के लिए भी ग्रीक भाषा का अध्ययन नितान्त आवश्यक है। ग्रीक फिलासफी का आधार विज्ञान तथा मानवतावाद है। अन्य देशों की तुलना मे यूनान के महान् फिलासफर, भारतीय दार्शनिक विचारकों अत्यन्त निकट है। ग्रीक भाषा बुद्धिवादियो के लिए उसी प्रकार पवित्र भाषा है, जैसे यहूदियों के लिए इब्रानी भाषा, रोमन कैथोलिको के लिए लेटिन भाषा, मुसलमानों के लिए अरबी भाषा और हिन्दुओं के लिए संस्कृत भाषा।

अनुवाद

अनेक भाषाओ के अध्ययन से यह भी लाभ होगा कि न केवल आपका आत्म संस्कार होगा; बल्कि आप किसी प्राचीन अथवा आधुनिक भाषा की किसी उत्तम रचना का अपनी मातृभाषा मे अनुवाद प्रस्तुत कर सकेंगे। आपको अतीत तथा वर्तमान को एक सूत्र मे ग्रथित करने का शुभ काम करना चाहिए। इस प्रकार आप अपने देश के इतिहास-निर्माण मे एक महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा करेंगे। एक अच्छा अनुवादक मानव जाति का महान् हितकर्ता है। वर्तमान में—किसी देश के साहित्य, दर्शनशास्त्र तथा विज्ञान की व्याख्या किसी भी अन्य देश की भाषा में की जा सकती है। अतीत काल में केवल प्रतिभाशाली व्यक्ति ही नवीन धार्मिक, राजनैतिक तथा वैज्ञानिक आन्दोलनो से अपने देशवासियों को परिचित कराता था; किन्तु यही काम अब अनुवादकों के द्वारा सरलता से किया जा सकता है।

मानव इतिहास अनुवादको का चिर-ऋणी है। सिसरो तथा सुर्मदियस ने ग्रीक फिलासफी का रोमन लोगो मे प्रचार किया। जीसस क्राइस्ट आरामिक भाषा बोलता था; किन्तु हम तक उसके शब्द ग्रीक भाषा द्वारा ही पहुंचे हैं। सेंट जेरोम ने बाइबिल का लेटिन में अनुवाद किया। अनुवादकों ने ही संस्कृत, पाली, प्राकृत आदि भाषाओं से बौद्ध साहित्य का

चीनी भाषा में अनुवाद करके, बौद्धमत को सारे चीन में फैलाया। इनमें कुमारजीव, युवान च्वांग आदि ने अमित श्रद्धापूर्वक अनेकों वर्षों तक इस कार्य को तन-मन से किया। इस्लामी देशों में मध्ययुगीन पुनर्जागरण का आधार संस्कृत तथा सीरियन साहित्य के अनुवाद ही थे। इन अनुवादकों में से हुनाइन-इब्न-इश्क, इब्नल बलूक, कोस्टा-बेन-लूका, आदि उल्लेखनीय हैं। यूरोपीय प्रथम जागरण का आधार भी अनुवाद ही था। इन अनुवादकों में डोमिनिक गोजालेस, गेराल्ड आफ क्रेमोना, मार्क आफ टोलेडो, इब्न दाऊद आदि प्रमुख हैं। योरुप में वास्तविक पुनर्जागरण का अभ्युदय महान् अनुवादकों के कारण ही हुआ था। उन्होंने ग्रीक भाषा तथा साहित्य का अध्ययन किया और फिर हैलेनिक श्रेष्ठ ग्रन्थों का लेटिन, अंग्रेजी तथा फ्रेंच में अनुवाद किया। इनमें फिसिनो, अम्योट, नार्थ, इरेस्मस इत्यादि प्रमुख थे।

आधुनिक काल में, बुद्धमत का पाली साहित्य, चीनी दार्शनिकों की रचनाएं, फारसी कविता, बहायी धर्मग्रन्थ, इब्सन के नाटक, टैगोर की कृतियां तथा अन्य अनेक ग्रन्थों के योरुपियन अनुवादकों ने अनुवाद प्रस्तुत करके मानवता का महान उपकार किया है। अनुवादक संस्कृति के विद्वान संदेशवाहक हैं और आपको अवश्य ही इनके मण्डल में सम्मिलित होना चाहिए।

9
तुलनात्मक धर्म क्या है

संभवतः आपका जन्म एक ऐसे परिवार मे हुआ है, जो इन महान जीवित धर्मों मे से किसी एक को मानते है—बौद्ध धर्म, हिन्दू धर्म, जैन धर्म, पार्सिटिविज्म, ईसाई धर्म, ताओवाद, जूडाइज्म, इस्लाम, जोरोस्त्र मत, कन्फ्यूशियस मत, शिन्तोइज्म अथवा बहायी मत। जब आप आधुनिक बुद्धिवाद के उपदेश को अपनाते है, तो आपको प्राचीन विश्वास मे 'सार सार को गहि रहे, थोथा देय उड़ाय' की लोकोक्ति को चरितार्थ करना होगा। धर्मसम्मेलन रूपी सस्येष्टि मे आपको अपने धर्म के सार रूप उम्दा गेहू लेकर आना चाहिए, खाली हाथ नही आना चाहिए।

(1) आपको महान धर्मों का सावधानी से अध्ययन करना चाहिए। उनके प्रवर्तन, इतिहास तथा वर्तमान स्थिति का अनुशीलन करना चाहिए। जिस प्रकार महान नदिया किसी भी देश की सम्पदा का कारण है, उसी प्रकार से महान् धर्म भी सामाजिक प्रगति का कारण रहे है। इन धर्मों ने ही नैतिक आचारशास्त्र को जन्म दिया, जिनमें यद्यपि समय के साथ-साथ अनेक मिथ्याविश्वासो का मिश्रण हो गया; फिर भी प्रत्येक धर्म मे उसका आचारशास्त्र एक बहुमूल्य अंश है। जिस प्रकार वाष्पीकरण की प्रक्रिया द्वारा दूषित से दूषित पानी में से भी विशुद्ध जल प्राप्त किया जा सकता है, उसी प्रकार विचार-विमर्श तथा विवेक के द्वारा हम उन तत्वों को पृथक् कर सकते हैं जो मानवता के लिए बहुमूल्य है। आप [illegible] विश्वासो को भले ही फेंक दें; किन्तु ऐसा न हो कि आप [illegible] के साथ ही समस्त नैतिक आचार शास्त्र को ही फेंक दें।

तुलनात्मक धर्म एक आकर्षक अध्ययन विषय है। इस [illegible] के द्वारा आपको सन्तों और महात्माओ के सत्सग का [illegible] और उनसे आप व्यक्तिगत स्वार्थ त्याग, संयम, धैर्य, [illegible] आदि महान् सद्गुणों का पाठ पढ़ेंगे। यद्यपि उनमें [illegible]

से अनभिज्ञ थे और उन्होंने उच्चतम नैतिक आचार नियमों में मिथ्या-विश्वासों को मिलाने का प्रयास किया। किन्तु आप उनके गुणों को ही ग्रहण करें और उनके दोषों को त्याग दें, जिस प्रकार लोग खजूरें खाकर गुठलियाँ फेंक देते हैं। घिसकर, रगड़कर, धोकर और परिमार्जित करके पुराने नैतिक आचार-नियमों को आधुनिक काल के अनुरूप बनाइए। उनको पीसकर फेंक मत दीजिए।

(2) सभी धर्मों द्वारा कतिपय सामाजिक रीति-रिवाजों का विधान किया जाता है। वे विभिन्न विवाह-नियमों को स्वीकार करते हैं और किसी विशेष प्रकार के भोजन का निषेध करते हैं। वे किन्हीं विशेष रीतियों के परिपालन तथा समारोहों के आयोजन का विधान करते हैं। प्राचीन धर्मों के इन विधि-निषेधों को आधुनिक विज्ञान तथा बुद्धिवाद की कसौटी पर कसकर उनकी योग्यता का परीक्षण किया जाना चाहिए। पुराने मसीहाओं की बातें आज के युग में ज्यों-की-त्यों स्वीकार नहीं की जा सकतीं। आज शायद हम विवाह-विच्छेद पर प्रतिबन्ध नहीं लगा सकते, सबको मांस-मछली खाने का निषेध नहीं कर सकते, बहु-विवाह की खुली छूट नहीं दे सकते। काल के पलटने के साथ-साथ इन सामाजिक परम्पराओं में कालानुरूप परिवर्तन करना नितान्त आवश्यक हो जाता है। अतएव, आप आँख मूँदकर जीसस, मनु, जोरास्त्र, मुहम्मद या बुद्ध का अनुकरण नहीं कर सकते। यद्यपि हम उनके सद्‌गुणों को ग्रहण कर सकते हैं, किन्तु जहां तक सामाजिक कानूनों का सवाल है, हम उनके आदेशों का अन्धाधुन्ध पालन नहीं कर सकते। यदि कोई धर्ममत प्रजातन्त्र को स्वीकार करता है (जैसे कि काल्विनिज्म) तो आप उसके राजनैतिक उपदेश का परिपालन कर सकते हैं, किन्तु यदि कोई धर्म निरंकुश एकच्छत्र शासन का समर्थन करता या सामन्तवाद का आदेश देता है, तो आप उसकी बात को मानने से इनकार कर दें। समस्त धर्मों के उन आदेशों को आप अस्वीकार कर दें, जो आपको प्रजातन्त्र, स्वतन्त्रता, समता, राजनीति तथा अर्थव्यवस्था में भ्रातृभाव के विरुद्ध भड़काते हों। जो धर्म आपको किसी सीजर, खलीफा या महन्त को भेंट देने के लिए विवश करे, उसे तुरन्त अस्वीकार कर दें।

(3) सभी धर्मों की रूढ़िवादी रीतियों तथा विधि-विधानों को अस्वीकार किया जाना चाहिए। बाह्याचार और विधि-विधान कभी भी आत्मा को पवित्र नहीं कर सकते। बाहरी पवित्रता के साधनों पर बल देने वाले पादरी-पुरोहित-मुल्ला इन विधि-विधानों की जड़ में अपना स्वार्थ साधन करते हैं। जन्म से लेकर मरण तक ये पराश्री (parasites) अपने श्रद्धालु अनुगामियों को दास बनाये रखते हैं और उनसे धन वसूल करते

रहते है। अपने पडोसियो तथा मित्रो को बताइए कि बपतिस्मा, तीर्थ यात्रा, हवन, सूर्योपासना, यज्ञोपवीत, तिलक, पशुबलि, नदी स्नान, पाषाण चुम्बन, मूर्तिपूजा, कब्र पर फूल चढाना इत्यादि धार्मिक कृत्यो से आत्मा के उत्थान मे कुछ सहायता नहीं मिलती। यह सब जंगलीपन छोड दो। ईसाइयो ! पवित्र जल और शराब तुम्हारे अपराधों को बहा नही देंगे। बपतिस्मा लेना है तो मनुष्य मात्र को अपना भाई समझो। शराब पीनी है, तो बुद्धिमत्ता की पियो। मुसलमानो और यहूदियो ! यदि काटना है तो अपने लोभ को काटो, अपनी वासनाओं को काटो। हिन्दुओ ! सूर्य की पूजा छोडो। विज्ञान से प्रेम करो, और सूर्य के सम्बन्ध मे खोजबीन करो। यज्ञोपवीत पहनने की आवश्यकता नही, बल्कि मानव के प्रति प्रेमसूत्र धारण करके उससे अपने हृदय को दूसरो के साथ बांधो। पारसियो ! तुम पवित्र अग्नि मे पदार्थों को भस्म मत करो। अपनी आत्माओं मे भाईचारे की अग्नि को जलाओ। बौद्धो ! बुद्ध के दांत की पूजा का कोई लाभ नही। उसके ओठो से जो मधुर शब्द निकले थे उनका पालन करो—सब प्राणियों पर दया करो। शिन्तोमत के मानने वालो ! ओबराह् आपके अपराधो को क्षमा नही करेगा। अरे हिन्दुओ और मुसलमानो ! काली तथा अल्ला के लिए मूक पशुओं का वध मत करो। तुम्हारे हृदय में जो लोभ रूपी भेडिया और कपट रूपी सांप है उसे मारो। ईश्वर के निन्यानवे नामों या विष्णु के सहस्र नामों का जाप करने से क्या लाभ ? इसकी अपेक्षा सभी धर्मों के सन्तो तथा समस्त देशों के वैज्ञानिकों का सम्मान करो। मन्दिरो की परिक्रमा मत करो, बल्कि विश्व परिभ्रमण करो और अपने ज्ञान को विस्तृत बनाओ। विशेष दिवसों पर उपवास की आवश्यकता नही; बल्कि प्रतिदिन तथा प्रतिरात्रि मित भोजन करो। नाशवान् धर्म के चिह्नों की रक्षा के लिए अपने जीवन नष्ट मत करो; बल्कि धर्म के धारण करने योग्य—सत्य आदि अविनाशी नियमों से प्रेम करो।

(4) स्वर्ग-नरक के मिथ्याविश्वास प्राय : सभी धर्मों के अविच्छेद्य अंग हैं। हिन्दू मत, बौद्ध मत, स्वर्ग और मुक्ति मे विश्वास रखते है, इस्लाम मे भी बहिश्त और दोजख विद्यमान हैं। ईसाई मत मे 'हैवन' और 'हैल' पर विश्वास किया जाता है। अरे भोले लोगो ! यह सब पादरी-मुल्ला-पंडित ने ललचा या डराकर अपना उल्लू सीधा करने का रास्ता निकाला है। आंख के अंधे और गांठ के पूरे लोग उनके खजाने भरते रहते हैं और वे अकर्मण्य पराश्री दूसरे को कमाई पर मौज उडाते हैं। रूसी पुरोहित तो वास्तव मे स्वर्ग की सीटें ही बेचा करते थे। प्रार्थना सभाएं, उत्सव, त्यौहार, रीतिरस्म आदि इनकी आय के स्थायी स्रोत हैं। इस

दान-दक्षिणा के परिणाम मे ही आप अनुमान लगा सकते हैं कि ये कार्य श्रेष्ठ नही। मठो, आश्रमो, मन्दिरो, गिरजाघरों आदि मे पंडे पुरोहित बिना परिश्रम जो कुछ पाते है उसे भोग-विलास पर व्यय करते हैं। इससे समाज मे दुराचार पनपता है।

ऐसे मिथ्याविश्वासो मे आप अपने को तथा और को भी मुक्त कीजिए। प्रत्येक प्रकार के रूढ़िवाद का विरोध कीजिए। धर्म के नाम पर सब प्रकार की ठगी के विरुद्ध संघर्ष कीजिए। आप अपने व्यक्तित्व का स्वस्थ विकास कीजिए। व्यर्थ के वहम, मिथ्या विश्वास, अन्धविश्वास, अन्धभक्ति और कुपात्रो को दान देने आदि के द्वारा आप अपना विकास नही कर सकेंगे। जीवन का विकास, जीवन का उत्थान सत्य के उद्‌घाटन से होगा, न कि मिथ्या रूढ़ियो के पालन से।

(5) आपको सभी धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन से लाभ होगा। आप महान् सन्तों के कथनो पर गभीरता से विचार कीजिए। उन्होंने धनसंपत्ति का त्याग किया। आप भी महान् उद्देश्य के लिए ऐसा कर सकते हैं। उन्होने खान-पान, वस्त्र आदि मे सादगी को अपनाया। आप भी उनका अनुकरण कर सकते है। उन्होंने निर्धन तथा निर्बल की सेवा तथा सहायता की। आप भी ऐसा कर सकते है। वे लोभ और वासनाओं से रहित थे। आप भी ऐसे बन सकते हैं। वे सदा धीर तथा सज्जन थे। आप भी ऐसे बन सकते है। उन्होने अपने मित्रो तथा साथियों को पूर्ण मानव बनने की प्रेरणा दी। आप भी इस शुभ काम को अपने जीवन का लक्ष्य बना सकते हैं। विभिन्न धर्मशास्त्रों से आप नैतिक आचार की सुगन्धि प्राप्त कर सकते हैं। इससे आपकी आत्मा गुणो के सौन्दर्य और सुगन्ध से आप्लावित हो जाएगी।

(6) प्रत्येक धर्म में किसी न किसी रूप मे मिथ्या विश्वास पाये जाते है। आप अपने को इन मिथ्या विश्वासों से अवश्य मुक्त कर लीजिए।

भारत, चीन तथा अनेक अन्य देशो में, अब भी बहुदेववाद प्रचलित है। किन्तु ज्यो-ज्यों इन देशों के जनमानस बुद्धिवाद से प्रेरित होंगे, त्यों-त्यों इसका अन्त होता जाएगा। उनके लिए यह विश्वास करना कठिन हो जाएगा कि चार मुह वाले, तीन आखों वाले, या हाथी के सिर वाले देवता हो सकते हैं। बहुदेववाद देवता को मनुष्य के आकार मे प्रस्तुत करता है। किन्तु निर्गुण (निराकार) बहुदेववाद उससे भी भयंकर है। यहूदियों, मुसलमानो, और ईसाइयों का एकेश्वरवाद पर विश्वास है। सौभाग्य से, अधिकांश ग्रीक, हिन्दू तथा चीनी दार्शनिक इन मिथ्या विश्वासों से दूर रहे हैं।

10

पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य

शारीरिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना आपके सर्वप्रथम कर्त्तव्यों में से एक कर्त्तव्य है। शरीर को नीरोग रखिए। इसकी शक्ति तथा सहन-सामर्थ्य बढ़ाइए। जहां तक हो सके, इसे सुन्दर से सुन्दर बनाने का प्रयत्न कीजिए। अपने कमरे में अपोलो की अथवा वीनस की एक छोटी-सी मूर्ति प्रेरणा के हेतु रखिए। प्रत्येक व्यक्ति में पैतृक दुर्बलताएं तथा रोग-प्रवृत्तियां आना प्राकृतिक है। परन्तु मनुष्य को यथाशक्ति इनका उपाय करने का प्रयास करना चाहिए। जैसा कि कवि कालिदास ने कहा—"शरीर ही कर्त्तव्यपालन का सबसे प्रधान साधन है" (शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्)। यदि आप सुन्दरता का वरदान पाकर उत्पन्न नहीं हुए, तो भी आप अपने शरीर को स्वस्थत बनाकर रोगों से दूर रखकर, उदात्तमन तथा शान्त मस्तिष्क द्वारा आकर्षक बना सकते हैं। सौन्दर्य केवल त्वचा तक ही सीमित नहीं होता, इसकी गहराई आत्मा तक होती है।

उत्तम स्वास्थ्य के बिना जीवन एक बोझ के समान है। जीवन में कष्टसाध्य तथा परिश्रमजन्य कर्मों के लिए आपको शारीरिक शक्ति तथा सहन-सामर्थ्य भी आवश्यकता है। आपको ऐसी अनुभूति होनी चाहिए, जिसे फ्रेंच लोग 'जीवन का हर्ष' कहते हैं। यह अनुभूति आपके शरीर की प्रत्येक नस-नाड़ी और प्रत्येक अणु को होनी चाहिए। तब निराशा और चिन्ता काअन्धकार आपके मन को आक्रान्त नहीं करेगा। एक स्वस्थ व्यक्ति के लि ए आशावाद उतना ही आवश्यक है, जितनी श्वासोच्छ्वासक्रिया तथा निद्रा। आपको सुखद निद्रा आनी चाहिए। अनिद्रारोग ने इतनी निराशा को जन्म दिया है, जितनी कि शोपनहार तथा हार्टमैन के तर्कों ने भी नहीं। केवल अस्वस्थ तथा रुग्ण व्यक्ति ही यह प्रश्न पूछते हैं—"क्या जीवन जीने योग्य है?"

यदि आप अपने शरीर को स्वस्थ अवस्था में नहीं रखते, तो बीमारी

मे आपका समय नष्ट होगा। समय कभी-कभी धन है; किन्तु समय प्रत्येक काल मे 'जीवन' है। जीवन के लघुतम समय को भी रुग्णावस्था में नहीं व्यतीत होने देना चाहिए। सामाजिक दृष्टि से, बीमारी के द्वारा उत्पादन मे बाधा पडती है। इससे प्रत्येक देश को अपरिमित आर्थिक हानि होती है। एक रोगी व्यक्ति अपने मित्रो तथा सम्बन्धियों के लिए भी अनेक कष्टो का कारण बनता है। यहां तक कि यदि वह छूत की बीमारी से पीड़ित हो तो वह अपने इर्द-गिर्द रोग फैलाता है। यदि आप अपने शरीर के स्वास्थ्य की उपेक्षा करते हैं तो वस्तुतः समाज के प्रति अपराध करते हैं। साथ ही आप अपने शरीर की रोग-निरोध-शक्ति का ह्रास करते हैं। कितने ही मूर्ख लोग अपने मित्रों, सबंधियो तथा पडोसियों मे हैजा फैलाते है। आप बीमार हो और आपका दोष भी न हो, तो आपके प्रति सहानुभूति प्रकट की जानी चाहिए; किन्तु यदि आपकी असावधानता ही यदि आपके रोग का कारण हो तो आप ही सोचिए, क्या यह आपका अपराध नही है ?

आपको एथलीट बनने की आवश्यकता नही, मासपेशियो को असाधारण रूप मे बलशाली बनाने की आवश्यकता नही। इस प्रकार का अभ्यास तो उन्हे ही करना है, जिन्होने शारीरिक प्रदर्शन का धंधा अपनाना है, पहलवान अथवा मुक्केबाज बनना है। आपको सामान्य स्वास्थ्य, शक्ति, कुशलता तथा स्फूर्ति प्राप्त करनी है। आपका यह उचित अधिकार है कि आप स्वस्थता का आनन्द प्राप्त करने की इच्छा रखें और सौ वर्ष जीवित रहने की कामना करें। सदा उन प्रसिद्ध व्यक्तियों का ध्यान कीजिए, जो वृद्धावस्था मे भी स्फूर्तिमन्त तथा स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त थे, जैसे प्लेटो, बुद्ध, सोफोक्लस, वाल्टेयर, गेटे, फ्रेडरिक हेरिसन, रॉबर्ट, ब्रिजिज़, एनी बीसेंट, बर्नार्ड शॉ, डा० जे० ओल्डफील्ड, जोन डिकी इत्यादि।

प्रत्येक देश मे कतिपय लोग सौ वर्ष तक जीवित रहते हैं, आप क्यों नहीं रह सकते ? आपको मानव शरीर-रचना पर कुछ पुस्तकें अवश्य पढनी चाहिए। कितने ही व्यक्ति यही नही जानते कि उनके शरीर के ढाचे की रचना या अस्थिपंजर का स्वरूप क्या है ! यदि वे एक मोटर खरीदें, तो उसके एक-एक कल-पुर्जे को जानने तथा मोटर-चालन विधि को जानने का प्रयत्न अवश्य करेंगे। इसका कारण शायद यह है कि मोटर के लिए उन्होंने दाम दिये हैं; जबकि उनका शरीर उन्हें प्रकृति की ओर से बिना मूल्य उपहार मिला है। शरीर-रचना तथा शरीर क्रिया विज्ञान का अध्ययन करके अपने शरीर के बारे मे पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कीजिए।

आपको कुछ एक पुस्तकें ऐसी भी पढनी चाहिए, जो विशेषज्ञों द्वारा

लिखित हों। अपनी सामान्य सूझ-बूझ के द्वारा आपको उन्हें व्यवहार में उतारने का प्रयत्न करना चाहिए। इतना ध्यान रहे कि सभी विशेषज्ञों का दृष्टिकोण एकांगी हो जाता है। आप उनके उपदेशों का प्रयोग द्वारा परीक्षण कर सकते हैं। आपको उपवास, निरामिष भोजन, आमिष भोजन, दुग्ध भोजन, शाकाहार, एक समय भोजन, जल चिकित्सा, प्रातराश-त्याग, स्वच्छता, सूर्य धूप स्नान, बिना पकाया भोजन, रेडियम एमिनेशन चिकित्सा—इत्यादि पर भी कुछ पुस्तकों का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। किन्तु उन पुस्तकों में दिये प्रयोगों को अपने शरीर पर करने से पूर्व आपको दो बार नहीं, बल्कि तीन बार विचार कर लेना चाहिए। स्मरण रखिए कि स्वास्थ्य रक्षा के नियम मनुष्य के लिए बने हैं; न कि मनुष्य उनके लिए। स्वास्थ्य केवल एक उच्चतर लक्ष्य के लिए साधन है। हर समय सेहत बनाने के ध्यान में डूबे रहना ठीक नहीं। आप उनका अनुकरण करने का प्रयत्न मत कीजिए जो हर समय केलोरीज़, विटामिन, तथा टौक्सिन की ही रट लगाकर उबा देते हैं। स्वास्थ्य के लिए इस प्रकार की सनक भी एक रोग ही है। अपने शरीर का उचित ध्यान रखिए; किन्तु उचित से अधिक नहीं। स्वस्थता के लिए इन बातों पर ध्यान दीजिए—

1. स्वच्छ वायु—आपके फुफ्फुसों (फेफड़ों) को ताजा वायु की आवश्यकता है। आधुनिक नगरों की दूषित वायु विषैली होती है। ग्राम में अथवा उपनगरों में निवास करने का प्रयत्न कीजिए। सोते समय अपने शयनकक्ष की खिड़की शीतकाल में भी खुली रखिए। शीतल वायु आपको हानिप्रद नहीं होगी, यदि बिस्तर में आप पर्याप्त गर्मायिश का प्रबन्ध रखें। यदि सुविधा हो तो ग्रीष्म में आप खुली छत पर अथवा बालकनी में [illegible] करें। जिस प्रकार आपके फेफड़ों को भरपूर वायु की आवश्यकता है, उसी प्रकार आपकी त्वचा को भी पर्याप्त वायु चाहिए। अतएव, [illegible] कुछ मिनट के लिए अपने शरीर को खुली वायु में खोलिये और उसे [illegible] लगने दीजिए। ग्रीष्म के अवकाश-दिवसों में शरीर को खुली [illegible] देर तक वस्त्रों से मुक्त रखकर वायु को त्वचा के भीतर प्रवेश करने [illegible] अत्यधिक गाढ़े तथा भारी वस्त्र मत पहनिये, जिससे शरीर [illegible] प्रवेश रुक जाता है। अधोवस्त्र (कच्छा आदि) ऐसा [illegible] वायु का प्रवेश न रुके।

श्वास लेने की उचित विधि सीखिए। प्रतिदिन [illegible] का अभ्यास कीजिए। ओषजन आपको तरुण रखेगी। [illegible] तथा डा० कैलौग का कथन है—"वायु की [illegible]

जिसकी एक मनुष्य को आवश्यकता है, वह 40 से 50 क्यूबिक फुट है।" यूस्टेस माइल्स लिखते हैं—"थोड़ी-थोड़ी देर बाद, दिन-भर दीर्घ श्वास लेने की आवश्यकता है। साधारण सभ्य मानव की श्वास क्रिया न तो गहरी है और न पूर्ण ही।"

2. जल—चिरकाल हुआ जब पिंडार ने कहा था—"जल सर्वोत्तम है।" वस्तुत: यह शरीर तथा आभ्यन्तर के लिए महान् शक्तिवर्धक है। प्रतिदिन सम्पूर्ण शरीर को स्वच्छ शीतल जल से धोइए, शीत ऋतु में उष्ण जल से स्नान किया जा सकता है। शुद्ध जल जितना पी सकें पीजिए। गुनगुना जल पीना अधिक लाभकारी है। प्रात:काल तथा दोनों समय के भोजनों के मध्य मे जल अवश्य पीना चाहिए। किन्तु भोजन के साथ नहीं पीना चाहिए। यदि जल अस्वच्छ हो या बहुत खारा हो तो, वाष्पीकृत जल पीना चाहिए। वाष्पीकृत जल एक औषधि है। समय आएगा जब इसका प्रयोग अत्यधिक बढ़ जाएगा। दिन में कई बार अपनी आंखों को शीतल जल से धोइए। कभी-कभी कवोष्ण जल का अनीमा लेकर अतड़ियों की सफाई करते रहना चाहिए, इससे आयु बढ़ती है।

3. धूप—आपको डा० सूर्य से निकट सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए, जो कि बिना फीस लिए कई रोगों को दूर कर देता है। प्रतिदिन प्रात:काल सूर्य की किरणों के सम्मुख अपने शरीर को नियम से निर्वसन कीजिए। जहां सूर्य की धूप न निकलती हो, वहां 'सन लैम्प' का प्रयोग किया जा सकता है। डा० सी० एच० टाइरस का कथन है— "सूर्य की धूप प्रकृति का सर्वोत्तम चिकित्सा-साधन है। धूप बिना डिग्री के, बिना मूल्य अनेक रोगों को जड़ से उखेड़ देती है।" बिजली के प्रकाश में भी शरीर को उघाड़ना लाभकारी है। इससे रक्तसंचार स्वस्थ होता है।

4. भोजन—जो कुछ आप खाते-पीते हैं, बहुत सीमा तक आपका स्वास्थ्य उसी पर निर्भर करता है। भोजन-सम्बन्धी ज्ञान में स्वास्थ्य रक्षा का 80% समाहित है। इस बारे में तीन प्रश्न हैं—कैसे खाना और पीना चाहिए? कितना खाना और पीना चाहिए? क्या खाना और पीना चाहिए।

कैसे खाना और पीना चाहिए ? इसका उत्तर है—धीरे-धीरे तथा प्रसन्नता से। अपने भोजन को खूब अच्छी तरह चबाइए। दांतों का काम आमाशय नहीं कर सकता। ठोस भोजन, यहां तक कि दूध के साथ लालाग्रंथि के रस का मिश्रण होने दीजिए, तब उसे गले के नीचे उतारिए। बहुत अधिक भारी तथा निशास्ते वाले पदार्थों को बहुत कम खाइए। छोटे-छोटे ग्रास मुंह में डालिए। जब भूख लगे, तभी खाइए। भूख न हो और

भोजन का निश्चित समय हो गया हो, तो भी मत खाइए। अपने भोजन के समय श्रीमती प्रसन्नता देवी को भी अपना अतिथि बनाइए। हरबर्ट स्पेंसर, डा० डब्ल्यू० बी० केनन आदि ने प्रसन्नता को पाचन में सहायक बताया है। डा० एल० एच० गुलिक का कथन है—"चिन्ता, त्वरा, अनिश्चित मन, निरुत्साह, इनसे पाचन क्रिया के आरम्भ में ही बड़ी बाधा पड़ जाती है। डा० ए० हेग का कथन है—"एक समय में सादा दो-तीन प्रकार के पदार्थों से मुख्य भोजन करना स्वास्थ्य का रहस्य है।"

आप कितना खाएं? बहुत संयत रूप से खाएं। फारसी कवि सादी ने कहा है—"इतना मत खाओ कि भोजन तुम्हारे मुख से बाहर आने का प्रयत्न करने लगे और इतना कम भी मत खाइए कि आत्मा आपके शरीर से बाहर आने का प्रयत्न करने लगे। अत्यन्त निर्धन लोगों को छोड़कर शेष सभी लोग उचित मात्रा से बहुत अधिक भोजन करते हैं; विशेषतः तीस वर्ष की अवस्था के उपरान्त। कई देशों में भारी प्रातराश, गर्मागर्म दोपहर का भोजन, दोपहर बाद भारी चाय और रात को भारी भोजन—यह आम रिवाज है। किन्तु इतना स्पष्ट बता दें कि अधिक खाना ही अधिकांश रोगों का मूल कारण है। प्रत्येक व्यक्ति तनिक ध्यान दे तो वह अपने लिए भोजन की 'उचित' तथा 'उचित से अधिक' मात्रा में अन्तर जान सकता है। मात्रा से अधिक भोजन शरीर में समीकृत नहीं होता और वह विष बनाता है, जिससे अनेक रोगों का जन्म होता है।

क्या खाना चाहिए? वस्तुतः यह अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है। पोषण के लिए, अनेक पदार्थों का भोजन में सम्मिलित किया जाना, जिनके अभाव में अनेक रोगों का जन्म होता है। बहुत से रोग दूषित तथा दुर्बल भोजन के कारण होते हैं। भोजन में हम कई आवश्यक वस्तुओं को सम्मिलित नहीं करते और अनावश्यक वस्तुओं को शामिल कर लेते हैं। इसीलिए दुख पाते हैं, रोगी होते हैं और आयु को कम करते हैं। डा० आर० सी० मेकफी का कथन है—"भोजन ही मनुष्य के शरीर का आधार है। प्रत्येक अस्थि, प्रत्येक मांसपेशी भोजन से ही बनती है।… अतः भोजन जितना महत्वपूर्ण प्रश्न अन्य कोई नहीं हो सकता।"

भोजन के विभिन्न पदार्थों को चार भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(1) कुछ पदार्थ शरीर तथा मन के लिए सर्वथा हानिकारक तथा भयंकर हैं; अतः इन्हें विषवत् त्याग देना चाहिए। वस्तुतः वे विष ही हैं। किसी भी सभ्य देश को उनका उत्पादन नहीं करना चाहिए, हां केवल औषधिक प्रयोग के लिए यदि आवश्यकता हो तो उन्हें उत्पन्न किया जा

सकता है। इस प्रकार की हानिकर वस्तुएं ये हैं—अफीम, कोकीन, हेरोइन, हशीश, शराब (ब्रांडी, ह्विस्की, रम इत्यादि), सुल्फा, गांजा, भांग आदि-आदि। इन पदार्थों की जिन लोगों को लत लग जाती है, वे शारीरिक बल, मानसिक बल खो बैठते हैं। हमें इन वस्तुओं का न केवल परित्याग करना चाहिए; बल्कि उनके विरुद्ध जोरदार प्रचार आन्दोलन चलाना चाहिए। जो व्यक्ति इन नशीले पदार्थों के आदी हो जाते हैं, उनकी शारीरिक शक्ति तथा मानसिक दृढ़ता नष्ट हो जाती है।

(2) कुछ अन्य पदार्थ इस प्रकार के हैं कि समझदार मनुष्य को उन के प्रयोग से भी दूर रहना चाहिए। वे न केवल हानिकारक तथा आरोग्यनाशक हैं; बल्कि धन के नाशक भी हैं। आपको चाहिए कि मानव-जाति के इन शत्रुओं से मित्रता न करें। आपको इनका दास तो कभी भी नहीं बनना चाहिए। वे पदार्थ हैं—हल्की शराब, बियर, चाय, काफी, कोका, पान, तम्बाकू, मांस, मछली, गरम मसालें, पेस्ट्री तथा मिठाइयां आदि। अलकोहल थीइन, टैनीन, कैफीन, थियोब्रोमाइन, निकोटाइन इत्यादि तत्त्व स्वास्थ्य के लिए हानिकर हैं।

वर्नर मैकफेडन का कथन है—"तम्बाकू, विशेषतः सिगरेट प्रोटोप्लाज्मिक विष उत्पन्न करता है। इससे मस्तिष्क, हृदय, धमनियां तथा गुर्दे रोगी हो जाते हैं। सिगरेट से मानसिक स्फूर्ति मन्द होती है। इससे आयु कम होती है। इससे मानव-जाति का अधःपतन होता है और लाभ कुछ भी नहीं होता।"

प्रसिद्ध आविष्कारक वैज्ञानिक टामस अल्वा एडिसन ने लिखा है—"अन्य नशों की अपेक्षा सिगरेट से मनुष्य स्थायी रूप से पतित तथा अस्थिर चित्त हो जाता है। मैं ऐसे किसी व्यक्ति को काम पर नहीं रखता जो सिगरेट पीता हो।"

डा० जे० एच० कैलोग का कथन है—"निकोटाइन हृदय के लिए सबसे भयंकर विष है।"

(3) कुछ भोज्य पदार्थ सुपाच्य तथा आवश्यक हैं किन्तु उनका प्रयोग सीमा में ही करना उचित है; उदाहरणतः अण्डे, गेहूं की रोटी, मक्की, बाजरा, चावल, उबली हुई गेहूं, जो हर प्रकार की गिरियां (बादाम आदि), पनीर, मक्खन, क्रीम, मूंगफली का तेल, सोयाबीन, मटर, फ्रेंच-बीन, दालें, शहद, शक्कर, गुड़, चीनी इत्यादि।

मशीनों घुले चावल, कृत्रिम सफेद किये आटे की डबलरोटी, तथा सफेद चीनी—ये कृत्रिम भोज्यपदार्थ हैं। इनसे कब्ज, अपच, अपोषण, दन्त-क्षय, गुर्दे का दर्द—इत्यादि होते हैं।

(4) कुछ भोज्य पदार्थ इतने सुपच हैं कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में लिया जा सकता है, जैसे—दूध, मलाई, दही, सभी फल विशेषतः अंगूर, अंजीर, संतरा, मुनक्का, अखरोट, बादाम, सभी प्रकार की हरी शाक-भाजियां, आलू, शकरकन्द आदि। फलों तथा तरकारियों के विषय में यह ध्यान रखना चाहिए कि वे ताजे हों। हरी तरकारियां खाइए, और तरुण बने रहिए। मानव के लिए दुग्ध भोजन स्वास्थ्य, सौन्दर्य तथा स्फूर्ति प्रदान करता है। डा० मैकेंजी का कथन है—"दूध बच्चों के लिए अनिवार्य है, प्रौढ़ों के लिए आवश्यक है और युवकों के लिए उपयोगी है। संसार के सभी देशों मे दूध को भोज्य पदार्थों में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।...' दही-लस्सी मे लैक्टिक एसिड होता है, जो पाचन-संस्थान के सब दोषों को दूर करता है।

अत्यधिक प्रोटीन-युक्त भोजन खाने से आमाशय भारी हो जाता है। पाचन कठिन हो जाता है। स्टार्च (निशास्ता), वसा (घी-तेल आदि), तथा चीनी—इनका प्रयोग अत्यधिक नही करना चाहिए।

सप्ताह मे एक दिन केवल फलों के आहार पर निर्भर रहने से तथा अन्य किसी प्रकार का भोजन न करने से रंग निखरता है, स्वास्थ्य उत्तम होता है और इससे पाचन-अंगों को निर्मल होने का अवसर मिलता है। यदि किसी दिन आप किसी सहभोज में सम्मिलित हों, तो दूसरे दिन उपवास करके उसकी प्रतिक्रिया अवश्य कर लें। सप्ताह में, एक समय का भोजन त्यागकर, किसी भी वय-वर्ग मे लाभ उठाया जा सकता है। इससे पाचन-संस्थान की अनियमितताएं दूर होती हैं।

5. व्यायाम—व्यायाम को दैनिक कर्तव्य समझना चाहिए। चाहे आप किसी व्यायाम-उपकरण का प्रयोग करें या न करें, किन्तु व्यायाम प्रतिदिन अवश्य करें। प्रतिदिन अंगों को विभिन्न प्रकार से हिला-डुलाकर व्यायाम करना चाहिए। इसके लिए कुछ ही मिनट पर्याप्त होते हैं। मासपेशियो के नियमित व्यायाम से आश्चर्यजनक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। इससे आयु भी दीर्घ होती है। नियमित व्यायाम से प्रौढ़ावस्था तक शरीर युवकों जैसा बना रहता है। मांस तन्तुओं की मरम्मत के लिए व्यायाम अत्यन्त आवश्यक है, इससे मांस-पेशियां तरोताजा हो जाती हैं। इससे रक्त में नवीनता का संचार होता है। इसमे अनावश्यक दूषित अंश भस्म हो जाते हैं। व्यायाम से अंग-प्रत्यंग मे स्फूर्ति आ जाती है। शरीर के भीतरी संस्थानो मे सुधार होता है। यदि आप व्यायाम नहीं करते तो आपके शरीर तथा मन मे शिथिलता का संचार होता है। तेल की मालिश भी शरीर के लिए नितान्त उपयोगी है। सिर की मालिश भी

की जानी चाहिए। ग्रीक तथा रोमन मालिश द्वारा अपने शरीरो को बलिष्ठ बनाया करते थे। *अत्यधिक थकाने वाले व्यायाम से बचिए।* इससे लाभ की बजाय हानि होती है।

6. खेल-कूद—क्रीडा क्षेत्र में खेलकूद करना जहां आनन्ददायक है, वहां एक कर्त्तव्य भी है। डा॰ टी॰ बी॰ स्काट का मत है कि साधारण रूप मे चलते हुए भ्रमण करना सर्वोत्तम व्यायाम है। प्रतिदिन भ्रमण नियमित रूप से करना चाहिए। नगर में आसपास के स्थानों पर पैदल ही आना-जाना चाहिए, वाहनों का दास नही बनना चाहिए। टेनिस, बैडमिंटन, फुटबाल, क्रिकेट, हाकी, गोल्फ, घुड़सवारी, तैराकी, नौका चालन, दौड़, बास्कट बाल, साइक्लि-दौड़, बेसबाल, स्कीइंग, बागवानी, नृत्य, कबड्डी इत्यादि उत्तम खेल हैं, जिनसे मनोरंजन, स्वास्थ्य, भ्रातृभाव तथा प्रसन्नता का लाभ होता है।

7. शक्ति-संरक्षण – ब्रह्मचर्य या विवाहित अवस्था में भी संयमित, 'काम' द्वारा शक्ति-संरक्षण किया जा सकता है। दवाइयो तथा टॉनिकों की अपेक्षा इससे शक्ति-रक्षा मे अधिक सहायता मिलती है। यदि मनुष्य अनावश्यक रूप मे तथा अविचारपूर्ण रीति से अपनी शक्ति को बहाता है, तो वह रोग, दु ख तथा पश्चात्ताप का पात्र बनता है। अत्यधिक कामोपभोग से शरीर की रोग-निरोध शक्ति कम होती जाती है। प्रत्येक *विचारपूर्ण बुद्धिमान मनुष्य को कामोपभोग मे मर्यादा का पालन अवश्य करना चाहिए,* अन्यथा न केवल रोग आ घेरते हैं; बल्कि आयु भी कम होती है। अपने धन से भी बढकर अपनी शक्ति के संरक्षण का प्रयत्न कीजिए। स्वास्थ्य तथा दीर्घायु के लिए यह एक महान रहस्य है।

8. आशावाद तथा दयालुता—मन ही मनुष्य के स्वास्थ्य का या रुग्णता का कारण है। 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।' जिस प्रकार शरीर का मस्तिष्क पर प्रभाव पडता है, उसी प्रकार मस्तिष्क का भी शरीर पर बडा गहरा प्रभाव पडता है। आशावाद तथा दयालुता से मन फूल की तरह विकसित रहता है। इन दोनों के अभाव मे वह मुरझा जाता है। अत्यधिक चिन्ता, सोच-फिक्र, मानसिक निराशा से पाचनक्रिया बन्द हो जाती है और वातनाडी संस्थान अस्त-व्यस्त हो जाता है। शरीर तथा मन अन्योन्याश्रय है।

प्रसन्नता से भरा मन हो तो शरीर स्वयंमेव स्वस्थ रहता है। प्रेम, *सज्जनता, दयालुता* नीरोग रखने के अचूक साधन हैं। मधुरवचन, दयालुता के काम करके न केवल आप औरों की सहायता [illegible] हैं; बल्कि अपने भी तन-मन को हर्षित करते [illegible]

एलमर गेट का कथन है—"मेरे प्रयोगों तथा परीक्षणों से यह प्रकट हुआ है कि चिन्ता, निराशा, कुढ़न और जलन से शरीर यन्त्र में हानिकारक मिश्रण पैदा होते है, जिनमें से कुछ एक अत्यन्त विषैले होते हैं, इसके विपरीत प्रसन्नता वर्ग के भावों—आशा, उदारता, दयालुता आदि से शरीर में इस प्रकार के रासायनिक मिश्रण उत्पन्न होते हैं, जो शरीर के लिए बहुमूल्य पोषण का काम करते है, शरीर के सैल्स (Cells) को इस प्रकार की उत्तेजना देते हैं, जिनसे शक्ति का उत्पादन होता है।"

अत: सर्वदा मुस्कान आपके मुख पर खेलती रहे। आपके मन में दयालुता की भावना भरी रहे। इनसे आपको उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होगी। प्रसन्नता और दयालुता से आप स्वास्थ्य तथा दीर्घायु—ये दो वरदान प्राप्त करेंगे।

11

सही सौन्दर्य संस्कृति

कला के सिद्धान्त तथा कार्य

सौन्दर्य-सस्कार का आरम्भ बाल्यावस्था मे ही हो जाना चाहिए।
इसका आधार शुद्ध सिद्धान्त होने चाहिए। यह एक विशाल सीढी के
समान है, जिस पर चढता हुआ मनुष्य उच्चतम सीमा तक पहुंच सकता
है। सौन्दर्य दृष्टि का उद्देश्य है—कला की सराहना तथा उससे सर्वोत्तम
आनन्द की प्राप्ति। कला द्वारा हमारी भावनाओ को प्रेरणा प्राप्त होती
है। कला का शासन-क्षेत्र भावनाए ही हैं। बुद्धि का अंश इसमे कम होता
है। विज्ञान का बुद्धि से सीधा सबध है, और कला का भावनाओं से। कुछ
अतिबुद्धिवादी लोगो का मत है कि सौन्दर्यदृष्टि—एक बौद्धिक तथा
सुविचारित निर्णय है। किन्तु यह एक मिथ्या भ्रम है। सौन्दर्य बुद्धि के
द्वार से मन में प्रवेश नही करता। इसका अपना पृथक् द्वार है, जिससे
मन ही नही; आत्मा तक प्रविष्ट हो जाता है। कला तथा विज्ञान यद्यपि
स्वतन्त्र हैं, किन्तु वे अन्योन्याश्रित भी हैं।

उदात्ततम कला मे अक्षुण्ण आनन्द तथा चिर-नवीन प्रेरणा प्राप्त
होती है। रिचर्ड वेगनर ने कहा है—"कला स्वयं आनन्द है, जीवन मे
आनन्द प्रदायिनी है तथा समाज मे आनन्द विधायिनी है।" कला गहन
संवेदना की स्फुरणा प्रदान करती है तथा जीवन के लिए उत्साह देती
है। इस प्रकार यह मानव की विकास-प्रक्रिया को अग्रसर करती है।

आपको कला तथा सौंदर्य संबंधी विभिन्न नियमों के वाद-विवाद मे
पडने की आवश्यकता नही। आप उनका अध्ययन करें तथा उनका सार
ग्रहण कर लें। कलाकार निरन्तर ... को सच... करते है ... । आलो-
चक तो केवल उसकी कृति... को ... महा-
काव्य की रचना व्याकरण ... ।
सौन्दर्य के सम्बन्ध मे सभी

कार कर दें। प्लेटो, प्लोटिनस, हेगल, कज़िन, ब्राडले तथा इन्हीं जैसे अन्य सिद्धान्तवादियों के सौन्दर्य-सम्बन्धी सूत्र काल्पनिक हैं। अपने 'सिपोज़ियम' में प्लेटो ने लिखा है—"सौन्दर्य पूर्ण है, सीधा-सादा है, अमर है—इस पूर्ण सौन्दर्य का कुछ अंश नाशवान् पदार्थों को प्राप्त होता है।" प्लेटो ने 'फेडरस' में सौन्दर्य की यह परिभाषा प्रस्तुत की है—"···यह इन्द्रियातीत तत्त्व है, इसके दर्शन 'समाधि' अवस्था में होते हैं।" प्लोटिनस ने कहा है—"आत्मा जब विश्व के किसी वस्तु तत्त्व को अपने अनुरूप देखती है या उसमें अपने सादृश्य का कोई चिह्न देखती है, तब उसके सम्मुख सौन्दर्य साकार होता है।" हेगल भी इसी प्रकार अस्पष्ट शब्दों में लिखता है—"कला की सुन्दरता ऐसी सुन्दरता है जिसका उत्स मन अथवा आत्मा में होता है; किन्तु मन अथवा आत्मा के द्वारा उस सत्य को कलात्मक रूप में साकार; अर्थात् इन्द्रिय-ग्राह्य बनाकर अभिव्यक्त किया जाता है।" कज़िन का कथन है—"जब हम ईश्वर को सर्व पदार्थ मात्र का मूलाधार मानते हैं, तो पूर्ण सौन्दर्य का भी मूल उत्स वही होगा, अतः सभी सौन्दर्य-पात्रों का वही स्रष्टा है, जैसे वह शारीरिक, बौद्धिक तथा नैतिक जगत् का स्रष्टा। ईश्वर में सौन्दर्य तथा उदात्तता का संयोग है।" सी० ई० एम० जोड का कथन है—"कलाकार का निर्माण जीवन-शक्ति ने किया है।" एफ० एच० ब्राडले के अनुसार—"सौन्दर्य अविनाशी की प्रतिमूर्ति है।" जी० जेन्टाइल ने कला की यह परिभाषा की है—"कला विचारों की आत्मा है।" रस्किन का कथन है—"सौंदर्य : विश्वात्मा की सृजनशक्ति की अभिव्यक्ति है।" इस प्रकार की थ्योरियों द्वारा कला के उद्भव तथा कार्य का कोई स्पष्ट व्याख्यान हमारे सम्मुख उपस्थित नहीं होता। ऐसा कोई 'पूर्ण' सौन्दर्य नहीं है, जो देशकालातीत हो। कला का 'पूर्ण' अथवा 'अविनाशी' से कोई सम्बन्ध नहीं है। कला तो मानव की अपनी उपलब्धि है और इसकी सृष्टि ऐहिक जीवन के हेतु है।

सुकरात तथा बर्कले ने सौन्दर्य की व्याख्या करने के अनेक प्रयत्न किये हैं। औचित्य, उपयुक्तता तथा अनुरूपता को सौन्दर्य के तत्त्व स्वीकार किया है। अरस्तू तथा कांट ने—अनुकूलता, आनुपातिकता, क्रम-बद्धता, तथा सामंजस्य को सौन्दर्य के तत्त्व माना है। शिलर, ह्यूम, एम० एलेक्ज़ेंडर तथा लेंगफील्ड ने—भागों (अंगों) की सदृश अनुरूपता, तथा समन्वय को एवं आकार की एकता तथा अंशों की संतुलितता को सौन्दर्य कहा है। स्पेंसर, रस्किन तथा संतायाना ने कला के लिए आनन्दप्रदायिनी होना आवश्यक गुण बतलाया है।

डूबकर आत्मविस्मृत हो जाएं और आपको अपने अस्तित्व का ध्यान न रहे तो वस्तुत: वह एक श्रेष्ठ कला-कृति है, फिर भले ही उसका बाह्य रूप अथवा शैली कुछ भी हो। यदि कोई कृति आपको यथापूर्व खिन्न रहने दे, आत्म-चेतन रहने दे, तथा आलोचनापूर्ण बनाये रखे तो यह श्रेष्ठ कला-कृति नही है, फिर भले ही उसमें कितनी उपयोगिता, समानुपातिकता हो और वह आनन्दप्रदायिनी भी हो।

महान् कला आत्मा पर गहरा प्रभाव डालती है और इसी से घोषित होता है कि वह श्रेष्ठ कला है। यह एकमात्र कला की न्यायपूर्ण कसौटी है। जिस प्रकार एक हास्यपूर्ण उक्ति के लिए यह आवश्यक नही कि साथियो को हंसाने के लिए उसकी व्याख्या की जाए, उसी प्रकार एक कला सजीव तथा अमर नही है यदि वह तुरन्त ही आपकी आत्मा को उदात्त नही कर देती तथा आपको आत्मचेतना से दूर नही ले जाती। वास्तविक कला-कृति के साथ उसी प्रकार आप रह सकते हैं, जिस प्रकार, आप एक मित्र के साथ रह सकते हैं। इसी कसौटी पर प्राचीन मध्यकालीन तथा आधुनिक कला की परीक्षा की जा सकती है। प्रभाववाद (Impressionism), उत्तर-प्रभाववाद, वोर्टेसिज्म, न्यूमेरलिज्म, ओरफ़िज्म, इंटेगरलिज्म, प्वांइटलिज्म, डिविज़निज्म, सरियलिज्म, नव-प्रभाववाद, क्यूबिज्म इत्यादि नवीन कला के अनेक प्रकार स्वीकार किये जाते है। चाहे कला के सबध मे आप किसी 'वाद' को मानते है, उपर्युक्त कसौटी आपको पूरी तरह काम देगी। यही नही, स्थापत्यकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीतकला तथा काव्यकला, नृत्यकला, नाट्यकला, भाषणकला इत्यादि सभी कलाओं के परीक्षण में यही कसौटी काम आएगी—'आत्मविस्मृति।'

यदि नये कलाकार नवीन आदर्शों की स्थापना करें अथवा नई शैलियों का प्रवर्तन करें, तो आपको उनकी निन्दा नही करनी चाहिए, किन्तु प्रतीक्षा कीजिए और देखिए कि क्या वे वस्तुत. विशुद्ध कला का सृजन कर सकते हैं या नही। कला कभी एक स्थान पर स्थिर नही रहती वह केवल अतीत की पुनरावृत्ति नही कर सकती। नवीन विकास धाराओं को प्रोत्साहन देना होगा, उनका स्वागत करना होगा। कलाकार को स्वतन्त्रतापूर्वक किसी प्रकार की सामग्री का उपयोग करने दीजिए। उसे अपने पसन्द के औजारो का प्रयोग करने दीजिए। उसे मनचाहे रेखा, रंग. तर्ज़, आकार, मोड़, ढंग ढाचे, डिज़ाइन तथा स्वर-ताल का प्रयोग करने दीजिए। किन्तु यदि वह एक श्रेष्ठ कला-कृति का सृजन करता है, जो आपको आन्दोलित कर दे, प्रफुल्लित कर दे, औ[illegible] वशीभूत कर दे—यहां तक कि आपको आत्मविस्मृत बना [illegible] दीजिए

इस प्रकार के सभी सिद्धान्त असंबद्ध हैं; क्योंकि इनसे पता चलता है कि सौन्दर्य किन्ही अन्य बातो पर आधारित है, जो स्वयं सौन्दर्य नहीं हैं। कुछ विद्वानो ने (उदाहरणत एच० ताने ने) कला को विज्ञान से तथा कतिपय अन्य विद्वानो ने इतिहास या गणित से तुलना देने का प्रयत्न किया है। किन्तु एक स्वतः सिद्ध स्वयपूर्ण तत्त्व है। कला की रचना सौन्दर्य-सृजन के लिए होती है, इसके सिवा अन्य किसी उद्देश्य के लिए नही। एक वस्तु भले ही उपयोगी, सामजस्यपूर्ण, ऐक्ययुक्त अथवा आनन्द-विधायिनी हो सकती है, तथापि सभव है उसमें सौन्दर्य का अभाव हो। प्रतिभाशाली व्यक्ति कला की विधि का अन्वेपण कर लेता है, किन्तु इस विधि में युग तथा देश के अनुसार विविधता और विभिन्नता हो सकती है। किन्तु शैली ही सौन्दर्य का सार नही है। सौन्दर्य का सृजन उचित अनुपात से अथवा अनुपात रहितता से भी हो सकता है, कला की रचना विविधता तथा एकता से भी हो सकती है। कला का सर्वोत्तम उपहार आनन्द नही है; क्योकि कला 'अद्भुत', 'आश्चर्य' तथा 'रहस्य' की भावनाओं की जनयित्री भी हो सकती है। आनन्द तो वास्तव में कला का एक सह-उत्पादन है। कालरिज के इस कथन मे सत्यांश अधिक है—"अपोलो बेलवेडियर इसलिए सुन्दर नही है कि वह प्रसन्नतादायक है; बल्कि वह इसलिए प्रसन्नतादायक है, क्योंकि वह सुन्दर है।"

मेरा विश्वास है कि सौन्दर्य की विश्वजनीन परिभाषा यही हो सकती है कि वह प्रत्यक्षकर्ता को आत्मविस्मृत कर देती है। कला आपको आत्म-विस्मृत कर देती है। वह आत्मचेतना की विपरीतावस्था उपस्थित करती है।

'सौन्दर्य' की अभिव्यक्ति क्रिसोस्टम के उस सुप्रसिद्ध कथन से भली-भाति होती है जो उसने ओलिम्पिया मे फिडिया की मूर्तिकृति जीअस को देखकर उद्गार रूप मे प्रकट किया था—"कोई भी मनुष्य जिसकी आत्मा दुखी है, जिसने अनेक दुर्भाग्यों को सहन किया है, जिसने जीवन-भर दु:ख सहा है, जिसे चैन-आराम नही, जिसे नींद भी नहीं आती, इस प्रकार का व्यक्ति भी, वह भी यदि इस मूर्ति के सम्मुख आ खड़ा हो तो वह अपने मर्त्य जीवन के सभी भयों तथा कष्टों को भूल जाएगा।" इस प्रकार की अद्वितीय शक्ति जो आपको अपनी वास्तविक दशा से दूर ले जाए, आपके व्यक्तित्व विशेष से ही आपको पृथक् कर दे, यही कला का विशिष्ट गुण है। आत्मविस्मृत करना ही कला का सार-तत्त्व है, उपयोगिता, आनन्द, सामंजस्य तथा अन्य विशेष गुण कला के गौण गुण हैं। यदि कोई कला-कृति आपको इस प्रकार प्रभावित करती है कि आप उसके सौन्दर्य मे

डूबकर आत्मविस्मृत हो जाए और आपको अपने अस्तित्व का ध्यान न रहे तो वस्तुतः वह एक श्रेष्ठ कला-कृति है, फिर भले ही उसका वाह्य रूप अथवा शैली कुछ भी हो। यदि कोई कृति आपको यथापूर्व खिन्न रहने दे, आत्म-चेतन रहने दे, तथा आलोचनापूर्ण बनाये रखे तो यह श्रेष्ठ कला-कृति नहीं है, फिर भले ही उसमें कितनी उपयोगिता, समानुपातिकता हो और वह आनन्दप्रदायिनी भी हो।

महान् कला आत्मा पर गहरा प्रभाव डालती है और इसी से घोषित होता है कि वह श्रेष्ठ कला है। यह एकमात्र कला की न्यायपूर्ण कसौटी है। जिस प्रकार एक हास्यपूर्ण उक्ति के लिए यह आवश्यक नहीं कि साथियों को हंसाने के लिए उसकी व्याख्या की जाए, उसी प्रकार एक कला सजीव तथा अमर नहीं है यदि वह तुरन्त ही आपकी आत्मा को उदात्त नहीं कर देती तथा आपको आत्मचेतना से दूर नहीं ले जाती। वास्तविक कला-कृति के साथ उसी प्रकार आप रह सकते हैं, जिस प्रकार, आप एक मित्र के साथ रह सकते हैं। इसी कसौटी पर प्राचीन मध्यकालीन तथा आधुनिक कला की परीक्षा की जा सकती है। प्रभाववाद (Impressionism), उत्तर-प्रभाववाद, वोर्टेसिज्म, न्यूमेरलिज्म, ओरफ़िज्म, इंटेगरलिज्म, प्वाइंटलिज्म, डिविज़निज्म, सरियलिज्म, नव-प्रभाववाद, क्यूबिज्म इत्यादि नवीन कला के अनेक प्रकार स्वीकार किये जाते है। चाहे कला के संबंध में आप किसी 'वाद' को मानते हैं, उपर्युक्त कसौटी आपको पूरी तरह काम देगी। यही नहीं, स्थापत्यकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीतकला तथा काव्यकला, नृत्यकला, नाट्यकला, भाषणकला इत्यादि सभी कलाओं के परीक्षण में यही कसौटी काम आएगी—'आत्मविस्मृति।'

यदि नये कलाकार नवीन आदर्शों की स्थापना करें अथवा नई शैलियों का प्रवर्तन करें, तो आपको उनकी निन्दा नहीं करनी चाहिए, किन्तु प्रतीक्षा कीजिए और देखिए कि क्या वे वस्तुतः विशुद्ध कला का सृजन कर सकते हैं या नहीं। कला कभी एक स्थान पर स्थिर नहीं रहती वह केवल अतीत की पुनरावृत्ति नहीं कर सकती। नवीन विकास धाराओं को प्रोत्साहन देना होगा, उनका स्वागत करना होगा। कलाकार को स्वतन्त्रतापूर्वक किसी प्रकार की सामग्री का उपयोग करने दीजिए। उसे अपने पसन्द के औजारों का प्रयोग करने दीजिए। उसे मनचाहे रेखा, रंग, तर्ज, आकार, मोड, ढंग ढांचे, डिज़ाइन तथा स्वर-ताल का प्रयोग करने दीजिए। किन्तु यदि वह एक श्रेष्ठ कला-कृति का सृजन करता है, जो आपको आन्दोलित कर दे, प्रफुल्लित कर दे, मोहित कर दे, वशीभूत कर दे—यहां तक कि आपको आत्मविस्मृत बना दे तो समझ लीजिए

इस प्रकार के सभी सिद्धान्त असंबद्ध हैं; क्योंकि इनसे पता चलता है कि सौन्दर्य किन्ही अन्य बातों पर आधारित है, जो स्वयं सौन्दर्य नहीं हैं। कुछ विद्वानो ने (उदाहरणत एच० ताने ने) कला को विज्ञान से तथा कतिपय अन्य विद्वानो ने इतिहास या गणित से तुलना देने का प्रयत्न किया है। किन्तु एक स्वत. सिद्ध स्वयपूर्ण तत्त्व है। कला की रचना सौन्दर्य-सृजन के लिए होती है, इसके सिवा अन्य किसी उद्देश्य के लिए नही। एक वस्तु भले ही उपयोगी, सामजस्यपूर्ण, ऐक्ययुक्त अथवा आनन्द-विधायिनी हो सकती है, तथापि सभव है उसमे सौन्दर्य का अभाव हो। प्रतिभाशाली व्यक्ति कला की विधि का अन्वेषण कर लेता है, किन्तु इस विधि मे युग तथा देश के अनुसार विविधता और विभिन्नता हो सकती है। किन्तु शैली ही सौन्दर्य का सार नही है। सौन्दर्य का सृजन उचित अनुपात से अथवा अनुपात रहितता से भी हो सकता है, कला की रचना विविधता तथा एकता से भी हो सकती है। कला का सर्वोत्तम उपहार आनन्द नही है; क्योकि कला 'अद्भुत,' 'आश्चर्य' तथा 'रहस्य' की भावनाओ की जनयित्री भी हो सकती है। आनन्द तो वास्तव में कला का एक सह-उत्पादन है। कालरिज के इस कथन मे सत्यांश अधिक है— "अपोलो बेलवेडियर इसलिए सुन्दर नही है कि वह प्रसन्नतादायक है; बल्कि वह इसलिए प्रसन्नतादायक है, क्योंकि वह सुन्दर है।"

मेरा विश्वास है कि सौन्दर्य की विश्वजनीन परिभाषा यही हो सकती है कि वह प्रत्यक्षकर्ता को आत्मविस्मृत कर देती है। कला आपको आत्म-विस्मृत कर देती है। वह आत्मचेतना की विपरीतावस्था उपस्थित करती है।

'सौन्दर्य' की अभिव्यक्ति क्रिसोस्टम के उस सुप्रसिद्ध कथन से भली-भाति होती है जो उसने ओलिम्पिया मे फिडिया की मूर्तिकृति ज़ीअस को देखकर उद्‌गार रूप मे प्रकट किया था—"कोई भी मनुष्य जिसकी आत्मा दुखी है, जिसने अनेक दुर्भाग्यों को सहन किया है, जिसने जीवन-भर दु.ख सहा है, जिसे चैन-आराम नही, जिसे नीद भी नही आती, इस प्रकार का व्यक्ति भी, वह भी यदि इस मूर्ति के सम्मुख आ खड़ा हो तो वह अपने मर्त्य जीवन के सभी भयों तथा कष्टों को भूल जाएगा।" इस प्रकार की अद्वितीय शक्ति जो आपको अपनी वास्तविक दशा से दूर ले जाए, आपके व्यक्तित्व विशेष से ही आपको पृथक् कर दे, यही कला का विशिष्ट गुण है। आत्मविस्मृत करना ही कला का सार-तत्त्व है, उपयोगिता, आनन्द, सामजस्य तथा अन्य विशेष गुण कला के गौण गुण हैं। यदि कोई कला-कृति आपको इस प्रकार प्रभावित करती है कि आप उसके सौन्दर्य मे

डूबकर आत्मविस्मृत हो जाएं और आपको अपने अस्तित्व का ध्यान न रहे तो वस्तुत वह एक श्रेष्ठ कला-कृति है. फिर भले ही उसका बाह्य रूप अथवा शैली कुछ भी हो। यदि कोई कृति आपको यथापूर्व खिन्न रहने दे, आत्म-चेतन रहने दे, तथा आलोचनापूर्ण बनाये रखे तो यह श्रेष्ठ कला-कृति नहीं है, फिर भले ही उसमे कितनी उपयोगिता, समानुपातिकता हो और वह आनन्दप्रदायिनी भी हो।

महान् कला आत्मा पर गहरा प्रभाव डालती है और इसी से घोषित होता है कि वह श्रेष्ठ कला है। यह एकमात्र कला की न्यायपूर्ण कसौटी है। जिस प्रकार एक हास्यपूर्ण उक्ति के लिए यह आवश्यक नहीं कि साथियों को हंसाने के लिए उसकी व्याख्या की जाए, उसी प्रकार एक कला सजीव तथा अमर नहीं है यदि वह तुरन्त ही आपकी आत्मा को उदात्त नहीं कर देती तथा आपको आत्मचेतना से दूर नही ले जाती। वास्तविक कला-कृति के साथ उसी प्रकार आप रह सकते हैं, जिस प्रकार, आप एक मित्र के साथ रह सकते हैं। इसी कसौटी पर प्राचीन मध्यकालीन तथा आधुनिक कला की परीक्षा की जा सकती है। प्रभाववाद (Impressionism), उत्तर-प्रभाववाद, वोर्टेसिज्म, न्यूमेरलिज्म, ओरफिज्म, इंटेगरलिज्म, प्वांइटलिज्म, डिविजनिज्म, सरियलिज्म, नव-प्रभाववाद, क्यूबिज्म इत्यादि नवीन कला के अनेक प्रकार स्वीकार किये जाते है। चाहे कला के संबंध में आप किसी 'वाद' को मानते हैं, उपर्युक्त कसौटी आपको पूरी तरह काम देगी। यही नहीं, स्थापत्यकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीतकला तथा काव्यकला, नृत्यकला, नाट्यकला, भाषणकला इत्यादि सभी कलाओं के परीक्षण मे यही कसौटी काम आएगी—'आत्मविस्मृति।'

यदि नये कलाकार नवीन आदर्शों की स्थापना करें अथवा नई शैलियो का प्रवर्तन करें, तो आपको उनकी निन्दा नहीं करनी चाहिए, किन्तु प्रतीक्षा कीजिए और देखिए कि क्या वे वस्तुत: विशुद्ध कला का सृजन कर सकते हैं या नहीं। कला कभी एक स्थान पर स्थिर नहीं रहती वह केवल अतीत की पुनरावृत्ति नहीं कर सकती। नवीन विकास धाराओं को प्रोत्साहन देना होगा, उनका स्वागत करना होगा। कलाकार को स्वतन्त्रतापूर्वक किसी प्रकार की सामग्री का उपयोग करने दीजिए। उसे अपने पसन्द के औजारों का प्रयोग करने दीजिए। उसे मनचाहे रेखा, रंग, तर्ज, आकार, मोड, ढंग ढांचे, डिजाइन तथा स्वर-ताल का प्रयोग करने दीजिए। किन्तु यदि वह एक श्रेष्ठ कला-कृति का सृजन करता है, जो आपको आन्दोलित कर दे, प्रफुल्लित कर दे, मोहित कर दे, वशीभूत कर दे—यहां तक कि आपको आत्मविस्मृत बना दे तो समझ लीजिए

कि वह महान् कलाकार है। फिर भले ही बड़े-बूढ़े अथवा समाचार पत्र-पत्रिका आदि उसके विषय मे कुछ भी आलोचना करें। इसकी प्रेरणा हमारे हृदय तक सचरित हो गई है और हम उसके साथ किसी भिन्न मानसिक लोक मे पहुच गए हैं। इस प्रकार की कला वस्तुतः अमर है। वह देशकालातीत है।

कला आत्मविस्मरण की जनयित्री क्यो है ?—इसका कारण यह है कि कला हमे अपने क्षुद्र व्यक्तिगत 'स्व' मे बाहर निकालती है और हमारा सयोग विशालतर समाजिक 'स्व' से कराती है, जो सभी नर-नारियो तथा बाल-बालिकाओ के लिए एक-समान 'अपना' होता है। सामाजिक 'स्व' मानवमात्र के लिए एक है। व्यक्तिगत 'स्व' व्यक्ति की परिधि तक ही सीमित है। कला हमे दोनो 'स्व' रूपो को एकाकार करके समझने के लिए समर्थ बनाती है। कला हमे व्यक्तिगत संकीर्ण कोष से बाहर निकालकर उदात्त चेतना के स्तर तक ऊंचे उठा देती है। उदात्त चेतना मुक्त आकाश मे, मुक्त पवन मे, मुक्त धूप मे ले जाकर व्यक्ति के व्यक्तित्व को उन्मुक्त विशालता प्रदान करती, उसे सबल बनाती तथा उसके व्यक्तित्व का विकास करती है। कला हमे उस उच्च स्तर तक शीघ्रता से तथा सुरक्षित रूप मे ले जाती है।

इसीलिए महान् कला का स्थायी सामाजिक मूल्य एवं महत्त्व होता है। महान् कला भी, नैतिक आचार शास्त्र की भांति, एक सामाजिक उत्पादन होता है, भले ही इसका वाहन एक व्यक्ति हो। क्या यह उल्लेखनीय तथ्य नही कि सामाजिक सराहना—कला का सार है। यदि किसी चित्र या मूर्ति की सराहना केवल कलाकार स्वयं करे; किन्तु गैलरी आनेवाला एक भी दर्शक न करे, यदि किसी कविता की सराहना केवल वही करे, जिसकी वह रचना हो; यदि किसी भवन को उसका स्थापत्यकार ही सुन्दर समझे; यदि किसी संगीत-रचना को स्वय संगीतकार ही पसद करे अन्य कोई श्रोता नही; तब हम इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि इस प्रकार की कला निकृष्ट, छिछली तथा नश्वर है। वह कला-कृति उस बच्चे के समान है, जिसके मां-बाप ही केवल उसे चाहते हैं, मित्र-सम्बन्धी तथा पड़ोसी नही! कला के स्वरूप के सम्बन्ध में हमारी जो कल्पना है उसमें 'सामाजिक अपील' सम्मिलित है। यही कारण है कि सभी कलाकार रचना करने के उपरान्त तुरन्त अत्यन्त उत्सुकता से प्रश्न करते हैं कि उनकी रचना की समाज ने अथवा न्यून से न्यून, किसी वर्ग ने प्रशसा की है अथवा नहीं। टालस्टाय ने बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक यह कहा था कि कला का मूल स्रोत समाज है तथा उसका वर्ण्य विषय भी मूलतः समाज ही है।

इससे हम अन्त मे इस निर्णय पर पहुंचते है कि महान् कला का मूल 'विश्वजनीन मानवता' मे है। महान् कला की जड़ें व्यक्ति अथवा सकीर्ण राष्ट्रीयता मे नही हो सकती। महान् कला 'वादो' 'वादो' 'सप्रदायो' 'दलो' अथवा 'चर्चो' की दास नही हो सकती। सर्वोत्तम कला वही है जिसे मानव जाति की अधिकतम बहु-सख्या पसद करे तथा जो कला अधिकतम कालावधि तक विश्व के स्त्री-पुरुषो को प्रिय लगती रहे। इस प्रकार की कला को संरक्षण के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं; क्योकि उसके सरक्षण के लिए अधिक मनुष्य प्रयत्नशील रहते हैं। निकृष्ट कोटि की कला किसी वर्ग, टोली, ग्रुप, संप्रदाय, दल या वाद से बंधी हुई होती है। इसीलिए वह सीमित प्रभाव वाली होती है और उसका सामाजिक आधार अस्थायी होता है। ज्यो ही वह वर्ग अथवा सप्रदाय आदि समाज से अदृश्य हुआ, त्यो ही वह कला भी नष्ट हो जाती है।

स्थानीय, अल्पकालिक, प्रोपेगेंडिस्ट कला शीघ्र ही काल के गाल में चली जाती है। सी० ई० एम० जोड ने कहा है—"कला, ससार मे नवीन विचारो के अवतारण का साधन है, सौन्दर्य, वस्तुतः जीवनशक्ति से पूर्ण विचार रूपी कडवी गोली के ऊपर की मीठी चीनी है। कलाकार समाज को वह जीवन शक्ति प्रदान करना चाहता है, कला सौन्दर्य उसमें सहायक है।" किन्तु ए० ई० हौसमैन का कथन है—"कविता का उद्देश बुद्धि नहीं है।" नवीनता आवश्यक तथा उपयोगी है, किन्तु कुछ विविधताएं ऐसी हैं जो समाज द्वारा स्वीकृत तथा ग्राह्य होती है; क्योकि समाज ने जीवन के कुछ स्थायी सिद्धान्तों का निर्धारण कर लिया हुआ है। कला का विषय केवल सामाजिक क्रियाशीलता (परिवर्तनशीलता) ही नही; अपितु सामाजिक स्थिरता (स्थायित्व) भी है। सूर्यास्त के सौन्दर्य का क्या प्रोपेगेंडा-मूल्य है ? एक शिशु के सुन्दर मुखड़े का क्या प्रोपैगेंडा मूल्य है ? क्लाड लोरेन के सुन्दर प्राकृतिक दृश्य-चित्रों का क्या प्रोपैगेंडा-मूल्य है ? ताजमहल का क्या प्रोपैगेंडा मूल्य है ? कला के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह गहरी भावनाओं को जागृत करे। इसका प्रत्यक्ष उद्देश्य बौद्धिक स्फुरणा नही है, न प्रोपैगेंडा या उपदेश ही है। यहा तक कि जब कला किसी नैतिक आचार के उपदेश-दान की महान भूल करती है, जैसा कि पोप तथा टप्पर ने किया, तो कला अपने क्षेत्र का सीमातिक्रमण करती है। कला का कारण चरित्रशिक्षा नहीं सौन्दर्य-सृजन है। व्यक्तित्व के विकास के लिए सौन्दर्य तथा चरित्र—ये दोनों एक-समान महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक तत्त्व हैं। कला एक ऐसे पादरी के समान नही, जो बडे सुन्दर कपड़े पहनता हो और जब भी आप उसे सड़क पर मिलें तो वह आपको

शास्त्रों के गंभीर वचन सुना-सुनाकर नैतिकता का उपदेश दे। कला की तुलना तो एक श्रेष्ठ तथा चतुर मित्र से की जा सकती है, जिसकी संगति से ही आप में स्वत: सुधार होता है तथा उदात्तभावनाएं हिलोरें लेने लगती हैं, भले ही वह मित्र एक भी शब्द न कहे। कला उपदेश नहीं देती, वह प्रेरणा प्रदान करती है। आस्कर वाइल्ड ने कला की स्वतन्त्रता के समर्थन में कहा—"कोई कलाकार नैतिक उपदेष्टा नहीं होता, कोई कलाकार किसी बात को सिद्ध नहीं करना चाहता, सभी कलाएं 'उपयोग'—रहित हैं।" वस्तुत: कला प्रत्यक्ष प्रोपेगंडा के हेतु 'उपयोग'—रहित है। तर्कों, प्रमाणों, युक्तियों, प्रस्तावादों आदि से वह परे है। जब किसी राजनैतिक प्रोपेगंडा के लिए कला का प्रयोग किया जाता है तो कला न केवल निकृष्ट; अपितु भ्रष्ट हो जाती है।

आप व्यक्तिगत रूप से कला के सृजन के लिए उत्तरदायी हैं, एतदर्थ केवल कलाकार ही उत्तरदायी नहीं है। यदि आप सद्गुणी तथा ईमानदार हैं, तो आपकी अभिरुचि महान् कला के सृजन में सहायक होगी। यदि आप नीच तथा अशिष्ट हैं, तो कला भी नीचता तथा अशिष्टता से पूर्ण होगी। कला आपकी सामाजिक मूर्ति का प्रतिबिंब है। कला के चार प्रकार हैं, जो चार विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों के प्रतिरूप हैं—(1) उदात्त कला (Sublime Art), (2) सहानुभूतिमय कला (Sympathetic Art), (3) सनसनीपूर्ण कला (Sensational Art), तथा काम-वासना संबंधी कला (Sexsual Art)।

उदात्त कला—सभी कलाओं में सर्वोत्तम है। उदात्तता, पवित्रता तथा महानता से अद्भुतता, आश्चर्य तथा सचाई की आकांक्षाएं जागृत होती हैं। जितना ही आप उदात्त कला को हृदयगम करते हैं, उतने ही आप ऊंचे उठते हैं, बुद्धिमान बनते हैं तथा प्रसन्नचित्त होते हैं। अपने दिन और रातें मूर्तिकला क्षेत्र में फिडिया में, चित्रकला क्षेत्र में माइकेल एंजेलो में, संगीत में कलाक्षेत्र में बाख तथा बीथोवन में, चर्च क्षेत्र में, गोथिक गिरजाघरों में, अफगान काल की भारतीय स्थापत्यकला में लगाइए, आपको न केवल असीम आनन्द की उपलब्धि होगी; अपितु आपको ज्ञान-वर्धन भी होगा। जब एक महान् प्रतिभाशाली व्यक्ति एक महान् कलाकार भी होता है, तभी उदात्त कला का सृजन होता है।

सहानुभूतिपूर्ण कला—यह कला सौन्दर्यमय, मनोहर तथा भव्य होती है। इसका उद्देश्य आनन्द प्रदान करना तथा सुसंस्कृत एवं शिष्ट बनाना होता है। इस प्रकार की कला आनन्द प्रदायिनी तथा उपयोगिनी होती है। उदात्त कला को पर्वत की गौरवमयी चोटियों से तुलना दी जा सकती है,

जब कि सहानुभूतिपूर्ण कला को मनोहर हरी-भरी घाटियों से । इस प्रकार की कला के दर्शन—मूर्तिकला मे प्रेक्साइटल्स की कला-कृतियो मे, चित्र-कला क्षेत्र मे राफेल, लुइनी, रोजेरी के चित्रों मे; स्थापत्य कला क्षेत्र में ताजमहल, अलहम्ब्रा, नाइक के मन्दिर (एथेंस) मे; तथा संगीतकला क्षेत्र में मोज़ार्ट पुक्किनी, वर्डी तथा रोजिनी की संगीत रचनाओं मे प्राप्त होते हैं ।

सनसनीखेज कला –तीव्र भीषण तथा तीव्र भावनायुक्त होती है । इसे हलचल तथा अशान्ति से प्यार होता है । यह आत्मा मे खलबली मचाती तथा उसे आन्दोलित कर देती है। अपने तीव्र रूप मे यह हानिकारक है । यह मध्यम कोटि की 'साधारण' कला है । मूर्तिकला क्षेत्र में स्कोपास तथा उसके समकालीन कलाकारो मे, संगीत क्षेत्र मे वेगनर, स्ट्राविस्की तथा जाज़ की संगीत रचनाओं मे, चिरिको के स्वप्न-भयकर चित्रों में; चित्रकला क्षेत्र मे कॅडिस्की के उग्र रगों में रंजित चित्रो में प्राप्त होती है, आधुनिक अमेरिकन स्थापत्य कला मे इसका उग्र रूप दिखाई पड़ता है ।

कामवासना-सम्बन्धी कला—यह कला सबसे निकृष्ट कोटि की है । यह दोषो तथा पतन का गहरा नाला है । यह आत्मा को पतित करती तथा उसे निर्दय एवं जंगली बनाती है । यह सदा ही भ्रष्टाचार तथा सभ्यता के अध पतन की पैदावार होती है । वीनस, लीडा, आदि मूर्तियां तथा गोया रूबेन्स आदि के चित्र इत्यादि इसी प्रकार की कला हैं । इस प्रकार की पाशविक वृत्तियों को भड़काने वाली कला बन्द होनी चाहिए तथा इसकी निन्दा की जानी चाहिए ।

स्थापत्य कला

स्थापत्यकला सर्वाधिक सामाजिक तथा शानदार कला है । इस कला मे उपयोगिता तथा सौन्दर्य का संगम होता है, साथ ही कला सामाजिक सगति तथा एकता का संवर्धन करती है । डिज़ाइन का ऐक्य, समरूप अनुपात तथा कल्पना-प्रवण आदर्शवाद से महान् स्थापत्य कला का जन्म होता है । महान् भवन अनेक बार सुन्दर मूर्तियो तथा चित्रो से सुसज्जित किये जाते है । इस प्रकार तीन मूर्त-कलाएं सौन्दर्य की सेवा मे एकत्र हो जाती है ।

आपको स्थापत्यकला के इतिहास तथा इसकी तकनीकी समस्याओ का अध्ययन करना चाहिए । आप महान भवनों के फोटो चित्रों तथा छोटे-छोटे मॉडेल्स मोल लें । और उनको ध्यान मे लाते हुए अपनी कल्पना की उड़ानें भरने का अवसर दें। निम्नलिखित भवन अत्युत्तम हैं—पार्थेनन,

टेम्पल आफ नाइक, पाएस्टम टेम्पल, कैथेड्रल्स आफ लिंकन, लिचफील्ड, एमियन्स, कोलोन, स्ट्रासबर्ग, अलमदा का मकबरा, दिल्ली की जामा-मस्जिद, कुतुबमीनार, ताजमहल, बुलंद दरवाजा, फ्लोरेंस स्थित कैथेड्रल का गुम्बज, रोम में सेंट पीटर का चर्च, कुस्तुन्तुनिया मे सेंट सोफिया, ग्रेनाडा मे अलहम्ब्रा, वेनिस में सेंट मार्क का चर्च, इस्पाहन की मस्जिद, चौथा पुल (The fourth bridge), पेरिस मे पेंथियन चर्च, वाशिंगटन का कैपिटोल, लंदन में पार्लियामेंट भवन, न्यूयार्क मे वूलवर्थ भवन, स्टाकहोम मे स्टेडशूसेट तथा कोन्सरथूसेट इत्यादि ।

एक नगरपालिका के नागरिक के रूप में आपका अधिकार है कि आप सार्वजनिक भवनों के निर्माण पर बल दें। नगरपालिका भवन, डाकघर, पुलिस स्टेशन, स्कूल, तथा अन्य सार्वजनिक इमारत सुन्दर बनाने पर जोर देना आपका कर्तव्य है।

मूर्तिकला

सुन्दर मूर्तिकला विशुद्ध आनन्द तथा प्रेरणा का स्रोत है। इस कला ने मानवता की बड़ी सेवा की है। इसी कला ने ग्रीक (यूनानी) दार्शनिकों, कवियों, वक्ताओं तथा राजनीतिज्ञों की प्रतिकृतियों की रक्षा की है। हम नहीं जानते कि बुद्ध तथा ईसामसीह की आकृतियां कैसी थीं; किन्तु हम सुकरात, प्लेटो, मारकस आरेलियस आदि के शान्त एवं निश्चित चेहरों से परिचित हैं; क्योंकि मूर्तिकला ने उनकी वास्तविक मुख-मुद्राओं को अब तक जीवित रखा है। इन मूर्तियों का ध्यान करने से हमें निरन्तर प्रेरणा प्राप्त होती है। इनसे हमारी आत्मा शान्ति, प्रफुल्लता तथा निश्चिन्तता प्राप्त करती है।

(1) यूनानी मूर्तिकला—मूर्तिकला में यूनान तथा जापान को सबसे अधिक सम्मान प्राप्त है। वे दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। यूनानी मूर्तिकला में जिन गुणों का अभाव है उनकी पूर्ति जापानी मूर्तिकला द्वारा होती है। खिलाड़ियों तथा क्रीड़ा-निरत स्त्रियों (डायना) आदि की मूर्तियों के लिए हम यूनानी के ऋणी हैं। इन मूर्तियों की प्रतिकृतियां सभी देशों के क्रीडा भवनों के शोभासंवर्धन के लिए प्रयुक्त की जानी चाहिए। एथेना की मूर्ति उदात्त कला की अप्रतिम कृति है। सिसली की मुद्राओं पर जो मुखाकृतियां उत्कीर्ण हैं, उनसे आपके मन अवश्य परिचित होने चाहिए। वीनस डिमलो, अपोलो बेलवेडियर आदि का अध्ययन कीजिए। वीनस तथा एल्गिन संगमरमर मूर्तियों को ध्यान में सचित कीजिए। ग्रीस की यात्रा कीजिए तथा वहां पार्थेनन तथा हर्मस के दर्शन करके जीवन सफल कीजिए।

प्राध्यापक एच० एन० फाऊलर का कथन है—"पार्थेनन की मूर्तिया अपनी ध्वस्त दशा मे भी, मानव प्रतिभा की सर्वोतम प्रतीक हैं।" सोफेकल्स डेमस्थनीज, आदि की मूर्तियों के चित्र या प्रतिकृतिया खरीदकर घर की शोभा बढाइए। सुकरात की प्रतिकृति मोल लीजिए।

प्राध्यापक पर्सी गार्डनर ने कहा है—"सभी युग—सरल सौन्दर्य, समझदारी, नीरोगिता के आदर्शों आदि के लिए, यूनान के चिर-ऋणी हैं, जिनको उसने अपनी कलाओं के माध्यम से विश्व मे प्रथम बार प्रस्तुत किया। यूनान मानव भावना का वास्तविक अभिव्यंजक है।"

(2) जापानी मूर्तिकला—जापानी मूर्तिकला 'बौद्धमत' की ऋणी है। इस मूर्तिकला ने सन्तो-महात्माओं की आदर्श प्रतिकृतिया प्रस्तुत की। जापानियो ने बुद्ध की धातविक तथा काष्ठिक मूर्तियो का निर्माण किया। नारा स्थित मन्दिर मे जो विशाल बुद्धमूर्ति है वह ईसा की आठवी शताब्दी में निर्मित हुई थी। यह विश्व के आश्चर्यों में से एक है; केवल अपने विराट् आकार के कारण ही नही; अपितु कलात्मक श्रेष्ठता के कारण। कामाकुरा मे स्थित बुद्ध की विशाल मूर्ति स्नेह धैर्य, करुणा, वेदना, शक्ति, प्राणिमात्र के प्रति प्रेम तथा अमित आनन्द तथा चिरन्तर शान्ति को एक साथ व्यक्त करती है। बोधिसत्त्वो की प्रतिमाएं भी सराहनीय बन पडी हैं, अशिकू (विश्वास), हो-शो (शुद्धाचरण) आदि अप्रतिम प्रेरणादायक हैं। क्वनोन की मूर्तिया, दया की देवी, तथा ध्यानी-बुद्ध की मूर्तिया आदर्श-प्रतिबिंब प्रस्तुत करती हैं। ध्यानी-बुद्ध की मूर्तियो के सबंध में जे० एफ० ब्लेकर का कथन है—"चाहे हम इस बात को ध्यान में लाकर इन्हें देखें कि बुद्ध का लाखो मनुष्यों पर प्रभाव था अथवा केवल इनका दार्शनिक अध्ययन करें, हम इनसे प्रभावित हुए बिना नही रह सकते। ध्यानी-बुद्ध की मूर्तियों मे जिस सौन्दर्य तथा गौरव के दर्शन होते हैं, उसका हमारे मन पर अमिट प्रभाव पडता है।

(3) गान्धार मूर्तिकला—इस कला का जन्म बौद्ध आदर्शों, हैलेनिक टेकनीक, तथा उत्तरी-पश्चिमी भारत की कला-चेतना के संगम-सयोग से हुआ था। इस कला मे शारीरिक तथा नैतिक आचरण का सौन्दर्य समन्वित है। वी० ए० स्मिथ का कथन है—"गान्धार की अनेक उत्तम मूर्तियां भारतीय सन्त मानव की प्रशस्त सचाई से भरी दया आदि भावनाओ को व्यक्त करती हैं। गान्धार मूर्तिकला की सर्वोतम कृतियां अन्त.सौन्दर्य तथा कला-कुशलता का आदर्श प्रतीक हैं। गान्धार कला की सर्वोत्तम सफलता यह है कि इसने चीनी तुर्किस्तान, मगोलिया, चीन, कोरिया, तथा जापान की बौद्ध कला को जन्म दिया। यह हेलास तथा

बुद्धमत का मिलन-मुहूर्त था। जावा में, बोरो-बुदूर की मूर्तिमय बुद्ध जीवनी अवश्मेव अध्ययन करने योग्य है।

(4) आधुनिक मूर्ति कला—यह एक दुखद सत्य है कि अधिकांश ईसाई मूर्तिया जीसस क्राइस्ट की सन्तोष जनक प्रतिकृति प्रस्तुत करने में असफल रही हैं। क्राइस्ट की सर्वोत्तम मूर्ति ऐमियन्स के कैथेड्रल में है। इस मूर्ति का फोटो-चित्र आपको अवश्य प्राप्त करना चाहिए। घोरवाल्ड-मेन की 'क्राइस्ट' मूर्ति भी अच्छी है। माइकेल एंजेलो की 'मूसा' तथा 'डेविड' भी क्रमशः बुद्धिमत्ता तथा पौरुष की सुन्दर प्रतीक हैं।

आधुनिक युग मे श्रम तथा समाजवाद की निदर्शक मूर्तिकला कृतिया सराहनीय हैं, यथा—ब्रूसेल्स में डि ग्रूट तथा कैथियर की कलाकृतियां। कान्स्टेंटिन म्यूनियर की 'बीज वपनकर्ता', 'लोहार'—इत्यादि कला-कृतियां सर्वोपरि हैं।

चित्रकला

इसका क्षेत्र अधिक व्यापक है। इसका विषय प्रकृति एवं मानव है। चित्रकला द्वारा एक कथा कही जा सकती है, एक ऐतिहासिक दृश्य प्रस्तुत किया जा सकता है। यही नही, इसके द्वारा किसी जाति अथवा सम्पूर्ण राष्ट्र की आकांक्षा को अभिव्यक्त किया जा सकता है। मध्ययुगीन धार्मिक चित्र अशिक्षित मनुष्यों के लिए धर्मग्रन्थों का काम देते रहे हैं। चित्रकारों को इतिहास तथा जीवन वृत्तो का चित्रण करना चाहिए। इसके द्वारा वे अतीत को साकार कर सकते हैं। इस प्रकार चित्रकला नैतिक चरित्र शिक्षण में परम सहायक हो सकती है।

दुःख की बात है कि सभी ग्रीक चित्र नष्ट हो चुके हैं, केवल कुछ एक ही टेरा-कोटा की गागरो तथा गुलदस्तों मे बच पाए हैं।

आप चित्रकला के इतिहास का अध्ययन कीजिए। इस संबंध में इन रचनाओ पर विशेष ध्यान दीजिए—

(1) चीनी चित्रकला—चित्रकला मे कुछ देशो ने श्रेष्ठ योगदान किया है। चीन भी उन्हीं मे गिना जाता है। चीनी चित्रकला को बुद्धमत तथा प्रकृति से प्रेरणा प्राप्त हुई। चीनी चित्रकारों ने प्राकृतिक दृश्यो, पुष्पों, पक्षियों, पौधों, कीट-पतगो आदि का चित्रण किया है और चित्रण के उपकरण के रूप मे रेशम अथवा कागज का उपयोग किया है। बुद्धमत ने जीवमात्र के प्रति दयाभावना तथा उदारता का विकास किया। चीनी चित्रकला मे यह पूर्णतः प्रतिबिंबित हुई है। अनेक चित्रों के निर्माता लोहान कहलाते थे। महान् चित्रकार कू काओ-त्ज़ू ने चीनी

ढंग की दया एव उदारता की देवी क्वानयिन का चित्रण किया। यह कलाकार ता'अग वंश का समकालीन था। लि लुंग मियेन ने बुद्ध के तथा प्राकृतिक दृश्यों के अनेक चित्र चित्रित किये। उसके चित्र राफेल के चित्रों को चुनौती देते है। माइफाई भी प्राकृतिक दृश्यो का महान् चितेरा था। सुग वश के शासन काल मे चीन ने प्राकृतिक दृश्य चित्रण मे बहुत उन्नति की थी। इस काल मे प्रकृति की नवीन चित्र-रूप प्रदान किया गया। लू फू चित्रकारों की प्रसिद्ध मंडली का नेता था, जिन्होने बदरी (बेर) वृक्षों के चित्रण मे बहुत ख्याति प्राप्त की थी। सादगी तथा अनावश्यक वस्तुजात के परित्याग की स्वतंत्रता चीनी चित्रण कला की विशिष्टता है। अपनी गहराई, विविधता तथा आकार-सौन्दर्य की दृष्टि से इस कला की तुलना इटालियन कला से की जा सकती है। यह राष्ट्रीय ही नहीं विश्वजनीन आकर्षण रखती है।

(2) इटालियन चित्रकला—इटालियन पुनर्जागरण ने विश्व को अनेक अमर चित्रकला-कृतिया प्रदान की। ईसाई-चित्रण के लिए फ्रा एजेलिको, लियानार्दो दा विंची तथा लुइनी के मिलान नगर स्थित चित्र दर्शनीय है। फ्रा एजेलिको एक संत था। यद्यपि उसकी शैली 'पूर्ण' नही है, तथापि वह सचाई से चित्र चित्रित करने मे सफल हुआ। सोडोमा द्वारा चित्रित 'सेंट बेनेडिक्ट' के चरित्र संबंधी चित्र दर्शनीय हैं। गियोटो के 'सेंट फ्रांसिस' का जीवन चित्रित करने वाले चित्र तथा उसके द्वारा चित्रित गुणो तथा दोषो के चित्र एवं उसके रूपक चित्र उदात्त है। उनके न केवल भाव ही उदात्त है; अपितु रूपाकार भी उदात्त हैं।

अन्य उल्लेखनीय चित्र इस प्रकार है—गुइडो रेनी का 'अरोरा', डोल्सी का सेंट सिसिलिया, बोट्टिसेली का 'वीनस-जन्म' इत्यादि। सोडोमा का 'सेंट सेबास्टियन', राफेल का 'मेडोना आफ सान सिस्टो', माइकेल एजेलो का 'इसाइयाह', एम्ब्रोगियो लोरेंजेटी का 'कम्यून', लियानार्डो दा विंची का 'मोना लिसा' इत्यादि।

एक ऐसा चित्र है, जो प्रत्येक बुद्धिवादी के घर में अवश्य होना चाहिए, वह है राफेल का 'स्कूल आफ एथेंस'। यह ग्रीक दार्शनिकता का गौरव-गान करता है तथा पुनर्जागरण की भावना का प्रतिनिधित्व करता है। राफेल के 'परनासस' में कविता का अभिनन्दन किया गया है। पेरुगिनो द्वारा चित्रित ग्रीक वीरों तथा दार्शनिको के चित्र सराहनीय बन पड़े हैं।

(3) आधुनिक चित्रकला—आधुनिक चित्रकला-कृतियों मे से अग्रलिखित कृतिया सराहनीय हैं—डेविड का 'सुकरात की मृत्यु', होफमैन का 'एक धनी युवक तथा क्राइस्ट', एंडरसन का 'व्यभिचारिणी',

मिल्लाइस का 'ईसा बढ़ई की दूकान पर', मेडक्स फोर्ड का 'काम', तथा 'ईसा अपने शिष्यों के पैर धोते हुए', बीडरमैन के महात्मा बुद्ध के चित्र, फेयरबाख का 'प्लेटो सिंपोज़ियम', रोमने का 'लेडी हैमिल्टन', प्रीमे का 'प्रभात', फास्टो जोनेरो का 'नया टर्की', जेकोबमेरीस क महान् प्राकृतिक दृश्य-चित्र, ब्रेंडाग्वेन के श्रमचित्र, वान गाग का 'फसल काटने वाला', बल्ला का 'सेंट्रीपयुगल फोर्स', कैरियेर का 'मेटरनिटी', जिन्नर का 'दी ग्रेट सूम', पिकासो का 'माता और शिशु'—इत्यादि अत्यंत सराहनीय एवं संग्रहणीय चित्र है।

संगीतकला

संगीत, वास्तव मे एक आश्चर्यजनक कला है। यह हमे व्यक्तित्व की परिधि के बाहर लाकर, हमारे सामाजिक 'स्व' के विशाल क्षेत्र मे प्रविष्ठ कराती है। यह एक सामाजिक एकता-कारक कोमल बन्धन है। मोलियर ने तो यहां तक आशा प्रकट की थी कि संगीत द्वारा एक दिन समस्त विश्वमानवता प्रेम तथा शांति के बन्धन में आबद्ध हो जाएगी। मानव मात्र को संगीत से प्रेम है। अनेक पशु भी संगीत से प्रभावित होते हैं। संगीत प्रकृति की झंकार है। एक चिड़िया से लेकर बीथोवन तक सभी संगीतकार आनन्द तथा जीवन के अग्रदूत हैं। वे हम पर एक ऐसी प्रसन्नता की वर्षा करते है, जिसको हम अन्य किसी भी साधना से प्राप्त नही कर सकते। संगीत द्वारा श्रम की थकान कम होती है, श्रम कम कष्ट-साध्य हो जाता है तथा इससे विविध मानवों में समन्वय का आधान होता है। विपत्ति में संगीत हमे आश्वासन देता है तथा संपत्ति में प्रेरणा प्रदान करता है। हमारे अवकाश के क्षणों को यह सजीव बना देता है तथा हमारे आनन्द-साधनों को सुसंस्कृत करता है। संगीत हमे रूक्षता तथा अशिष्टता से बचाता है। यह हमें उच्च मानसिक तथा नैतिक स्तर पर ले जाता है। संगीत हमारे अंतःकरण में एक ऐसी झंकार उत्पन्न करता है, जिससे जीवन का उत्साह-पूर्ण आनन्द प्राप्त होता है और यह कार्यशक्ति एवं सामर्थ्य की वृद्धि करता है। संगीत हमे इंद्रियजन्य भोगाकांक्षा से उन्मुक्त कराता है तथा उदात्त आनन्द की ओर ले जाता है। यह हमारे स्वभाव में गहरे भावनामय आनन्द का सृजन करता है, जो कभी मन्द अथवा नष्ट नही होता। श्रेष्ठ संगीत से मानव का कभी मन नही ऊबता, भले ही वह उसे लाखों बार सुन चुका हो। संगीत हमें उस भावना का ज्ञान करा देता है, जिसे वाणी व्यक्त नही कर सकती, जिसे बड़े भाषणकर्ता भी प्रकट नही कर सकते, जिसे डिमोस्थेनीज, शेक्सपीयर तथा विक्टर

बीथोवन, ब्राह्मस का अध्ययन करना चाहिए, यदि आप हर्षदायक संगीत चाहते हैं तो वर्डी, मोज़ार्ट तथा वेगनर का अध्ययन करना चाहिए। सनसनीखेज़ संगीत का उपयोग कभी-कभार ही करना चाहिए। इस यंत्रयुग मे हमारे चहु ओर कोलाहल और शोर सुनाई पड़ता है, *अतः उदात्त संगीत* ही हमारे मस्तिष्क तथा शरीर को पोषण एवं शान्तता प्रदान कर सकता है। बाख, बीथोवन, सीमफेंड, वागनर, चेकोवस्की—इत्यादि के महान् संगीत से अमित आनन्द की प्राप्ति होती है।

नृत्यकला, भाषणकला

नृत्यकला को कई लोग 'गौण कला' की संज्ञा देते है। किन्तु मैं इसकी गणना मुख्य कलाओं मे करता हू। इसमे संगीत स्वर-ताल के साथ चेष्टाओ का सुन्दर मिश्रण है। नृत्यकला मानव की प्राचीनतम तथा विश्वजनीन कलाओ मे से एक है। संगीतकला को सीखना सभी के लिए सुगम है। युगल-नृत्य की अपेक्षा मण्डल-नृत्य को अधिक प्रश्रय दिया जाना चाहिए। मण्डल-नृत्य मे कलात्मक आनन्द सर्वोपरि आकर्षण होता है। युगल-नृत्य में शृंगार रस प्रधान होता है। हमारे नृत्य-गृह कामवासना भड़काने के साधन नही होने चाहिए। *यदि युवक-युवतियां कुछ समय एक* साथ व्यतीत करना चाहते हैं, तो यह अधिक अच्छा होगा कि गाव की ओर भ्रमण करने जाए, न कि बन्द नाट्य-गृहो की दूषित वायु में कामवासना भड़काने वाले नृत्यो की घुटन मे अपने व्यक्तित्व को दुर्बल बनाए। कामवासना का उदात्तीकरण श्रेष्ठ कला द्वारा ही हो सकता है। समय से पूर्व कामोत्तेजना हानिकर है। किसी विशेष अवसर पर सामूहिक नृत्य मे कुछ हानि नही है; किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि नृत्यकला केवल शृंगार रस की ही अभिव्यक्ति के लिए नही है, इससे अन्य विविध रसो की अभिव्यक्ति की आयोजना की जानी चाहिए। अन्यथा नृत्य-गृह हमारे चारित्रिक पतन का द्वार बन जाएगे। सीमा से अधिक थकाने वाले नृत्य से शरीर दुर्बल होता है। मन-आह्लाद ही उत्तम नृत्य का चिह्न है; न केवल दर्शकों का अपितु नर्तक का भी।

भाषण कला भी एक महान् कला है। इसका भी मन तथा आत्मा पर उसी प्रकार गहरा प्रभाव पड़ता है, जिस प्रकार कविता तथा संगीत का। यह व्यक्तित्व का संदेश है। प्रजातांत्रिक राज्य मे लोक-प्रिय भाषणकर्ता को राजनैतिक नेता का पद प्राप्त हो जाता है। अतएव यह आवश्यक है कि आप दर्शनशास्त्र, *नैतिक आचार शास्त्र तथा अन्य विषयो में भाषण*-कला का प्रशिक्षण प्राप्त करें तथा इसका मन लगाकर अभ्यास करें। यदि

भाषणकला का व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए उपयोग किया जाए तो यह एक महान् वरदान है। यदि भाषणकला का पथप्रदर्शक आचार-शास्त्र नहीं है तो यह समाज के लिए एक अभिशाप बन जाती है। जनता में भाषण करने की शक्ति का विकास कीजिए। वाद-विवाद समितियों के सदस्य बनिये। डोमेस्थनीज़ की रचना पढ़िए। वेंडेल फिलिप्स के दासप्रथा के विरुद्ध, वर्क के वारेन हेस्टिंग्स के विरुद्ध लेख अवश्य पढ़िए। जौरेस, इंगरसोल, कीरहार्डी, ब्राडला तथा अन्य जागृत वक्ताओं के भाषणों का अध्ययन कीजिए।

कविता

कविता, उदारतापूर्ण शिक्षा का एक अनिवार्य अंग है। आपको कविता की विभिन्न परिभाषाओं में समय नष्ट करने की आवश्यकता नहीं। इसकी परिभाषा में समय नष्ट करने की अपेक्षा इसके अध्ययन करने तथा इसमें आनन्द प्राप्त करने की अधिक आवश्यकता है। कविता से प्यार कीजिए। आप किसी पुष्प की या सूर्यास्त की परिभाषा का कष्ट नहीं करते, आप उनमें आनन्द प्राप्त करते हैं। अनेक विचारकों तथा कवियों ने इसकी परिभाषा करने का कष्ट किया है। इलियट ने इसे 'भावना-भरित सत्य' की संज्ञा दी है। जॉन स्टुअर्ट मिल ने कहा है—"कविता अनुभूतियों से युक्त मानव-विचार हैं।" कोलरिज ने कहा है—"कविता : ऐसी वाक्यरचना है, जो विज्ञान के विपरीत है तथा जिसका उद्देश्य एवं लक्ष्य बौद्धिक आनन्द है।" मैथ्यू आरनाल्ड का मत है—"कविता : जीवन की आलोचना है, जो चरित्र-निर्माण की समर्थक है।" विलियम हेज़लिट ने कहा है—"कविता : कल्पना तथा तीव्र भावनाओं की भाषा है।" शैली के अनुसार—"कविता : उस भाषा-प्रवन्ध की अभिव्यक्ति है, विशेषत. छन्दोवद्ध भाषा की, जिसका सिंहासन मानव-मन की अदृश्य गहराइयों में गुप्त है।"

इस प्रकार की विधिवत् परिभाषाओं के अतिरिक्त, अनेक अतिरंजित प्रशंसात्मक वाक्यावलियों को कविता की प्रशंसा के लिए व्यक्त किया गया है। आपको कविता की दिव्य, अत्युक्तिपूर्ण, भावुकतायुक्त परिभाषाओं में सावधान रहना चाहिए, जो कविता को धरती से उठाकर आकाश पर ले जाती हैं। मैं नोवालिस से कदापि सहमत नहीं हो सकता, जिसने कहा है—"कविता : पूर्ण वास्तविकता है।" मेरी शीलर के साथ भी सहमति नहीं, जिसका कथन है—"कवि ही केवल वास्तविक मानव है तथा सर्वोतम दार्शनिक है, दार्शनिक की छीछालेदार करने वाला भी

वही है।" फिलिप सिडनी का कथन है—"कवि की शक्ति दिव्य महाप्राण है, कविता दर्शनशास्त्र तथा इतिहास से अपरिमित उत्कृष्ट है।" अरस्तू ने भी कविता को इतिहास पर प्रश्रय दिया है।—"कविता विश्व का वर्णन करती है, इतिहास केवल विशिष्ट व्यक्तियों या घटनाओं का।" शैली भावुकता-भरी भाषा में कहता है—"कवि चिरन्तन, अविनश्वर, वह काल, स्थान और सख्या से परे है। कविता एक साथ परिधि भी है और केन्द्रबिन्दु भी।" सुकरात की यह शिक्षा थी कि कवि दैवी प्रेरणा से कविता करते हैं, वे किसी कला या कारीगरी द्वारा रचना नहीं करते; बल्कि एक दिव्य शक्ति द्वारा उसका सृजन हो जाता है। मिल्टन भी अध्यात्मवादी था। उसका मत था कि "कविता के लिए दिव्यात्मा से प्रार्थना करने की आवश्यकता है।" इसी प्रकार कार्लायल, वी० कजिन, इमर्सन, सन्तायाना आदि ने कविता का गुणगान बहुत बढ़ा-चढ़ाकर तथा अस्पष्ट शब्दावली में किया है। इस प्रकार की परिभाषाओं द्वारा कविता का स्वरूप हम पर स्पष्ट नहीं होता। जैसे कुछ अत्युत्साही लोगों ने कविता को 'दिव्य', 'अलौकिक', 'देश-कालातीत', 'आध्यात्मिक', 'सर्वोत्तम' आदि विशेषणों से विभूषित करने का प्रयत्न किया है, वहां इसके विपरीत कुछ लोगों ने कविता की अतिकटु आलोचना की है। प्लेटो ने कवि को उसके परंपरागत ऊंचे सिंहासन से नीचे घसीटकर उसे नीचे गिराने का प्रयत्न किया है। उसने लिखा है—"होमर से लेकर अब तक सभी कवि सद्गुणों की छायाओं के अनुकरण-कर्त्ता हैं···, वे कभी वास्तविक तथ्य को उपलब्ध नहीं कर सकते। अनुकरण एक प्रकार का मनोरंजन मात्र है, वह गंभीर चिन्तन अथवा कार्य नहीं···।" नीत्शे ने कहा है—"कविगण अनेक असत्य कथन करते हैं। उनका ज्ञान बहुत कम होता है और अध्ययन छिछला। वे जान-बूझकर अपने पानी में कीचड़ घोल देते हैं, जिससे वह गहरा प्रतीत होने लगे। कवि दिखावट-बनावट और घमंड का सागर होता है।" मोहम्मद साहब ने कुरान में कहा है—"वे कवि हैं जिनके पीछे पथभ्रष्ट लोग चलते हैं। क्या आप नहीं जानते कि कवि लोग प्रत्येक घाटी में भटकते फिरते है, वे उन बातों को कहते है, जिन्हें वे स्वयं नहीं करते।"

कविता की इस प्रकार की समालोचना अन्यायपूर्ण है। उक्त दोनों अतिवादों के बीच में आपको मध्यम मार्ग अपनाना चाहिए। कविता के अपने प्रयोग एवं दुरुपयोग हैं। इसके लाभ हैं तथा इसकी एक सीमा है। यह एक सामान्य सूझबूझ से भरा बुद्धिवादी दृष्टिकोण है।

कविता अनिवार्यतः लय-ताल युक्त भाषा है जो अपनी संगीतमयता, स्वर-ताल, तथा मधुर ध्वनि द्वारा आनन्द प्रदान करती है। कवियों ने

तुकान्त तथा भिन्न तुकान्त छन्दो का प्रयोग किया है। कुछ कवियो ने स्वच्छन्द छन्दो में भी काव्य की रचना की है। महान् कवि कविता की नवीन शैलियो की उद्भावना करने की सामर्थ्य रखते हैं। गति-यति कविता की आरम्भिक सीढ़ी है। कवि के लिए यह आवश्यक है कि वह प्रकृति तथा मानवता पर प्रकाश डाले, वर्णन करे अथवा उनकी व्याख्या करे, कल्पना कवि का प्रकाश चक्षु है। स्वर-ताल (यति-गति); अर्थात् छन्द, कविता का बाह्य स्वरूप है, किन्तु कल्पना उसकी आत्मा है। कल्पना एक ऐसी शक्ति है जो प्रकृति एवं मानव-प्रकृति के अन्तराल में प्रविष्ट होकर उसके तथ्यो का उद्घाटन करती है। कल्पना शक्ति बुद्धि तत्त्व एवं रागात्मक तत्त्व की मध्यवर्तिनी है। इस शक्ति के द्वारा असबद्ध तथा परस्पर विरुद्ध प्रतीत होने वाले पदार्थों में सामजस्य एव समन्वय का आधार किया जाता है। यह शक्ति सत्य के गुप्त अशो का सूक्ष्म निरीक्षण करती तथा पदार्थ-जगत के पारस्परिक गुप्त सम्बन्ध का अन्वेषण करती है। यह दूरगामिनी सारूप्यताओ को खोजकर अपने सृजन मे सजोती है। कल्पना शक्ति कवि को इस प्रकार की सामर्थ्य प्रदान करती है, जिससे वह बौद्धिक धारणाओ को यथोचित शब्दों में व्यक्त कर सके। किन्तु कल्पना अवश्य ही अनुशासित एव सब अंशों का एकीकरण करने वाली होनी चाहिए। कल्पना शक्ति अवश्यमेव कवि की रचनात्मक प्रतिभा की वश-वर्तिनी होनी चाहिए।

कविता अच्छी भी होती है और बुरी भी। प्रत्येक कविता में उसका भाव और आकार—ये दो बातें होती है। भाव उसका विषय है और आकार उसकी शैली। यदि किसी कविता का भाव अथवा शैली बुरी है तो वह बुरी कविता है। यह संभव है कि कविता-भाव अनूठा हो; किन्तु उसकी शैली अवर हो, तो वह सुकरात की भांति होगी जो गुणी मनुष्य था किन्तु उसकी मुखाकृति कुरूप थी। एक ऐसी कविता भी हो सकती है, जिसकी शैली तो अच्छी हो; किन्तु उसका भाव आपत्तिजनक हो। उसकी तुलना अल्मीबियेड्स से दी जा सकती है, जो अत्यन्त सुन्दर किन्तु दुष्ट था। एक महान् कविता के दोनों अंग—भाव और शैली—उत्तम होने चाहिए।

वस्तुत. बुरी कविता वह है, जो निराशावाद, मिथ्याविश्वास, निर्दयता, कामुकता तथा दासता की समर्थक हो।

12

आचार संस्कृति की अपेक्षाएं

नैतिक संस्कृति में आत्म-संस्कार की सभी शाखाओं का अन्तर्भाव हो जाता है। नैतिक आचारशास्त्र हमें इस बात की शिक्षा देता है कि मनुष्य होने के नाते हमारे संपूर्ण कर्त्तव्य क्या-क्या हैं। नैतिक आचारशास्त्र जीवन का सम्पूर्ण सार है। आपके सभी विचार एवं कार्य नैतिक आचार से संबंध रखते हैं। आपके विचार भले ही नैतिकतापूर्ण अथवा अनैतिकतापूर्ण हों, किन्तु नैतिक आचार संस्कार आपके व्यक्तित्व की गहराइयों में इस प्रकार प्रविष्ट हो जाते हैं कि आपके कर्म चाहे भले हों या बुरे; उनकी जाच-परख नैतिक आचार नियमों की कसौटी पर ही होती है। प्रतिक्षण या तो आप ठीक काम करते हैं या गलत काम करते हैं। खड़े होने में, बैठने में, बोलने मे, काम करने मे, यहा तक कि स्वप्न देखने में भी—या तो आप नैतिक आचार नियमों का पालन करते हैं या उन्हे भंग करते हैं। आपके जीवन की कोई भी चेष्टा नैतिक आचार नियमों से बाहर नही है।

नैतिक आचारशास्त्र को दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है—1. व्यक्तिगत नैतिक आचार नियम, जिनका सम्बन्ध व्यक्ति तथा परिवार से है, 2. राष्ट्र आचार नियम, जिनका सम्बन्ध राज्य तथा उसकी संस्थाओं से है! राष्ट्र आचार नियमों को दो उपविभागों मे विभक्त किया जा सकता है—(1) राजनीति, (2) अर्थव्यवस्था।

नैतिक आचारशास्त्र के दोनों मुख्य विभाग एक-दूसरे से अविभाज्य हैं तथा अन्योन्याश्रित हैं, जिस प्रकार कैंची के दो फलक। राष्ट्र आचार नियमों के साथ-साथ व्यक्तिगत आचार नियमो का उत्थान-पतन होता रहता है और व्यक्तिगत आचार नियमो के आधार पर राष्ट्र आचार नियमो मे परिवर्तन होता रहता है। सच्चरित्र व्यक्ति श्रेष्ठ राजनैतिक तथा आर्थिक संस्थाओं का निर्माण तथा संरक्षण करते रहते हैं तथा श्रेष्ठ संस्थाएं सच्चरित्र व्यक्तियो का निर्माण करती रहती हैं। भ्रष्ट संस्थाएं

श्रेष्ठ एवं सच्चरित्र व्यक्तियों का निर्माण नहीं कर सकतीं तथा भ्रष्टाचारी व्यक्तियों द्वारा श्रेष्ठ संस्थाओं की स्थापना एवं संरक्षा नहीं की जा सकती।

जिस प्रकार उत्तम जलवायु में ही उत्तम स्वास्थ्य संभाव्य है, उसी प्रकार राष्ट्र के श्रेष्ठ वातावरण में ही उत्तम चरित्र वाले व्यक्तियों का होना संभाव्य है। कुछ उपदेष्टाओं ने व्यक्तिगत नैतिक आचरण पर एकांगी बल दिया है और उन्होंने राष्ट्र-आचार नियमों के महत्त्व का मूल्यांकन नहीं किया; किन्तु यह उनका भ्रम है कि भ्रष्ट संस्थाओं में उत्तम आचरणवान् व्यक्तियों का विकास हो सकता है। कोई भी व्यक्ति अपने राजनैतिक तथा आर्थिक वातावरण से अछूता नहीं रह सकता। यूनानी तथा दार्शनिकों ने व्यक्तिगत आचार नियमों का राष्ट्र आचार नियमों से आधारभूत संबंध स्वीकार किया है। उन्होंने व्यक्तिगत के साथ ही सामाजिक आदर्शों की खोज करने का प्रयत्न किया है।

आधुनिक काल में कुछ विचारकों ने एकांगी चिन्तन का आश्रय लिया और उन्होंने राजनैतिक एवं आर्थिक संस्थाओं के आचार नियमों पर बल दिया तथा व्यक्तिगत आचार की सर्वथा उपेक्षा कर दी। उन्होंने मत व्यक्त किया कि श्रेष्ठ संस्थाएं स्वतः ही श्रेष्ठ व्यक्तियों का निर्माण कर लेंगी। उन्होंने व्यक्तिगत आचरण को राष्ट्र आचरण का सह-उत्पादन स्वीकार किया, समान रूप से महत्त्वपूर्ण एवं सहयोगी नहीं। इस प्रकार उन्होंने सरकार के ढांचे में परिवर्तन को ही सर्वसमान लिया तथा व्यक्ति के उचित संस्कार को अनावश्यक समझ लिया। किन्तु तथ्य यह है कि व्यक्तिगत आचार तथा राष्ट्रीय आचार एक साथ गिरते या उठते हैं। पहले प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत आचरण का संस्कार करना होगा, तब वह राष्ट्रीय संस्थाओं के आचरण नियमों का सुधार कर सकेगा। अपने व्यक्तित्व को ऊंचा उठाइए, इसके साथ ही सामाजिक वातावरण में सुधार करना आवश्यक समझिए, क्योंकि आप समाज के एक अंग हैं, न कि सम्पूर्ण समाज।

व्यक्तिगत आचार नियम

व्यक्तिगत नैतिक आचरण के तीन मुख्य नियम हैं—(1) अनुशासन, (2) विकास, (3) उत्सर्ग। अनुशासन का अर्थ है इन्द्रियों की इच्छाओं को संयमित करना, जिस प्रकार एक माली व्यर्थ की घासफूस तथा

झाड़ियों को काट-छांटकर सुन्दर, आवश्यक एवं उपयोगी पौधों की रक्षा करता है, उसी प्रकार व्यक्ति को अपनी व्यर्थ, अनावश्यक तथा पतनकारी इच्छाओं को दूर करके जीवनोपयोगी, व्यक्तित्व विकासकारिणी तथा उत्थान करने वाली इच्छाओं को आगे बढ़ाना होता है। विकास का अर्थ है बढना—शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक उन्नति करना। इसका अभिप्राय है व्यक्तित्व की सपन्नता एवं सर्वोन्च विस्तार। जिस प्रकार एक माली उत्तम पौधो को खाद, धूप, वायु तथा जल द्वारा पुष्ट करता है, उसी प्रकार व्यक्ति को ज्ञान, कर्म तथा अभ्यास द्वारा अपने व्यक्तित्व का विकास करना पडता है। उत्सर्ग का अर्थ है, अपने अनुशासित तथा विकसित व्यक्तित्व का समाज, राष्ट्र तथा विश्व मानवता के लिए समर्पण।

आचार नियमों के सिद्धांत

आचार नियमो के सिद्धातो के वाद-विवाद में आपको अधिक समय नष्ट नही करना चाहिए। आचार नियमों में व्यवहार के उपरान्त ही सिद्धान्त सामने आते हैं। जीवन में सद्‌गुण पहले धारण किये गए तथा उन पर विचारको ने बाद में विचार किया और सिद्धान्त-सूत्रों की रचना की। महाकवि गेटे ने ठीक कहा है—

"मित्रवर ! सभी सिद्धान्त शुष्क शब्द मात्र हैं।"

हरियाली तो जीवन के सुनहरे वृक्ष पर ही दिखाई देगी। मानव जाति के इतिहास मे सर्वदा व्यवहार पहले होता है और सिद्धान्त-सूत्रो की रचना बाद में होती है। स्त्रियों ने सदाचार नियमों का पालन बहुत पहले आरम्भ कर दिया था और इसके संबंध मे नियमों की रचना प्लेटो, अरस्तू तथा कपिल ने बाद में की।

आप विभिन्न आचार-संहिताओं का अध्ययन अवश्य करें। स्टोइक्स, क्रिश्चियन, कांट, प्लेटो, प्लोटिनस, कडवर्थ, मैक्स स्टर्नर, बेंथम, मिल, कोम्टे, नेत्शे, शोपनहार, बौद्ध विचारक, स्पेंसर, हक्सले, बर्गसन, बटलर, हचेसन, होब्स, सिडविक, और राशडेल—इत्यादि के विचारो का अध्ययन आप अवश्य कीजिए। किन्तु इतना सर्वदा ध्यान में रहे कि व्यक्तिगत चरित्र-निर्माण एव संस्कार में प्रबल आन्तरिक प्रेरणा का जो स्थान है, वह उपदेश, तर्क-वितर्क अथवा आचारशास्त्रो के अध्ययन का नही।

सर्वोत्तम आचार-नियम

सर्वोत्तम आचार-नियम क्या हैं ? इस विषय में आध्यात्मिक

विचारकों का मत है—"ईश्वर की इच्छा पूर्ण करो।" किन्तु प्रश्न यह है कि ईश्वरेच्छा क्या है, इसका ज्ञान कैसे हो? सभी ग्रन्थ मनुष्यकृत हैं। तब ईश्वरेच्छा का निर्धारण किस प्रकार किया जा सकता है?

हिन्दुओं, क्रिश्चियनों तथा प्लेटोनिस्टों ने ही आचार नियम सम्बन्धी सम्पूर्ण सिद्धान्तों का विकास किया है। मानव व्यक्तित्व के उन्होंने दो भाग किये हैं—शरीर तथा मन विनाशी हैं तथा आत्मा अविनाशी है। उक्त दार्शनिकों ने हमें शरीर तथा मन का दमन करने तथा आत्मा को विकसित या व्यक्त करने के लिए कहा है। शरीर को आत्मा का 'बन्दी-गृह' कहा गया है। मानव का चरम उद्देश्य या आदर्श 'पदार्थों से आत्मा की मुक्ति' स्वीकार किया गया है।

इस सिद्धान्त में शरीर को, जो कि व्यक्तित्व का आधार है, निन्दनीय बताया गया है। मन जो कि व्यक्तित्व का प्रकाश है, उसकी उपेक्षा की गई है। समाज जो कि व्यक्तित्व का पालना है, उसकी अवहेलना की गई है। और केवल आत्मा को ही मानव का 'सार' कहा गया है। इसीलिए घोर तपस्या, मौन, ध्यान, तथा समाज से विच्छेद को ही सर्वोत्तम कर्त्तव्य कहा गया है। बौद्धों ने भी, यद्यपि आत्मा का अस्तित्व स्वीकार नहीं किया, किन्तु मानव जीवन का चरम लक्ष्य 'निर्वाण' ही माना है और इसे प्राप्त करने का सर्वोत्तम उपाय ब्रह्मचारी भिक्षु बनकर ध्यान लगाना ही बताया है। शारीरिक एवं बौद्धिक विकास की उन्होंने सर्वथा उपेक्षा कर दी।

उनका मत है कि पूर्ण मनुष्य को कम खाना चाहिए, कभी-कभी उपवास रखना चाहिए, उसे विवाह नहीं करना चाहिए, सन्तानोत्पादन नहीं करना चाहिए, उसे विज्ञान, शिक्षा, कला की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए, समाज-सेवा नहीं करनी चाहिए, राजनैतिक कार्यों में भाग नहीं लेना चाहिए।

इस प्रकार के शिक्षक वस्तुतः मानव व्यक्तित्व का नाश ही करते हैं। इनके फैलाए भ्रमों के कारण ही अस्वस्थ, दुर्बल 'सन्तों' को 'पूर्ण मानव' मानकर उनकी पूजा चल पड़ी। पोषणहीन भोजन से दुर्बल शरीर बनना, आजीवन ब्रह्मचर्य धारण किये रहना, भारतीय योगी, मुस्लिम सूफी या क्रिश्चियन रहस्यवादी बनना 'पूर्ण मानव' बनना नहीं है, ऐसा हमारा दृढ़ मत है। भ्रान्त विचारों के कारण ही धार्मिक पागल, शरीर को शूलों का दुःख देने वाले फकीर, भ्रष्ट बौद्ध भिक्षु तथा रूसी फेनेटिक्स उत्पन्न हुए। इस प्रकार की पवित्रता वास्तव में जीवन-नाश ही है।

अनेक विचारकों ने 'स्वर्ग की प्राप्ति' ही मानव का सर्वोत्तम कर्त्तव्य

स्वीकार किया है। इस विचार से 'स्वर्ग', 'जन्नत' और 'हैवन' प्रधान हो गए। इस असंस्कृत विचार के कारण सांसारिक जीवन की उपेक्षा होने लगी। मजे की बात यह है कि परलोक में अप्सराओं, हूरों, और परियों की कल्पना की गई। इस जीवन में इन्द्रिय-निग्रह और परलोक में सुन्दरियां!

सच तो यह है कि 'साल्वेशन', 'निर्वाण', 'मुक्ति' की कल्पना ने मानव का हित नहीं, बल्कि अहित ही अधिक किया है। वास्तव में, *मानव-जीवन का आदर्श है—व्यक्तित्व का चहुंमुखी विकास—शारीरिक* विकास, बौद्धिक विकास, सौन्दर्य विकास तथा नैतिक विकास। पूर्ण विकास, कार्य की स्वतन्त्रता और प्रसन्नता—ये मानव विकास के फल हैं। सत्य, सत्कर्म, सौन्दर्य तथा स्वास्थ्य—ये चार ही नैतिक आचार के बहुमूल्य सूत्र हैं।

अनुकरणीय आचरण

कोई भी नारी या नर अब तक 'पूर्ण जीवन' नहीं जी सका। अतएव किसी भी एक व्यक्ति का अनुकरण करना उसकी पूजा करना है। भूल करना मानव के लिए स्वाभाविक है। कोई भी धर्मोपदेष्टा या पथ-प्रदर्शक सर्वथा निर्दोष या त्रुटिहीन नहीं था। जीसस क्राइस्ट कुछ अभिमानी, चिड़चिड़ा तथा अस्थिरचित्त था। क्राइस्ट तथा बुद्ध ने ब्रह्मचर्य का उपदेश दिया; *किन्तु ब्रह्मचारी का व्यक्तित्व पूर्ण विकसित नहीं होता।* क्राइस्ट, बुद्ध, महावीर और सुकरात विज्ञान की ओर ध्यान नहीं दे सके और प्रकृति के अध्ययन का उन्होंने कोई प्रयास नहीं किया। क्राइस्ट तथा बुद्ध में राजनैतिक बुद्धिमत्ता का अभाव था। उन्होंने यह समझने का प्रयत्न नहीं किया कि राजनैतिक अत्याचार में वैयक्तिक आचरण का विकास नहीं हो सकता। इससे यह स्पष्ट है कि कोई भी पथप्रदर्शक *'पूर्ण' नहीं हुआ।* सभी धर्मप्रवर्तकों से भूलें हुई हैं, सभी से अपराध और पाप हुए हैं, सभी ने आवश्यक कर्त्तव्यों की उपेक्षा की है; इस प्रकार वे 'पूर्णता' को प्राप्त करने में असमर्थ रहे हैं। उनके जीवन 'महान् पूर्ण जीवन' के अंश-मात्र रहे हैं—'पूर्ण' नहीं। अतः प्रत्येक उपदेष्टा से गुण ग्रहण कीजिए; किन्तु उसके सम्पूर्ण कार्यों या जीवन का अनुकरण करने की भूल हास्यास्पद होगी। आंख मूंदकर किसी पथ-प्रदर्शक का गुलाम *बनना बुद्धिवाद के विरुद्ध है। जिस प्रकार पथ-प्रदर्शकों ने जो कुछ किया* उसे आंख मूंदकर नहीं करना चाहिए, उसी प्रकार उन्होंने जो कुछ नहीं किया उसे न करना भी भूल होगी। ईसाई साधु विज्ञान का अध्ययन

नही करते थे। तो क्या हम भी विज्ञान का अध्ययन करना छोड़ दें? क्राइस्ट ने कभी गणित नही पढ़ा था। तो क्या गणित नही पढ़ना चाहिए? पवित्र मुसलमान किसी चित्र या मूर्ति को नही खरीदते थे। तो क्या हमें भी चित्रकला तथा मूर्तिकला से घृणा करनी चाहिए? तेरह सौ वर्ष पूर्व पैगम्बर मुहम्मद ने कलाओं की निन्दा की थी। तो क्या हम सभी कलाओं को त्याज्य समझें? अन्धानुकरण के कारण ही आज भी बौद्ध लोग पुरानी मूर्तियों को पूजते हैं, ईसाई विवाह-विच्छेद का विरोध करते हैं, मुस..मान बहुविवाह करते हैं!

वस्तुतः कोई भी धर्मोपदेष्टा या पथ-प्रदर्शक 'सम्पूर्ण सत्य' का दर्शन या उपदेश नही कर सका। इस प्रकार का ज्ञान या ऐसी बुद्धिमता कोई नहीं है, जिसे मानव के लिए 'अन्तिम' स्वीकार कर लिया जाए। आज के ज्ञान मे कल ही परिवर्तन हो सकता है। आचार सम्बन्धी नियम भी परिवर्तनशील है। मानवता की भावना सबसे पवित्र है, उसकी रक्षा के लिए मनुष्य सदा सोचता-विचारता, नियम बनाता, नियमो मे परिवर्तन करता आया है और सदा ही ऐसा करता रहेगा। मानव के आचरण सम्बन्धी आदर्श ऐसे नही कि उन्हें मिस्र की ममियों की भांति सुरक्षित रखा जाए। जीवन-वृत्त नियमों में परिवर्तन *अनिवार्य* है। हमें सदा पीछे की ओर ही नही देखते रहना चाहिए। यदि हम पीछे के प्रकाश स्तम्भ की ओर ही निरन्तर देखते रहेंगे, तो सम्भव है कि हम सामने के खंभे या पेड़ से अपना सिर फोड़ लें।

यह भी स्पष्ट है कि सर्वोत्तम तथा सर्वाधिक बुद्धिमान उपदेष्टा भी, सब प्रकार के गुणो का आदर्श नही हो सकता। कारण, अपने छोटे से जीवन में वह सभी गुणो के प्रदर्शन का अवसर नही प्राप्त कर सकता। जीसस, सुकरात, मानी तथा बैब (Bab) हमे साहस का उपदेश देते है, ऐसे साहस का जो शहादत को गले लगा सके, किन्तु महात्मा बुद्ध हमें इसका उपदेश कैसे दे सकते है? बुद्ध को अपने मत का प्रचार सहनशील लोगों में करना पड़ा। न उसे कभी बन्दी बनाया गया, न मृत्युदण्ड दिया गया। जीसस क्राइस्ट की भांति उसे दया का प्रदर्शन करने का भी अवसर नही मिला, जो दया ईसा ने अपने को सूली पर चढ़ाने वालों के प्रति प्रदर्शित की। क्राइस्ट यह सिद्ध नही कर सकता था कि उसका प्रेम मानवजाति के प्रति पत्नी तथा पुत्र की अपेक्षा, अधिक था; क्योंकि उसका तो परिवार ही न था, इस कठोर परीक्षा में से बुद्ध को गुजरना पड़ा था। बुद्ध से आप यह सीख सकते है कि मानव जाति के महत्तर उपकार के लिए आप अपनी पत्नी का त्याग कर सकते हैं; किन्तु सुकरात

से आप यह सीख सकते हैं कि पत्नी के साथ कैसे निर्वाह किया जाए। सुकरात के लिए ऐथेंस के प्रजातंत्र मे नागरिक सद्गुणों पर आचरण कर सकता था, किन्तु क्राइस्ट तथा बैंथ को इस प्रकार के नागरिकता-अधिकार ही प्राप्त न थे।

इस प्रकार, यदि किसी उपदेष्टा में कोई जन्मजात गुण विद्यमान भी हों, तो भी वह उन सब पर अपने जीवन में आचरण नही कर सकता; क्योंकि सभी परिस्थितिया उसके वश मे नही होती। अतएव किसी पुरुष अथवा स्त्री में सम्पूर्ण सद्गुणो की कल्पना या आरोप करना असगत है। यहां तक कि सूर्य, चांद में भी धब्बे हैं।

नैतिक चरित्र-शिक्षण की परम्परागत विधि को मैं अस्वीकार करता हूं, जिसमें किसी एक रूढि तथा एक जीवन-चरित रूप औषधि की मात्रा पिलाई जाती है। मैं मानता हूं कि नैतिक शिक्षण के लिए जीवन-चरितों का अध्ययन करना उपयोगी है; किन्तु मैं सब प्रकार के अन्धविश्वासों, मिथ्याविश्वासो, रूढि-रिवाजों का अन्धानुकरण करने के विरुद्ध हूं।

(1) चरित्र का विकास सामाजिक सत्संग मे हो सकता है। यदि आप सद्गुणों को सीखना चाहते है, तो आपको अन्य पुरुषो तथा स्त्रियों से सजीव सम्पर्क बनाये रखना पड़ेगा। आपको अवश्य ही किसी सभा-सोसाइटी का सदस्य बनना पड़ेगा, जो आपके आदर्श की पूर्ति के हेतु कार्य कर रही हो। एक अकेले—अलग-थलग व्यक्ति के रूप में, संघर्ष करते हुए आप बहुत अधिक प्रगति नही कर सकते। किसी दल या मण्डली में सम्मिलित हो जाइए, जो आपके उद्देश्यों के अनुरूप हो, जिस प्रकार अरब लोग काफिला बनाकर रेगिस्तान मे यात्रा करते हैं।

आधुनिक काल में ऑगस्त कोम्टे, एफ० एडलर, तथा कार्लमार्क्स ने इस प्रकार की सभाओं की स्थापना की थी तथा अपने समान विचारों वाले स्त्री पुरुषों को सदस्य बनाकर अपने मत का प्रसार किया।

(2) चरित्र पर जितना गहरा प्रभाव जीवित उपदेष्टा का पड़ता है, उतना मृत पथप्रदर्शक की जीवनी से नहीं पड़ता। जिस प्रकार जीवन से जीवन उत्पन्न होता है, उसी प्रकार चरित्र से चरित्र उत्पन्न होता है। सद्गुणों का संचार एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य को किया जा सकता है। नैतिक सदाचार की शिक्षा स्वयं आचरण करके तथा सुझाव देकर ही दी जा सकती है बलपूर्वक अथवा उपदेश देकर नहीं। अपने नगर या गांव में जो कोई भी धर्मोपदेष्टा, समाजसेवी, नागरिकता-प्रेमी, सदाचारी व्यक्ति हो उसके सम्पर्क में आइए। आप उसकी बातें ध्यान से सुनिए। उसके चरित्र पर दृष्टिपात कीजिए। परन्तु उसका अन्धानुकरण मत कीजिए।

आप उसके आरम्भिक अनुशासन का पालन कीजिए किन्तु अपनी बुद्धि को उसका दास मत बनाइए। अरस्तू प्लेटो का सम्मानित शिष्य था; किन्तु वह उसका ग्रामोफ़ोन नहीं था। आपका भी अपने पथप्रदर्शक से यही सम्बन्ध होना चाहिए। आप उसका हृदय से सम्मान कीजिए; किंतु केवल उसके सुचरितों की उपासना ही कीजिए। आपकी स्वतन्त्र बुद्धि आपको बता देगी कि उसके ग्रहण योग्य चरित तथा त्याज्य चरित कौन-कौन से हैं।

(3) जीवित पथप्रदर्शक के चरणों में यदि आप श्रद्धावनत होकर कुछ सीखना चाहेंगे, तो अवश्य सीख सकेंगे; क्योंकि पथप्रदर्शक वही हो सकता है, जिसने अपने गुरु से कुछ सीखा हो। आपका जीवित पथप्रदर्शक अपने गुरु से आपका अदृश्य सम्बन्ध स्थापित कर देगा और इस प्रकार आप अत्यन्त प्राचीन गुरु से अपना सम्बन्ध जोड़कर परम्परागत सद्गुणों का सार ग्रहण करने में समर्थ हो सकेंगे। देश, जाति, काल तथा मत-मतान्तर का भेदभाव त्यागकर सभी वीरों तथा विचारकों, सन्तों और उपदेष्टाओं, मतप्रवर्तकों और पथप्रदर्शकों की जीवनियां पढ़िए। उनके गुणों का चयन करना आपकी स्वतन्त्र बुद्धि का काम है।

ग्रीक फिलासफी · नैतिक आचार के इतिहास में यह आन्दोलन सर्वाधिक गौरवशाली है। इसके अध्ययन से आपको बुद्धिसंगत विचार तथा विमर्श की आवश्यकता का अनुभव होगा। इसमें सर्वतोमुखी वैयक्तिक प्रगति, नागरिक स्वतन्त्रता, तर्कसंगत नैतिक सिद्धान्त, आर्थिक सुधार, व्यायाम तथा क्रीडा संस्कृति, वैज्ञानिक गवेषणा, नशाबन्दी, आत्म-संयम, और आशावाद पर विचार मिलेंगे। ग्रीक फिलासफी में प्रमुख सद्गुणों तथा बुद्धिमत्ता का विस्तार से विचार-विमर्श प्राप्त होगा। इस आन्दोलन से निम्नलिखित विद्वानों के श्रेष्ठ ग्रन्थ हमें प्राप्त हुए हैं—अरस्तू, प्लेटो, मार्कस आरेलियस, लुक्रीशियस, सिसरो, बोईथियस इत्यादि। अरस्तूवाद को आधुनिक बुद्धिवाद का प्राचीन रूप कहा जा सकता है।

आरम्भिक क्रिश्चियन : जीसस क्राइस्ट, सेंट पाल, सेंट जेम्स, सेंट जॉन, पोलिकार्प, इग्नेशियस, इरेनियस, जस्टिन, मोन्टेनस, मार्सिअन, ओरिगेन, क्लीमेंट इत्यादि की जीवनियों का अध्ययन कीजिए। इनसे आपको वर्तमान जीवन के लिए अनेक प्रकार के सुझाव मिलेंगे।

सेंट बेनेडिक्ट : मध्य ईसाई युग के सेंट बेनेडिक्ट, ऑगस्टाइन, बोनीफेस, अल्कर प्रभृति ने हिंसा तथा अज्ञान के अध्ययन के विरुद्ध जो प्रचार किया, वह अध्ययन करने का आवश्यक विषय है।

अरब फलसफा और सूफी सन्त : इस्लाम तथा हैलेनिक आन्दोलन के के संयोग ने इस्लाम में महान् पुनर्जागरण को जन्म दिया इसका प्रवर्तन अल-किन्दी से हुआ। अल-फराबी, इब्न-सिना, इब्न-तुफैल, इब्न-रशीद, सन्तनी रबिया, शम्स-ए-तबरेज़ की जीवनियों तथा विचारों का अध्ययन कीजिए।

भारत में सिख आन्दोलन : इस धार्मिक आन्दोलन ने मुगल अत्याचार को समाप्त करके, समाज के नैतिक तथा राजनैतिक पुनर्गठन के उद्देश्य से बड़ा काम किया। इस आन्दोलन ने ऐसे नेताओं को जन्म दिया, जो नैतिक आचार तथा राजनीति दोनो मे विख्यात हुए। इस आन्दोलन ने त्याग तथा बलिदान के अद्भुत उदाहरण उपस्थित किए। गुरु नानक, अर्जुनदेव, तेग बहादुर, गोविन्दसिंह तथा बन्दा बहादुर आदि के जीवन-चरित पठनीय हैं।

आधुनिक प्रजातन्त्र, समाजवाद, बुद्धिवाद : आपको इटालियन पुनर्जागरण के प्रमुख प्रवर्तकों की जीवनियो तथा उपलब्धियों का अध्ययन करना चाहिए। इनमे पेत्रार्क, [illegible] निक्कोली औरिस्पा.

[illegible]

करनी चाहिए। इनसे आपको प्रेरणा प्राप्त होगी। आधुनिक दर्शन तथा विज्ञान ने हमे अनेक वास्तविक बुद्धिमान प्रदान किए, जिनमें स्पिनोज़ा, स्पेंसर, कोम्टे, कैवेन्डिश प्रभृति प्रमुख हैं। इनमें से कोम्टे ने बुद्धिवाद की व्यावहारिक दार्शनिकता प्रकट की है। फ्रेंच क्रान्ति तथा प्रजातन्त्र एवं [illegible] विषय में मारट, [illegible] ब्लांकुई, लुई-मिचेल, कार्लमार्क्स, बकुनिन, क्रोपाटकिन इत्यादि की रचनाएं अवश्य पढनी चाहिए। कार्लमार्क्स, क्रोपाटकिन तथा लुई मिचेल की जीवनियां आप अवश्यमेव पढिए, जिन्होंने व्यक्तिगत महत्ता का राजनैतिक बुद्धिमत्ता से अभूतपूर्व संयोग किया।

(4) मित्रता—सभी सद्गुण समाज का उत्पादन हैं। आप अपने जैसे मतवाले लोगो की किसी सभा के सदस्य बन जाइए। आप अपने दो-तीन घनिष्ठ मित्र ऐसे बनाइए, इस संगति से परस्पर वार्तालाप, विचार-विमर्श तथा विपत्ति मे सहायता का लाभ प्राप्त होगा। सच्चे मित्रों की पारस्परिक प्रेरणा से व्यक्तित्व के विकास में भारी सहायता प्राप्त होती है।

(5) चिन्तन—प्रतिदिन चिन्तन अवश्य करना चाहिए। इससे

आपको नैतिक बल की प्राप्ति होगी। प्रार्थना अथवा ईश्वर की चाटुकारिता की अपेक्षा प्रात: सायं चिन्तन करना चाहिए। आप इन विषय पर चिन्तन कर सकते है—

(क) आत्मसंस्कार के चार अग—शारीरिक, बौद्धिक, सौन्दर्यात्मक तथा नैतिक।

(ख) राजनैतिक तथा आर्थिक सगठन के चार सिद्धान्त—प्रजातन्त्र, स्वतन्त्रता, समानता तथा भ्रातृभाव। चिन्तन कीजिए कि आप इनकी विजय के लिए अधिक से अधिक क्या कर सकते है।

(ग) उपर्युक्त आठ महान् आन्दोलन। उनसे सम्बद्ध महान् पुरुषों की जीवनिया।

(घ) निर्धनो, बीमारो, दुखियों, बेकारों, निर्वासितो तथा पीड़ितो को अपनी सहानुभूति प्रेषित कीजिए।

(ङ) उस समय जो सुखी है, जिन स्त्रियों के घर बालक हुए हैं, जिनकी सगाई हो गई है, जिनका विवाह हो गया है, जिन युवकों को योग्यतानुकूल व्यवसाय मिल गया है, जो किसान फसल काट रहे है, जो मित्र सहभोज मे सम्मिलित हो रहे है, उनका अभिनन्दन कीजिए।

(च) मानव जाति की एकता—अपने कमरे में एक ग्लोब रखिए। अपने विभिन्न मित्रों के चित्र रखिए, जो विभिन्न जातियो के तथा देशो के निवासी हो। ग्लोब तथा ये चित्र आप मे विश्वमानवता को स्फुरित करेंगे।

(छ) इन सूक्तियो को लिखिए अथवा छपवा लीजिए—

सुकरात—जिस जीवन को परीक्षा मे नही पड़ना पड़ा, वह जीने योग्य नही।

अरस्तू—केवल जीना ही नही, भलीभांति जीना।

बुद्ध—प्रेम से घृणा दूर हो जाती है।

क्राइस्ट—एक-दूसरे से प्रेम कीजिए।

सेंट पाल—प्रेम कभी व्यर्थ नही जाता।

गेटे—आधा जीवन जीने की आदत छोड़िए—सम्पूर्ण, सद्गुणपूर्ण तथा सुन्दर जीवन व्यतीत कीजिए।

शेक्सपीयर—अपने प्रति सच्चे बनो।

रोशे—मानव स्वतन्त्र उत्पन्न हुआ किन्तु सर्वत्र बन्धनो में बधा है।

मार्क्स—संसार के मजदूरो, एक हो जाओ।

मेजिनी—बलिदान कभी व्यर्थ नहीं जाता।

मुहम्मद—आप इतना धैर्य रखिए, जिससे आपकी शोभा बढ़े।

गुण तथा दोष

गुण

गम्भीरता तथा नि.स्वार्थ भावना —ये दो मुख्य गुण हैं, तथा अन्य गुणों का अन्तर्भाव इन्हीं दो में हो जाता है।

1. गम्भीरता विकास की ओर ले जाती है। इस गुण को धारण कर के मनुष्य मौज-मजा के मार्ग की अपेक्षा रचनात्मक मार्ग को वरण करता है। वह आराम और सुख की लुभावनी मूर्ति पर मुग्ध नहीं होता। इसके विपरीत जो व्यक्ति अगम्भीर है, वह अपने अत्यधिक समय तथा शक्ति को मौज-मजे के लिए गपशप में, बैठक की खेलों में, उपन्यास पढ़ने में, घटिया फिल्मों में, सिगरेट पीने में, विपरीत लिङ्गी को फुसलाने में, कामोत्तेजना में, खाने-पीने में, सोने में, अनियमित आदतों में, तथा जेब कतरने या गुण्डागर्दी में खर्च करता है। गंभीरता व्यक्तित्व के विकास का कारण है।

गम्भीरता दो बातों से प्रकट होती है—सादगी से तथा सचेतनता से। सचेतनता से व्यक्ति में कर्तव्य की तीव्र भावना जागृत रहती है। वह ईमानदारी से जीवनयापन तथा कार्य करता है।

2. नि.स्वार्थ भावना या समाज भावना—यह भावना अनेक गुणों के रूप में प्रकट होती है। जैसे—परोपकार (दूसरों की सहायता), धैर्य, प्रशंसा, उचित वाणी, नम्रता, न्यायप्रियता, पशु-पक्षियों के प्रति दयाभाव।

दोष

मुख्य दोष ये हैं—असत्य, अतिलोभ, चोरी, जुआ, हत्या आदि। प्रत्येक नर-नारी को इन दोषों से बचना चाहिए।

जन-सेवा

प्रत्येक नर-नारी को अपने समय तथा शक्ति का कुछ भाग जन-सेवा के कार्यों में लगाना चाहिए। यह एक सामाजिक ऋण है, जिसे अवश्य चुकाना चाहिए। जो अभागे बहन-भाई प्रकृति अथवा समाज के द्वारा किन्हीं सुविधाओं अथवा प्राधिकारों से वंचित हैं, उनकी सेवा करना हमारा

कर्त्तव्य है। केवल धन दान करना ही पर्याप्त नही, आपको जन-सेवा के लिए अपना समय देकर काम भी करना चाहिए। नैतिक प्रगति के लिए जन-सेवा पहला कदम है। इससे आपमे नि.स्वार्थ भावना का उदय होगा और नि.स्वार्थ भावना सभी सद्‌गुणो का मूल है।

आप चाहे कहीं भी रहें, आप अपने आस-पास इन दयनीय व्यक्तियों को सरलता से ढूंढ सकते है। जन-सेवा के कार्यो से बचने के लिए किसी भी व्यक्ति को बहाना नही बनाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के लिए जन-सेवा के अनेक अवसर होते हैं। बुरे कानून तथा रिवाज उनके बीच में बाधा नही बनने चाहिए, जो जन-सेवा करना चाहते है। आवश्यकता पड़ने पर उन कानूनों तथा रिवाजो को बदल देना चाहिए। सीधे, व्यक्तिगत रूप में जन-सेवा करने वाले के मार्ग में श्रेणी, राज्य, राष्ट्र तथा संप्रदाय के भेदभाव बाधा नही पहुंचा सकते। राजतन्त्र हो या गणतन्त्र, सामन्तवाद हो या पूंजीवाद — शासन का कोई भी ढांचा हो, जन-सेवा के कार्यों मे बाधा नहीं दे सकता, यदि जन-सेवी लोगों का सकल्प दृढ हो। जन-सेवा की भावना किसी बाधा-बन्धन को स्वीकार नही करती। उसके लिए एक ही बन्धन है—मानवता का कोमल बन्धन, प्रेम। जन-सेवी केवल एक ही आवाज को सुनता है—दुखी मानवों की पुकार को।

(1) जन-सेवा सदा ही आंशिक तथा स्थानीय प्रभाव रखती है; क्योंकि बड़े परिवर्तन तो कानून को बदलने से ही हुआ करते है। उत्तम राजनैतिक तथा आर्थिक सस्थाएं ही बड़े परिमाण पर मानवो के कष्टों को दूर करने में समर्थ हो सकती है; किन्तु व्यक्तिगत जन-सेवा का अपना मूल्य है। यह कानूनी परिवर्तनों की प्रतीक्षा न करके फौरन सहायता पहुंचाती है। संभव है, विज्ञान तथा राजनीति एक दिन अन्धता तथा बधिरता की समाप्ति कर दें; किन्तु इस समय तो हमारा यही कर्त्तव्य है कि हम अन्धों, बहरों, लंगड़ो, अंगहीनों की यथाशक्ति सेवा करें। प्रेम की भावना प्रतीक्षा नही करती। वह तो 'आज ही' और 'अभी' काम करने की प्रेरणा देती है। अत: जब तक संसार 'पूर्ण' नही बन जाता तब तक की प्रतीक्षा मत कीजिए, कल तो अभी स्वप्न है, आज ही अपने लिए जन सेवा के काम चुन लीजिए और बड़े प्रेम से उसमें लग जाइए।

जन-सेवा के बिना कोई जीवन 'पूर्ण' नहीं कहला सकता। जन-सेवा एक पवित्र कर्त्तव्य है। आप यदि एक कवि हैं, एक भाषणकर्ता हैं, एक पत्रकार हैं और आप विभिन्न 'उद्देश्यों' तथा 'आन्दोलनों' के लिए कार्य कर रहे हैं; किन्तु जन-सेवा का कार्य आप सबका सांझा कार्य है; अत: जन-सेवा के कार्यों मे दलगत भावना नही आने देनी चाहिए। यदि आप धनी

हैं, तो भूखे को देखकर पास मे न गुजर जाइए, यह मत कहिए कि आप अनेक हस्पतालो तथा धर्मार्थ संस्थाओं को दान देते हैं; अतः आपका उस भूखे के प्रति कोई कर्त्तव्य नही। एक कवि को यह कहने का अवसर नही आना चाहिए कि मैं विश्वमानवता पर कविता की रचना कर रहा हू, अत एक रोगी की सेवा कैसे करूं ?

(2) रोगी-परिचर्या—सभी मनुष्य कभी न कभी रुग्ण हो ही जाते हैं। हम अपने ही अनुभव से जानते है कि रोगी को सहायता तथा आराम की आवश्यकता होती है। डाक्टर को, सम्बन्धी को, मित्र को या नर्स को टेलीफोन करने के लिए किसी आदमी की सहायता की आवश्यकता पड जाती है। हमे ऐसे समय स्वय इस सेवा को अपनाना चाहिए। रोगी को दवा देना, उसका तापमान देखना, उसे दूध आदि देना, उसके मलमूत्र का प्रबन्ध करना, उसके साथ सहानुभूतिपूर्ण बातचीत करना, उसे ढाढस बधाना आदि पचासों प्रकार के छोटे-मोटे कार्य करके हम उसकी परिचर्या कर सकते हैं। प्रेम के द्वारा ही बहुत से रोगियों का आधा रोग दूर किया जा सकता है।

(3) निर्धनों की सेवा—वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में अनेक नर-नारी तथा बालक-बालिका जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति से वंचित हैं। भूख, सर्दी, गर्मी, वस्त्र, दवाई, शिक्षा और नेक सलाह द्वारा हम उनकी यथाशक्ति सेवा-सहायता कर सकते हैं। निर्धनता एक भयंकर विपत्ति है, जो हर जगह दिखाई दे जाती है। आप व्यक्तिगत दया-भावना को ही सर्वत्र आश्रय दीजिए। बड़े-बड़े सिद्धान्तो का बहाना बनाकर निर्धनों की सेवा न करना स्वार्थपरता और कायरता है।

(4) सस्थाओं की सहायता—जन-सेवा करने वाली संस्थाओ की दिल खोलकर सहायता कीजिए। हस्पताल, शिक्षा सस्थाएं, विधवा आश्रम, अनाथाश्रम, नारी-निकेतन, समाज-कल्याण सस्थाएं, अन्य आश्रम आदि ऐसी सस्थाएं हैं, जिन्हें सदा आपकी सहायता की आवश्यकता है। इन्हें केवल धन द्वारा ही नही बल्कि अपना समय भी दान दीजिए। इस प्रकार जनोपकारी संस्थाओं को ही दान देते समय अपने हृदय को विशाल बनाइए। जाति, राष्ट्र आदि को भेदभाव के बिना दान दीजिए।

पांच घेरे

इस विशाल पृथ्वी पर ढाई अरब के लगभग मानव रहते हैं। किन्तु

मानवता एक है। कवियों का कथन है कि मानव की उत्पत्ति आदम और इव से हुई है। हमें इस विवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं कि सबसे पूर्व किस भूभाग में मानव की उत्पत्ति हुई। हमारे लिए तो इतना ही समझना पर्याप्त है कि हमारे माता-पिता, पत्नी तथा सन्तान से लेकर अफ्रीका के वनों में रहने वाले बौने तक—सभी एक ही मानवता के अंग हैं। यह धरती समान रूप से सभी मानवों की माता है, भले ही उनका कोई वंश-कबीला, संप्रदाय, जाति, राष्ट्र का हो। मानव जाति एक है। वे मिल-जुलकर रह सकते हैं। यह गोरे, काले, पीले, गेंहुए का भेद बाहरी है। प्राकृतिक तथा अन्य प्रभावों के कारण इनके रंग में भले ही भेद हो; किंतु जीव विज्ञान की दृष्टि से सभी स्तनपाई हैं। पांचों महाद्वीपों में बसने वाले मानव मेरी ही जाति के हैं, यह भावना मन में दृढ़ रहनी चाहिए। मानव जाति की एकता का एक यह दृढ़ प्रमाण है कि सभी मानव बोल सकते हैं, गिन सकते हैं, इशारा कर और समझ सकते हैं, निर्णय कर सकते हैं, जैसी हमारी भावना हो वैसी ही प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं। सभी मानवों में परिवार-प्रेम पाया जाता है। पिता, माता, भाई, बहन, पत्नी, शिशु आदि सम्बन्धों के प्रति सबमें एक जैसी भावना पाई जाती है। तर्कशक्ति (विचार शक्ति) तथा सहानुभूति—ये दो भावनाएं मानव को अन्य जीवों से पृथक् करती हैं। अतएव, आपको गर्व से कहना चाहिए—मैं मानव कुटुम्ब का एक सदस्य हूं। मैं पृथ्वी का एक नागरिक हूं।

समस्त मानव जाति की एकता एक तथ्य है। किन्तु दुर्भाग्य से इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जाता। इसका कारण है कि सभी मानवों में समान-रूपता का अभाव है। एकता व विविधता को अनिवार्य मानकर हमें भिन्न-रूपता को सहन करना होगा। सह-अस्तित्व के सिद्धान्त पर चलते हुए हमें—गोरे, भूरे, पीले, काले, ताम्रवर्ण के सभी मानवों को एक मानव जाति के सदस्य मानकर ही हमें विश्वमानवता की भावना का प्रसार करना है। एक ट्यूटोनिक युवती तथा बबुआना लैंड की युवती के बाह्य रूप में अवश्य भेद है; किन्तु भीतर एक ही आकार का मस्तिष्क तथा तुल्य मानव-रक्त प्रवाहित हो रहा है। विविधता एवं विषमता में एकता और समता की भावना हमें पनपानी ही होगी। सोचने वाला मस्तिष्क तथा प्रेम करने वाला हृदय—मानव-मात्र में एक समान है। क्या यही हमारे ऐक्य का कारण नहीं हो सकता? देश-देश के निकम्मे कानून अब मानव से मानव को अलग नहीं रख सकेंगे। आर्य, सैमेटिक, मंगोल और नीग्रो—नवीन मानवता—विश्वमानवता को अपनायेंगे और 'एक मानव जाति' की भावना के लिए जीवन लगा देंगे।

जो मनुष्य इतने सभ्य हैं कि वे रंग-भेद को अस्वीकार करते हैं, वे अत्यन्त सम्मान-योग्य हैं।

रंग भेद के अतिरिक्त भाषा भेद तथा संकीर्ण राष्ट्रवाद भी मानव से मानव को जुदा करने में सहायक हैं। इनके द्वारा घृणा, सन्देह तथा रक्त-पात को बढ़ावा मिलता है। वे मनुष्य धन्य हैं जो इन भेदों को विच्छेद का कारण नहीं मानते। जो विभिन्न स्थानों पर विकसित विभिन्न वर्णों के फूलों को एक-सा प्यार करते हैं। सभी भाषाओं तथा राष्ट्रों का एक दूसरे के निकट संपर्क में आने का समय आ गया है। मानव जाति को यदि अपना कल्याण करना है, तो उसे शीघ्र से शीघ्र एक विश्वभाषा का विकास तथा एक विश्वराज्य की स्थापना करनी होगी।

समस्त संसार के मानव की पांच परिधियां हैं—1. परिवार की परिधि, 2. सम्बन्धियों की परिधि, 3. नगरपालिका की परिधि, 4. राष्ट्र की परिधि और 5. विश्व परिधि।

1. परिवार की परिधि—यह आपका सबसे छोटा क्षेत्र है। इसमें आप हैं, आप की पत्नी है और आप के बच्चे हैं। परिवार एक प्राकृतिक इकाई है। पुरुष तथा स्त्री काम-वासना द्वारा एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं और उनके पारस्परिक प्रेम का परिणाम सन्तान है। प्लेटो, जान हंफ्री, बौद्धमठ तथा क्रिश्चियन मोनेस्ट्रीज ने परिवार-व्यवस्था को समाज के लिए हानिकारक एवं त्याज्य बतलाया। किन्तु गंभीर विचार तथा अध्ययन के बाद हमें इस निश्चय पर पहुंचना पड़ता है कि परिवार व्यवस्था मानव के लिए एक उत्तम व्यवस्था है। यदि परिवार को ही जीव-नोद्देश्य मान लिया जाए, तो यह अवश्य हानिकारक है; किन्तु यदि इसे विश्वमानवता के साधन के रूप में अपनाया जाए, तो यह एक अत्युत्तम संस्था है। परिवार पर दृष्टि इस प्रकार से नहीं रहनी चाहिए कि विश्व उपेक्षित हो जाए। बहुत-से लोग परिवार से इतना प्रेम करते हैं कि परिवार से बाहर वे किसी को भी स्नेह नहीं कर सकते। यह क्षुद्र भावना मानव के विकास में बाधक है। परिवार के अभिमान के कारण बहुत-से लोग अपने परिवार का अहित करने, यहां तक कि देश-द्रोह करने पर उतारू हो जाते हैं। यह परिवार का अन्ध-प्रेम अविवेक का ही परिणाम है। ऐसा देखा गया है कि बहुत-से लोग विवाह से पूर्व किसी महान् उद्देश्य के लिए अथक उत्साह से कार्य करते हैं; किन्तु विवाह बन्धन में बंधने के उपरान्त वे उस उद्देश्य की ओर उपेक्षावृत्ति धारण कर लेते हैं, अथवा उस लक्ष्य को सर्वथा भुला देते हैं। अपने जीवन में आप ऐसा मत होने दीजिए। परिवार-प्रेम कभी भी आपके लक्ष्य-प्रेम में बाधक नहीं बनना चाहिए।

2. सम्बन्धियों की परिधि—आपका अपने माता, पिता, भ्राता, बहन, चाचा, मामा, चाची, मामी, बुआ, भतीजे, भानजे, भतीजी, भानजी आदि से रक्त का सम्बन्ध है। आपका अपने माता-पिता या पितामह आदि के प्रति कुछ कर्त्तव्य है। उनका सम्मान कीजिए, उन पर दया कीजिए, उनसे नम्रता का वर्ताव कीजिए। इन सम्बन्धों में माता का सम्बन्ध सबसे अधिक निकट का सम्बन्ध है। पुत्र कुपुत्र हो, पर माता कुमाता नहीं होती। माता एक पूज्या देवी है। यदि आपको सारा संसार भी छोड़ दे, तब भी आपकी माता आपको नहीं त्यागेगी। किन्तु माता-पिता के परिवार की एक सीमा है। आप उनकी अन्धभक्ति मत कीजिए। उनकी सभी बातों का अनुकरण मत कीजिए। आपको अपनी गृहस्थी बनानी-बसानी है। आपको अपनी पत्नी तथा सन्तान के प्रति भी कर्त्तव्य पालन करना है। यदि आपका सारा प्रेम माता-पिता तक ही सीमित है तो आपके स्त्री-पुत्र वंचित रह जाएंगे, जो उनके प्रति अन्याय होगा।

नव-विवाहित पति-पत्नी तथा उनके बच्चे खूब शोर मचाते हैं, जब कि बड़े-बूढ़ों को विशेष ढंग के भोजन, नियमित विश्राम, निद्रा तथा नीरवता एवं शांति की आवश्यकता होती है। ऐसी दशा में संयुक्त परिवार प्रथा पर आपको पुनर्विचार करना होगा।

यूरोप तथा अमेरिका में संयुक्त-परिवार को कोई नहीं जानता। वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति को अपने परिवार को अपनी इच्छानुसार नियन्त्रित करने का अधिकार होना चाहिए। माता-पिता अपने विवाहित पुत्र-पुत्री को सलाह या सहायता दे सकते हैं; किन्तु यदि वे उनको सदा अपने वशवर्ती आज्ञापालक बनाये रखने का प्रयत्न करते रहें, तो यह एक दुर्भाग्य होगा।

3. नगर पालिका—यह परिधि क्षेत्रीय तथा राजनैतिक है। आप किसी ग्राम, कस्बे या नगर में निवास करते हैं। उसकी पूर्वी, पश्चिमी, उत्तरी, दक्षिणी सीमाएं निर्धारित हैं। उस स्थान का कोई परम्परागत इतिहास है। यह स्थान आपका 'राजनैतिक घर' है। इस स्थान के निवासियों के साथ आप नगरपालिका के नियमों के द्वारा बंधे हुए हैं। यह एक पवित्र प्रेम बन्धन है। स्वयं सभ्यता शब्द 'सभी' से बना है। इस गाव या नगर के प्रबन्ध के लिए जो सभा या नगरपालिका है उसके नियमों का सही पालन करके ही आप वस्तुतः सभ्य बन सकते हैं। अच्छे मनुष्य का अर्थ है—अच्छा नागरिक। आप अपने गांव या नगर को प्रेम करते हैं—धरती के उस टुकड़े को; क्योंकि आपकी जड़ें यहीं पर हैं। शायद आपका यहां जन्म हुआ है, आपने यहीं शिक्षा पाई है और यहीं आपके व्यवसाय का

धंधे का कर्मक्षेत्र है। नगरपालिका प्रत्येक नागरिक को व्यक्तित्व के विकास का अवसर देती है, अतः नगरपालिका के नियमो को मानना, समय पर ठीक कर देना, नगरपालिका को चलाना, समय-समय पर उसके नियमो-पनियमो मे सुधार करना आदि आपका कर्त्तव्य है। सच्ची जन-भावना केवल नगरपालिका के नियम-पालन से ही पनपती है। नगरपालिका नागरिकता का पालना है। राष्ट्र का स्वरूप तो अस्पष्ट है। वह आपको दिखाई नही पडता। किन्तु नगरपालिका तो आपकी आखों के सामने है। इसके प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन कीजिए। आपके द्वारा कर्त्तव्य पालन से ही नियम स्थापित होगे। नगरपालिका स्थानीय स्वायत्त शासन है। इसके संचालन में आप उचित योगदान करके अपने व्यक्तित्व के प्रभाव द्वारा इसे आदर्श बना सकते हैं। अच्छी साफ-सुथरी सडकें, उद्यान, क्रीडा क्षेत्र, समाज-भवन, जल-प्रकाश, सफाई का प्रबन्ध, पुस्तकालय, सार्वजनिक स्थान, सुन्दर मूर्तियां, उत्सव, समारोह, झाकिया, सार्वजनिक सभाएं इत्यादि अच्छी नगरपालिका के आदर्श हैं। अपनी नगरपालिका से प्यार कीजिए।

4. राष्ट्र—राष्ट्रीयता क्या है?—यह भूगोल, भाषा, धर्म तथा अन्य बातों का प्राकृतिक उत्पादन है। राष्ट्रीयता का परिणाम एक समाज की रचना है। विभिन्न राष्ट्रो के लोग पर्वतों, समुद्रो, मरुभूमियों तथा जंगलों द्वारा एक-दूसरे से पृथक्-पृथक् कर दिये गये है। इस भौगोलिक पृथक्-करण का परिणाम जातीय भावना या जातीय रीति-रिवाज है। भाषा की भिन्नता ने भी एक राष्ट्र के लोगों के साथ दूसरे राष्ट्र के लोगो को मिलने जुलने से रोका है। राष्ट्र एक निश्चित भाषा-वर्ग, एक निश्चित क्षेत्रफल के लोगों का समूह है, जिसे ये अपना 'फादरलेंड', 'ला पैत्' या 'अलवतन' या 'मातृभूमि' के नाम से पुकारते हैं। वाल्टर स्कॉट ने 'भूमि' के साथ 'राष्ट्रीय भावना' को भी राष्ट्र के लिए आवश्यक माना है। बी० विको ने राष्ट्र की यह परिभाषा दी है—"मनुष्यों का एक प्राकृतिक समाज, जो जन्म-क्षेत्र की एकता, रीति-रिवाजो और भाषाओ के द्वारा एक जातीय जीवन तथा सामाजिक जीवन रखते हो।" मैनासिनी, मेमियानी तथा पियरान्टोनी ने राष्ट्र की परिभाषा मे—जाति, धर्म, भाषा, भौगोलिक स्थिति, आचार-व्यवहार, इतिहास तथा कानून की परिगणना की है। एफ० लीबर ने राष्ट्र की इस प्रकार परिभाषा की है—"राष्ट्र का आधुनिक काल मे पूर्ण व्यापक अर्थ है—एक स्थान पर उत्पन्न लोगो की बड़ी संख्या, जो इस क्षेत्र मे निवास करते तथा कृषि आदि करते हों, जिस क्षेत्र की सुनिर्धारित सीमाएं हों, और उस भूभाग का एक नाम हो, उसके निवासी अपनी भाषा बोलते हों, उनका अपना साहित्य हो, समान रीति-

रिवाज हों, वे लोग एक ही सरकार की प्रजा हो, उनमे परस्पर ऐक्य की भावना हो, और एक समान भविष्य के प्रति सचेत हों।"

जहा तक प्राकृतिक रूप का सम्बन्ध है, राष्ट्रीयता एक उपयुक्त, सराहनीय एव सरक्षणीय वस्तु है। राष्ट्रीयता के महत्त्व तथा उसकी शक्ति के विषय मे वाइकाऊंट सिसिल ने कहा है—"राष्ट्रीयता की भावना इतनी दृढ होती है और कई प्रकार से मानवजाति की एक सराहनीय भावना है; किन्तु यदि यह अन्तर्राष्ट्रीयतावाद की विरोधिनी है, तो अवश्य ही शोचनीय है।"

मैं इस बात से सहमत हूं कि राष्ट्रवाद एक ऐतिहासिक शक्ति है और इसका सरक्षण किया जाना चाहिए। हम अन्तर्राष्ट्रीयता के प्रवाह मे राष्ट्रवाद के अस्तित्व से इनकार नही कर सकते। 'राष्ट्रीय भावना' को 'एक 'मिथ्या विचार' नही कहा जा सकता। अरविन्द घोष की यह बात हमें स्वीकार करनी पडेगी—"मानव विकास की विद्यमान स्थिति में 'राष्ट्र' मानवजाति की सजीव सामूहिक इकाई है।"

किन्तु राष्ट्रवाद के दो रूप हमें मिलते हैं—सामाजिक एवं समाजवाद-विरोधी। दोनो प्रकारो को दो उप-विभागो मे विभक्त किया जा सकता है—राजनैतिक राष्ट्रवाद तथा सास्कृतिक राष्ट्रवाद। सामाजिक राष्ट्रवाद के द्वारा आपकी भावना अपने देश की प्राकृतिक अवस्था, भोजन, साहित्य, इतिहास, वेशभूषा, रीति-रिवाजों के साथ जुडती है, किन्तु यह भावना मानवतावाद तथा विश्वराष्ट्रवाद की विरोधिनी नही। जिस प्रकार परिवार व्यक्ति का दमन नही करता और नगरपालिका परिवार का दमन नही करती, उसी प्रकार राष्ट्रीयता भी आपकी नागरिकता का दमन नही करती। इस प्रकार राष्ट्रीयता एक प्राकृतिक परिधि है, जिसके प्रति आपके कर्त्तव्य हैं और उसकी ओर आपको ध्यान देना चाहिए। अपने देश के भू-भाग तथा वहां के निवासियों तक आपकी आसानी से पहुंच है; अतः उन की अनेक प्रकार से बड़ी सेवा कर सकते हैं। इस प्रकार अंग्रेज इग्लैंड की सेवा करता है तो कोई अचम्भे की बात नही। और राष्ट्र की सेवा के द्वारा वह मानवता की सेवा कर सकता है। क्योंकि उसके राष्ट्रवासी उसकी बात को समझ सकते है। एक तुर्क को टर्की में रहकर काम करने में जितनी सफलता मिल सकती है, उतनी चीन अथवा जापान मे नहीं। इस प्रकार यदि आपका 'राष्ट्र' अथवा 'देश' विकास करता है, तो यह कोई हानि की बात नही है। यह विकास पूर्णतः न्यायसगत तथा प्रशंसनीय है। इसी प्रकार अपने-अपने राष्ट्र के राष्ट्रीय गीत गाना भी कुछ बुरा नही।

राष्ट्रवाद का यह प्राकृतिक एवं हानिरहित स्वरूप अपनी अभिव्यक्ति के लिए राजनैतिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं की अपेक्षा रखता है। इस आवश्यकता की पूर्ति आपने अवश्य करनी है। प्रत्येक राष्ट्र को अपने साहित्य का संवर्धन करना चाहिए। अपने कवियों से प्यार करना चाहिए। इसे अपने गान तथा मन्त्र गाने चाहिए। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की इस प्रकार की संस्थाओं की स्थापना करनी चाहिए, जैसे 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन'। यदि एक देश अपने साहित्य पर गर्व करता है (बशर्ते वह विश्व साहित्य की उपेक्षा न करे) तो इसमें कुछ बुराई नहीं। इससे मानवता की भावना दुर्बल नहीं होती। एक राष्ट्र को अधिकार है कि वह अपने स्थानीय महान् पुरुषों तथा वीरों का गुणगान करे, किन्तु गुणगान उन्हीं का होना चाहिए, जिन्होंने मानवता के विरुद्ध कोई काम न किया हो। इस प्रकार का राष्ट्रवाद विश्व मानवता का विरोधी नहीं। किन्तु एक प्रकार राष्ट्रवाद ऐसा भी है, जो समाज-विरोधी, मानवता-विरोधी है। यह मानवता में फूट पैदा करता है तथा मनुष्य को उसके सर्वोच्च आदर्श से पतित कर देता है। प्राकृतिक राष्ट्रवाद एक शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर के तुल्य है, जबकि संकीर्ण राष्ट्रवाद भयंकर झंझावात के समान है। जब साधारण स्त्री-पुरुष संकीर्ण राष्ट्रवाद के उपासक बन जाते हैं, तो वे तर्क, न्याय तथा आत्मा को भूल जाते हैं। यह एक प्रकार का पागलपन है। इसे 'जेनोफोबिया' या विदेशियों से भय की संज्ञा दी जा सकती है। यह एक रोग है, यह मनुष्य को पतित, मानवता-शून्य, कट्टरवादी और परद्वेषी बना देता है। यह रचनात्मक नहीं; बल्कि ध्वंसात्मक भावना है।

इस प्रकार का संकीर्ण राष्ट्रवाद केवल अपने देश का इतिहास पढ़ने की आज्ञा देता है और अन्य देशों के इतिहास की उपेक्षा करता है। यह केवल अपनी ऐतिहासिक परम्परा की प्रशंसा करता है। इस प्रकार के संकीर्ण राष्ट्रवादी उन घोड़ों के समान होते हैं, जिन्हें एक ही गाड़ी खींचने का अभ्यास हो जाता है। उन घोड़ों की आँखें बन्द की हुई होती हैं, ताकि वे प्राकृतिक दृश्यों को न देख सकें। वे केवल अपने सामने की सड़क देख सकते हैं। इस प्रकार के तंगदिल राष्ट्रवादी केवल अपने अतीत शासकों, योद्धाओं, कवियों तथा राजनीतिज्ञों का अध्ययन एवं गुणगान करते हैं और अन्य देशों के महान् लोगों से वे अपरिचित रहते हैं।

इस प्रकार के कट्टर राष्ट्रवादी यह विश्वास रखते हैं कि उन्हीं का देश समस्त संसार में, प्रत्येक दृष्टि से सर्वोत्तम है। लावेल ने इसी दृष्टिकोण से अमेरिका का बढ़-चढ़कर गुणगान किया। सिसिल रोड्स ने इसी

संकीर्ण भावना से ब्रिटिश जाति को विश्व मे 'सर्वोत्तम' बताया। कोर्नर ने जर्मनी को 'सर्वोत्तम गौरवमय' कहा। डब्ल्यू० ई० हेन्ली ने इग्लैंड को ईश्वर की प्रिय पुत्री बताया। शेक्सपियर ने इंग्लैंड को 'ईडन' बताया। सिल्विओ पेलिको ने इटली को सबसे सभ्य देश बताया।

एक बुद्धिमान् राष्ट्रीय, अपने देश को उसी प्रकार से प्यार करता है, जिस प्रकार एक कर्त्तव्य-परायण बालक अपनी माता को करता है। किन्तु उससे यह आशा नही करनी चाहिए कि वह इसलिए माता से प्यार करता है कि माता ससार की सभी महिलाओ से श्रेष्ठ है। तथ्य यह है कि प्रत्येक देश में गुण भी हैं और दोष भी हमे आखें खोलकर अपने देश के गुणो के साथ-साथ उसकी त्रुटियों पर भी दृष्टिपात करना चाहिए, तभी गुणों के संवर्धन तथा त्रुटियो को दूर करने मे समर्थ हो सकेंगे। ईर्ष्या, द्वेष तथा क्रोध मे अंधे मूर्ख सत्य एवं तथ्य से सदा ही आख मूद लेते हैं।

समाज-विरोधी राष्ट्रवादी यह मानते है कि उनके देश के पास विश्व के लिए एक सन्देश है। इस प्रकार के लोग अपने को सीजर, नेपोलियन जीसस क्राइस्ट या स्वय भगवान् का ही अवतार मानते हैं। इस प्रकार का कट्टर राष्ट्रवाद एक प्रकार का पागलपन है। इस प्रकार के सकीर्ण लोग 'राष्ट्रवाद' को ही मानव का सर्वोच्च उद्देश्य मानते हैं।

संसार मे, सकीर्ण राष्ट्रवाद ने बडे अत्याचार किये है। युद्धों और महायुद्धों का जनक यही है। युद्धों के द्वारा क्रूरता का क्षेत्र व्यापक होता है। इसी के द्वारा एक राष्ट्र दूसरे का गुलाम बनता है। इससे अधीन देश का पतन होता है। विजेता राष्ट्र को क्रूरता, पाशविकता, पराशिता और शोषण की आदत पड़ती है। युद्ध प्रजातन्त्र का, स्वाधीनता का, व्यक्ति के अधिकारों का शत्रु है। इससे अधिनायकवाद (डिक्टेटरशिप) को पोषण मिलता है। युद्धो के द्वारा सामाजिक तथा राजनैतिक सुधारों में विलम्ब हो जाता है।

इस संकीर्ण राष्ट्रवाद ने बडा पागलपन फैलाया है। इसी के कारण प्रायः सभी राष्ट्र शस्त्रीकरण, सैन्यसज्जा आदि पर अपनी राष्ट्रीय आय का अधिकांश व्यय करते रहते हैं और राष्ट्रीय विकास-कार्यों के लिए पैसा ही उनके पास नही बचता। इस प्रकार युद्ध एक महान् मूर्खता है और इसका जन्म संकीर्ण राष्ट्रवाद मे ही होता है।

विश्वराज्य—मानव जाति का भविष्य विश्वराज्य पर अवलम्बित है। मानवता सदा ही सौ से अधिक राष्ट्रों में विभक्त नही रहेगी। एक न-एक दिन इसे एक राजनैतिक जाति के रूप में परिवर्तित होना ही पडेगा। इस के बिना मानवता का कल्याण संभव नहीं है। इस आदर्श की पूर्ति राष्ट्रो

के मध्य हुए समझौतों से होनी संभव नहीं। मानवजाति के पृथक्-पृथक् सर्वसत्ता सम्पन्न राष्ट्रों को समाप्त करना होगा। सभी राष्ट्र विश्व राज्य के अनुशासन और कानून में चलना स्वीकार करेंगे। तभी मानवता अपने चरम आदर्श को प्राप्त करेगी। तभी विश्व के मानव मात्र के लिए सुख का दिन आयेगा। हम अनन्तकाल तक संकीर्ण राष्ट्रीयता को जीवित नहीं रहने देंगे। मानवता 'विश्व राष्ट्र' की ओर अग्रसर होगी। यही मानवता के पूर्ण विकास का लक्ष्य है।

विश्व-इतिहास—हमें राष्ट्रों के पृथक्-पृथक् इतिहासों की संकीर्णता से भी ऊपर उठना होगा। इसके स्थान पर विश्व इतिहास का अध्ययन आवश्यक करार देना होगा। जैसाकि प्राध्यापक एच० जे० लास्की का कथन है—'इससे अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास होगा।' हमें मानव मन से वर्तमान ऐतिहासिक परम्परा को परिवर्तित करके, उनके स्थान पर समस्त विश्व के एक इतिहास को प्रतिष्ठापित करना होगा। विश्व इतिहास मानवता को जोड़ने की सबसे प्रमुख कड़ी सिद्ध होगा। जिन महामानवों ने हमें सभ्यता प्रदान की है, चाहे वे किसी भी देश के हों, हमें उनका सम्मान करना होगा तथा उनके जीवन-वृत्तों एवं कार्यों का अध्ययन करना होगा। विश्वराज्य के महापुरुष सभी प्रमुख वैज्ञानिक, कलाकार, सन्त, विचारक और पथप्रदर्शक होंगे, भले ही उनका जन्म विश्व के किसी कोने में हुआ हो।

विश्व राजधानी—विश्व राज्य की अपनी एक राजधानी होगी। यह राजधानी जेनेवा या एथेंस में हो सकती है।

विश्व साहित्य तथा विश्व भाषा—विश्व राष्ट्र की कल्पना साकार करने के लिए, विश्व साहित्य तथा विश्व भाषा का विकास करना होगा। इस विश्व भाषा में, संसार के सभी देशों के प्रमुख ग्रन्थों का अनुवाद प्रस्तुत करना होगा। एक भाषा के बिना राजनैतिक एकता असम्भव होगी। सैकड़ों विभिन्न भाषा-भाषी लोगों की एकता का एक विश्व भाषा ही आधार बन सकती है। विश्व साहित्य ऐसे व्यक्तियों को प्रशिक्षित करेगा, जो विश्व मानवता की भावना को पूर्णतया हृदयंगम करके उसके प्रसार के लिए जीवन अर्पण करेंगे।

विश्वयात्रा—विश्व राज्य द्वारा विश्व यात्रा को प्रोत्साहन दिया जाएगा। इससे विचारों, विधि-विधानों तथा रीति-रिवाजों के आदान-प्रदान का मार्ग खुल जाएगा और देशों की पारस्परिक विषमता कम होने में सहायता मिलेगी। तब विश्वमानवता की भावना प्रत्येक विश्व नागरिक की आत्मिक शक्ति बन जाएगी।

विश्व-समाज—विश्व राज्य का प्राकृतिक परिणाम विश्व-समाज की स्थापना होगा। हमें सभी देशों का भोजन, वेशभूषा, मनोरंजन आदि विषयों में पूर्ण एक-समानता की आवश्यकता नहीं। किन्तु विविधता में एकता की भावना, पारस्परिक सहिष्णुता एवं सह-अस्तित्व की भावना का विकास करना होगा।

विश्व-दार्शनिकता—दार्शनिकता, असंख्य व्यक्तियों को एकता में बांधने का एक कोमल किन्तु दृढ़ बन्धन है। जिस प्रकार देश की दार्शनिकता समस्त देशवासियों को एक सूत्र में ग्रथित रखती है, उसी प्रकार समस्त देशों के मानव-मात्र को एकता के सूत्र में बांधने के लिए एक विश्व दार्शनिकता का विकास करना होगा। इसका कार्य होगा आवश्यक विषयों पूर्ण समानता तथा सामान्य विषयों प्रत्येक क्षेत्रीय जनता की स्वतन्त्रता (विविधता)। काल्पनिक दार्शनिकता के स्थान पर ठोस व्यावहारिक, जीवनोपयोगी तथा विश्व जनीन दार्शनिकता पनपानी होगी, जिससे सभी क्षेत्र-वासियों को अपनी शारीरिक, बौद्धिक, सौन्दर्यात्मक तथा नैतिक प्रगति का समान अवसर मिल सके। सभी देशों के बुद्धिमान् मनुष्य अपने-अपने देश में एक साथ इस नई दार्शनिकता का एक-साथ प्रसार करेंगे। इस दार्शनिकता का फल सामाजिक समन्वय तथा राजनैतिक एकता होगा।

विश्व राज्य का अपना कोई धर्म नहीं होगा; किन्तु यह सभी क्षेत्रों तथा व्यक्तियों को अपनी-अपनी इच्छा से किसी भी धर्ममत को अपनाने की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करेगा। विश्व राज्य उस नैतिकता का प्रसार करेगा, जिसका आधार विश्व मानवता, विज्ञान तथा आशावाद होगा।

अर्थ-व्यवस्था

विश्व राज्य की स्थापना अर्थशास्त्र के वैज्ञानिक आधार पर होगी। वैज्ञानिक ढंग पर उत्पादन, उपभोग तथा वितरण की व्यवस्था करना इस का प्रथम कर्त्तव्य होगा। यह मानव-मात्र के लिए पर्याप्त पदार्थों की उपलब्धि का प्रबन्ध करेगा।

वर्तमान काल में देशों तथा व्यक्तियों की पारस्परिक प्रतियोगिता के कारण प्रत्येक प्रकार के उत्पादन में बाधा आती है। प्रत्येक देश अपने को धनी बनाने की सनक में दूसरे देश के हितों का विघात करने से नहीं सकुचाता। विश्वराज्य द्वारा प्रत्येक देश की स्थिति के अनुसार उत्पादन का

विभाजन किया जाएगा और प्रत्येक की आवश्यकता के अनुसार वितरण की व्यवस्था करेगा। संकीर्ण राष्ट्रवाद ने विश्व अर्थव्यवस्था को 'अव्यवस्था' में बदलकर रख दिया है। विश्वराज्य सभी देशों में ताल-मेल उत्पन्न करके ऐसी व्यवस्था करेगा, जिससे अनावश्यक प्रतियोगिता समाप्त हो जाए। पूंजीवाद ने भी भारी अव्यवस्था को जन्म दे रखा है। इससे उत्पादन तथा वितरण के साधन कुछ एक हाथों में सीमित रहते हैं; अतः सभी कार्य-क्षम व्यक्तियों को रोज़गार देना असम्भव होता है। अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था एक होने पर विश्व राज्य सभी कार्य-क्षम व्यक्तियों को रोजगार देने की गारंटी देगा। पूंजीवादी वर्गों के शासन से धर्म, कला तथा साहित्य में भ्रष्टाचार फैलता है। विश्व अर्थव्यवस्था के अधीन इन सब बातों का स्वस्थ विकास होगा। शिक्षा पर धनी वर्गों का एकाधिकार समाप्त हो जाएगा। सभी छात्रों को अपनी रुचि, ग्रहणयोग्यता और आवश्यकता के आधार पर शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर मिलेगा।

वर्गों के शासन से वर्ग-संघर्ष तथा युद्धों का जन्म होता है। निहित स्वार्थों के समाप्त होने पर, हानिकारक संघर्ष तथा युद्ध बन्द हो जाएंगे। आगस्ट कोम्टे ने पूंजीवादियों को सच्चरित्र बनाने की बात कही थी। किन्तु पूंजीतियों को सच्चरित्र बनाना उसी प्रकार असम्भव है, जैसे बंगाल के चीतों को निरामिषभोजी बनाना अथवा साइबेरिया के भेड़ियों को दयालु बनाना। पूंजीपतियों की स्वार्थान्धता ही सांसारिक अशान्ति का कारण है। विश्व राज्य के हाथों में सभी प्रकार की उत्पादन, उपभोग तथा वितरण व्यवस्था आ जाने से, विश्व भर के मानव, टाइगरों और भेड़ियों के पंजों से छूट जाएंगे। पूंजीवाद मानव की कार्यक्षमता तथा प्रतिभा का शोषण करता है। विश्व राज्य मानव कार्यक्षमता तथा प्रतिभा का अधिकतम विकास करेगा तथा उसे सर्वोच्च योग्यता से कार्य करने का अवसर प्रदान करेगा।

वितरण के सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्तों का आधार समानता तथा भ्रातृभाव है। समता का अर्थ बर्नार्ड शा के अनुसार नहीं होगा कि सभी मनुष्यों की, गणित के आधार पर बिल्कुल समान आयु हो। सामाजिक समता का अर्थ होगा प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के अधिकतम विकास का अवसर प्रदान करना। जिस प्रकार परिवार में प्रत्येक सदस्य की समता होती है, उसी प्रकार विश्व समाज में प्रत्येक व्यक्ति की समता स्थापित होगी।

राजनीति

विश्व-राज्य की राजनैतिक संस्था इन सिद्धान्तों पर स्थापित होगी—प्रजातन्त्र, स्वतन्त्रता, समता तथा भ्रातृभाव।

प्रजातन्त्र का अर्थ होगा प्रत्येक वयस्क नर-नारी को मत-दान का एक समान अधिकार। लिंकन के आदर्श के अनुसार यह प्रजातन्त्र—'जनता का, जनता द्वारा तथा जनता के लिए' होगा। प्रजातन्त्र की आदर्श स्थापना से एक व्यक्तिक राज्य, सामन्त राज्य, तानाशाही आदि निरंकुश प्रकार के शासनों का अन्त हो जाएगा। इससे शोषण, अन्तर्विरोध, वैर-द्वेष तथा युद्धों की समाप्ति हो जाएगी।

स्वतन्त्रता तथा प्रजातन्त्र का चोली दामन का साथ है। विश्व राज्य सभी नागरिकों को भाषण, सभा, सम्मेलन, विचार-विनिमय, विचार प्रकाशन, समाचार-पत्र प्रकाशन तथा आलोचना की स्वतन्त्रता प्रदान करेगा।

स्वतन्त्रता का अर्थ एक-दूसरे के अधिकार में हस्तक्षेप नहीं होगा। स्वतन्त्रता का स्वरूप होगा—स्वेच्छा से समाज हितकारी कार्यों को सहकारिता में करना। कानून धमकी देता है, स्वतन्त्रता मुस्कराती है। कानून आज्ञा देता है, स्वतन्त्रता प्रेरणा देती है। कानून अपना अधिकार जताता है, स्वतन्त्रता अपील करती है। जैसा कि शीलर ने कहा है—"कानून ने कभी किसी महान् व्यक्ति को जन्म नहीं दिया, परन्तु स्वतन्त्रता महामानव (Superman) को जन्म देती है।"

स्वतन्त्रता हमें अच्छे स्कूल देगी, नवीन आर्थिक एवं राजनैतिक संस्थाएं देगी। इससे उत्तम नागरिकों का निर्माण होगा। सहकारी संस्थाओं की स्थापना होगी। प्रतियोगिता तथा शोषण की समाप्ति होगी।

समता स्वतन्त्रता की सगी बहन है। समता छः प्रकार की होती है—शारीरिक समता, आर्थिक समता, राजनैतिक समता, सामाजिक समता, सांस्कृतिक समता तथा नैतिक आचरण समता। जैसा कि महाकवि ने कहा है—"ओ दिव्य समता! तू सबसे महान् है। बुद्धिमत्ता तथा प्रेम तो तेरे दास हैं।"

भ्रातृभाव का अर्थ है 'प्रेम'। प्रेम की धुरी पर ही तब मानव की सभी संस्थाओं का चक्र घूमेगा। भ्रातृभाव कार्य तथा फल का इस प्रकार बंटवारा करेगी—"प्रत्येक मनुष्य अपनी योग्यता के अनुसार काम करे और अपनी आवश्यकता के अनुरूप पदार्थों को प्राप्त करे।"

-

उपसंहार

नवीन मानवता का चरम लक्ष्य—विश्वराज्य (World State) की स्थापना है। विश्व के समस्त गुणी, सुशिक्षित, बुद्धिवादी नवीन मानव एकत्र होकर अपनी एक संस्था की स्थापना करें। विश्व को इस आन्दोलन के अग्रणी नेताओं की आवश्यकता है। आप भी अग्रणी नेता बन सकते हैं। विश्व-राज्य के प्रति अपना कर्त्तव्यपालन आज से ही आरम्भ कर दीजिए। आप भावी विश्व राज्य का अपने को एक नागरिक समझिए। मन से अन्य देशों तथा जातियों के प्रति सब प्रकार घृणा तथा द्वेष भावना उखाड़ फेंकिए।

आप विश्व-इतिहास का अध्ययन कीजिए, विश्व के देशों की अधिक से अधिक यात्रा कीजिए, किसी विदेशी भाषा का अध्ययन कीजिए, जिसे विश्व भाषा का पद प्राप्त हो, विश्व साहित्य का अध्ययन कीजिए, विदेशियों के साथ मिलकर संस्था की स्थापना कीजिए, उन्हें अपना मित्र बनाइए, उनमें विश्व राज्य की भावना भर दीजिए, अपने नगर में एक कास्मोपोलिटन क्लब की स्थापना कीजिए, किसी अन्तर्राष्ट्रीय पत्र व्यवहार संस्था के सदस्य बन जाइए, शान्ति का प्रचार कीजिए, घृणा, क्रोध, प्रतिशोध की भावनाओं की बुराइयां दूसरों को बताइए, काले, गोरे, भूरे, पीले सभी मानवों से भ्रातृभाव की स्थापना कीजिए, जातिभेद तथा रंग-भेद के भ्रम को मिटाइए, सबका उपचार कीजिए, शोषक पूंजीवाद तथा संकीर्ण राष्ट्रवाद का समर्थन मत कीजिए।

इस प्रकार काम कीजिए कि विश्व में शीघ्र ही 'विश्व-राज्य' की स्थापना हो सके। यह काम होगा और अवश्य होगा। यदि आपने इस भावना के प्रकाश में काम करना आरम्भ कर दिया, तो सोते-जागते आप के सम्मुख यही उद्देश्य रहेगा और आप इसके उदय की प्रतिक्षण प्रतीक्षा करेंगे। जब तक सूर्य उदित नहीं हुआ, वह दिखाई नहीं दे रहा। किन्तु क्षितिज में पवित्र उषा के दर्शन हो रहे हैं। इसकी दिव्य किरणों की उपासना कीजिए। मानवता का सुप्रभात अब होने ही वाला है। विश्व-मानवता की अब विजय होगी।

•••

मुद्रक : तरुण प्रिंटर्स, दिल्ली-32

5862